॥ श्री गणेशाय नमः ॥

गुरुमण्डलग्रन्थमालाया एकादशपुष्पम्

ब्रह्मपुराणम्

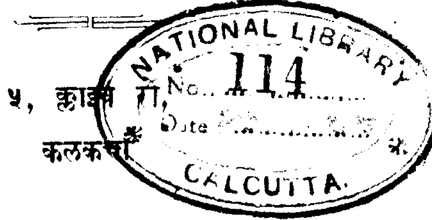


श्रीमन्महर्षिकृष्णद्वैपायनव्यासविरचितम्

तस्य

प्रथमो भागः

श्रीनाथादि गुरुत्रयं गणपतिं पीठत्रयम्भैरवम्,
सिद्धौघं वटुकत्रयम्पदयुगं दूतीक्रमं मण्डलम्।
वीरान्द्व्यष्ट चतुष्कषष्टि नवकं वीरावलीपञ्चकम्,
श्रीमन्मालिनिमन्त्रराजसहितं वन्दे गुरोर्मण्डलम् ॥



५, क्लाइव रो,
कलकत्ता

वैक्रमाब्दः	प्रथमं संस्करणम्	खृस्ताब्द
२०१०	५०००	१९५४

मुद्रक—श्री अवध किशोर सिह,
गोपाल प्रिण्टिंग वर्क्स, ११८।१, कार्नवालिस स्ट्रीट, कलकत्ता



ìurumandal Series No. XI.

THE

Brahma Puranam

—:(o):—

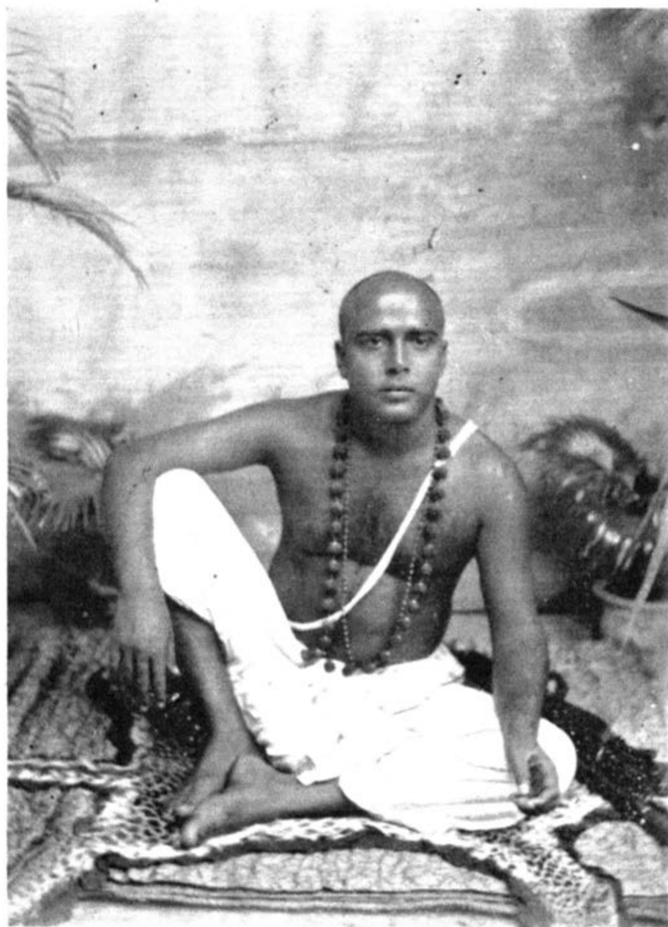
By

MAHARSHI KRISHNADWAIPAYAN VYAS

VOLUME I.

5, Clive Row,
Calcutta,

Vikram Era 2010 | First Edition 5000 | Christian Era. 1954



आचार्य करुणामय सरस्वती

॥ श्रीः ॥

सादरं समर्पणम्

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।

गुरुः साक्षात्परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवेनमः ॥

श्रीमतां पदवाक्यप्रमाणपारावारीणधुरीणानां विविधविद्याग्रन्थप्रणयनचणानां प्राच्यप्रतीच्यबहुशास्त्रविचक्षणानां शास्त्रजीवनानां निखिलानवद्यगुणगणालंकृतानां समस्तभूमण्डलनिग्रहस्थानीकृतप्रतिपक्षजन्मनाम् धर्मधुरन्धराणां जगदम्बाप्रसादाल्लब्धविश्वविश्रुतवैदुष्यजुषाम् विद्वद्धौरेयाणां सर्वतन्त्रस्वतन्त्राणां श्रीमद् गुरुचरणानां सरस्वत्यपरावताराणां दुस्तरविद्यार्णवसमुत्तरणप्रकटीकृतमहार्वारपराक्रमाणां शिष्यानुग्रहकाङ्क्षया प्रत्यक्षशिवावताराणाम् करुणावरुणालयानां बङ्गप्रान्तीयविद्वन्मण्डलमण्डनानाम् विक्रमपुरान्तर्गतटोलवासाइल ग्रामवास्तव्यानां प्रातःस्मरणीयपुण्यश्लोकविद्यालङ्कारोपाधिकवामाचरणात्मजानां तत्रभवतां आचार्यप्रवराणां श्री करुणामयसरस्वतीमहाभागानां करकमलयोर्मिलिन्दायताम् गुरुमण्डल ब्राह्मशपुष्पं

ब्राह्मपुराणमिदम् सादरम्

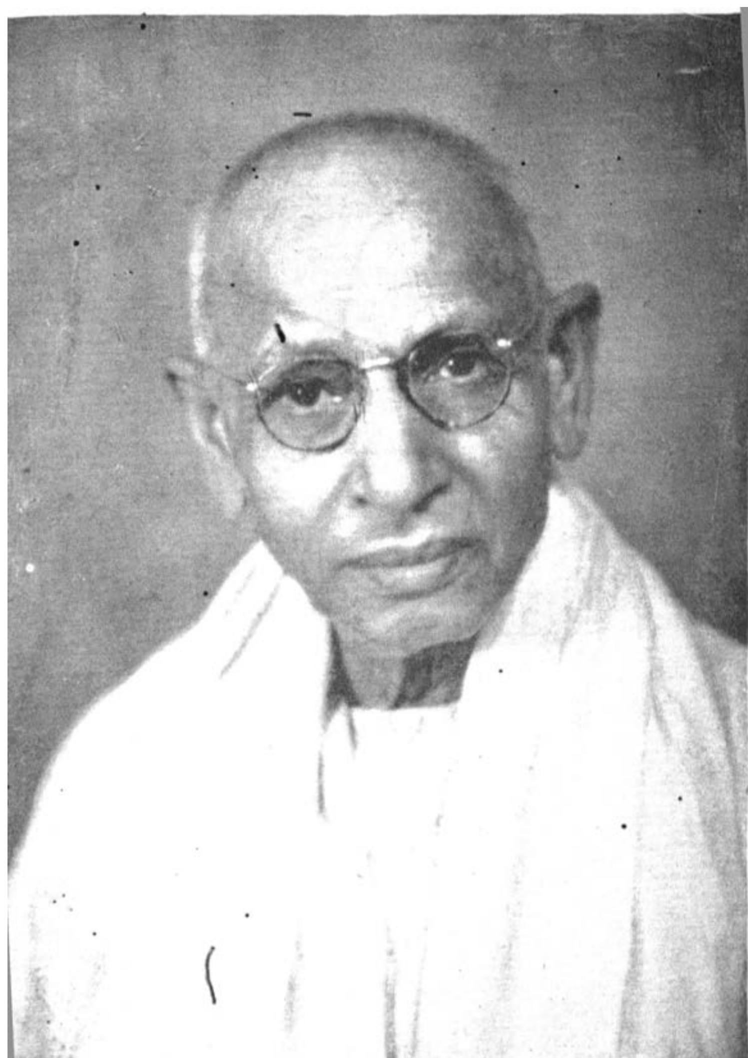
गुरुदेव !

न किञ्चिन्नूतनं वस्तु दातुं निष्ठाऽस्ति मामिका ।
ब्राह्ममेतद्धि भगवदर्पितं प्रीतयेमुदा ॥

इति

कलिकाता
शिवरात्रिव्रतम्
२०१० वि०

श्री श्रीगुरुचरणैक शरणस्य
मनसुखरायमोरस्य



राजगुरु पं० हरिदत्त शास्त्री
विद्यारत्न, विद्यालङ्कार,

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

पुराण विद्या

मानवीय जिज्ञासा की उत्कट पिपासा को गवेषणा द्वारा शान्त किया जाता है। गवेषणा का आधार है प्राचीन साहित्य, प्राचीन निर्माण तथा पुरातत्त्व सफल जिज्ञासा से देश एवं जाति की प्रायः सब समस्याओं का सुलभ और उपयोगी समाधान हो जाता है। गवेषणा से ही वेदादि सच्छास्त्र तथा कालोपयोगी वैज्ञानिक सिद्धियाँ प्रकाशित और व्यवहृत हुई हैं। प्रखर क्रान्तिकारी जीवन का उद्गम गवेषणा है, तत्त्वानुसन्धान, तत्त्वविनिमय एवं तत्त्व विश्लेषण से कितनी गूढ़ और बलवती कार्योपयोगी शक्तियों का आदान-प्रदान व्यवहार में आ रहा है यह सब गवेषणा का ही फल है।

भारतीय गवेषणा के स्रोत पुराण ग्रन्थ हैं। वेदोंमें आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक, दैव, मानुषी, आसुरी तथा चैतन्य एवं जड़ सब प्रकार की गवेषणा का सूक्ष्मरूप से विधान है। ब्राह्मण भाग और आरण्य भाग में विशेषतः आधिदैविक एवं अधियज्ञ की गवेषणा प्रधानतया दिखाई देती है। पुराणों में सब प्रकार की बौद्धिक, व्यावहारिक, नैतिक, एवं सांस्कृतिक गवेषणाओं को इतिहास और कथानक के स्वरूप में

आकर्षक और बुद्धिगम्य साहित्य में श्री वेदव्यासजी ने विस्तृत किया है। इसमें न केवल स्मृति शास्त्राभिप्रेत, आचार, व्यवहार प्रायश्चित्तादि दैनिक क्रियाओं की गवेषणा मात्र है, अपितु मनुष्य जीवनोपयोगी महती भावनाओं का विस्तृत विधान है। भारतीय ज्ञान गाथा में वेद वेदार्थ का ज्ञान प्राप्त करने में मनुष्यता रूपी रासायनिक निधिकी प्राप्ति बताई गई है। "इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्" महाभारतादि इतिहास तथा अष्टादश पुराणों को समझने से वेद की निधि प्राप्त हो सकती है।

बिना पुराण ग्रन्थों के अध्ययन से तथा निरुक्तादि शास्त्रों के न जानने से वेदार्थ का यथार्थ ज्ञान एवं मानव जिज्ञासा की पूर्त्ति असम्भव है। तपस्वी कृष्णद्वैपायन वेदव्यासजी ने उत्तर मीमांसा ब्रह्मसूत्र में वेद प्रतिपाद्य अध्यात्मनिष्ठा से त्रिविध सन्ताप से मुक्त होने का सरल उपाय ज्ञाननिष्ठा का प्रतिपादन किया है तथापि ज्ञाननिष्ठा का परिपाक और स्थितप्रज्ञ भूमि का साधन पुराण पाठों का अध्ययन बताया है। प्रत्येक साधन को बुद्धि में सरलता पूर्वक इतिहास कथानक ही ला सकते हैं। यजुर्वेद में "ईशावास्यमिदँ सर्वं यत्किञ्चजगत्यां जगत् तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्"। मनुष्यता के विकास का पूरा २ साधन इस मन्त्रमें आया है परन्तु केवल मन्त्र पाठ और उसके अर्थ ज्ञानमात्र से ही जीवन में उस भावना का अक्षुण्ण सञ्चार होना कठिन है अतः पुराणों में जो सत्यनिष्ठा, त्याग-निष्ठा, अद्रोह-निष्ठा के इतिहास हरिश्चन्द्र शंखलिखित एवं

च्यवन आदि के उन इतिहासों से मनन करते हुए रोमाञ्चकारी क्रान्ति एवं अश्रुधारा पात से जीवन में सत्य एवं करुणा का रासायनिक सञ्चार तत्काल होने लगता है। अतः वेदों में "सत्यंवद धर्मञ्चर" आदि वेद वाक्य बोधित अर्थों का इतिहास कथानक के रूप में चारु और ग्राह्य प्रयास वेदव्यासजी ने पुराण ग्रन्थों में किया है।

मानवीय ऐहिक, एवं पारमार्थिक जिज्ञासाओं की सफलता रूपी कल्प पादप अष्टादश पुराण व्यासजी के द्वारा प्रकट हुए हैं।

यद्यपि पौराणिक शैली प्रधानतया त्रैगुण्य रचना और प्रकृति को विकाशक हैं और प्रत्येक पुराण में गुणत्रय और गुणातीत संसार और अव्यक्त ब्रह्म का प्रतिपादन और उस प्रतिपाद्य की प्राप्ति के विधान हैं। तथापि कोई पुराण प्रधानतया सात्विक और कोई राजसिक एवं कोई तामसिक होनेसे ६ होते हैं। नवशक्त्यात्मक और नवशिवात्मक होने से अठारह संख्या होती है वस्तुतः संख्या नौ ही है। परन्तु तन्त्र शास्त्र में शिवशक्त्यात्मक योग से ६ संख्या अष्टादश हो जाती हैं।

इसी सिद्धान्त पर अष्टादश पुराण, अष्टादश प्रधान स्मृतिकार, अठारह पर्व, अष्टादश गीता के अध्याय आदि होते हैं। अठारह पुराणों को गणना इस प्रकार है।

ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु, भागवत, भविष्य, नारद, मार्कण्डेय, ब्रह्मवैवर्त, अग्नि, लिङ्ग, वराह, वामन, मत्स्य, कूर्म, स्कन्द, गरुड़ और ब्रह्माण्ड।

निरुक्त में पुराण शब्द का निर्वचन इस प्रकार आया है :— "पुरा नवं भवति" जिसकी नवद्युति सबसे प्रथम प्रगट हुई वह पुराण है। इसलिये भगवान् को भी पुराणपुरुष कहते हैं। पुराण का अर्थ जीर्ण नहीं है अपितु आदि विकास का है। गीता में भगवान् की प्रार्थना में आया है "कविं पुराणमनुशासितारं" भगवान् क्रान्तदर्शी तथा पुराण होने से सबके अनुशासक हैं अतः पुराण शब्द से आदि साहित्य का तात्पर्य है। आदि साहित्य वह है जिसमें आदिदेव आत्मज्ञान का प्रबोध हो इस आदि विद्या को मानव जागृति के हेतु एवं जगत्कल्याणार्थ वेदव्यासजी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

"सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितञ्चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥"

प्रधानतया पञ्चलक्षणों को लेकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चतुर्वर्गों का पुराणों में बड़ी प्रभावपूर्ण शैली में इतिहास कथाओं को लेकर मानव संसार के ज्ञान प्रसारार्थ विश्व में विस्तार किया है। जितना सरलतासे पुराणोंके द्वारा चतुर्वर्ग सिद्धि का साधन मिलेगा उतना अन्यत्र नहीं। व्यासजी ने अष्टादश पुराणों में इतना महान् साहित्य और विज्ञान, कला, योग तथा तपस्या सबका सार परोपकार अर्थात् सब जीवमात्र पर दया और मैत्री करुणा करना पुण्य कहा है। दूसरों को पीड़ा देना पाप है। यह पाप पुण्य की परिभाषा मानव प्रगति को कितने सुचारु रूप में जीवनचर्या का आधार बनाने के लिये आदेश करती है

और मनुष्यता का कितना सुन्दर मौलिक आचरण बता रहो है।

अष्टादश पुराणानां व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीड़नम् ॥

पुराणोंमें सत्य की गवेषणा पर महाराज सत्यवादी हरिश्चन्द्र के कथानक से ज्ञात हो जायगा कि हरिश्चन्द्र जैसे सत्यव्रत आदर्श राजा ने सत्य की खोज में कितना मूल्य लगाया है। सुकन्या ने देवियों की दृढ़ निष्ठा से अपनी निष्ठा और सत्य से किस अलौकिक चमत्कार की सिद्धि प्राप्त की है यह आप लोगों से छिपा नहीं है। भगवान् रामचन्द्र की जीवन चर्चा में उनके चरित्र की विशेषता और मर्यादा की गवेषणा की कैसी हृदय-ग्राही शिक्षा बताई है। देखिये—जनमत के सामने झुक कर उन्होंने अपनी धर्मपत्नी सती सीता को छोड़ दिया। पैतृक अनुशासन और आज्ञा का आदर्श स्थिर करने के लिये राज्य तक का त्याग किया एवं दुराचार शमन के लिये एक अधितन्त्रवादी अधि-नायकका विध्वंस किया। जो आदर्श श्रीराम के चरित्र में है जिस उच्च भूमिका पर समाज के जीवन का नैतिक, सामाजिक, चारित्रिक, धार्मिक, व्यावहारिक, आध्यात्मिक और आधिभौतिक रूप में स्तर प्रतिष्ठित करने का अद्वितीय लक्ष्य है वह संसार की किसी भी सभ्यता में दिखलाई नहीं पड़ता। रामराज्य के शासनिक विवरण को वेदव्यासजी ने इस प्रकार दिया है :-

"न पुत्र मरणंकेचिद्रामे राज्यं प्रशासति।"

इसे ही रामायण में महर्षि बाल्मीकि ने इस प्रकार कहा है :—

न पुत्रमरणं केचिद्द्रक्ष्यन्ति पुरुषाःक्वचित् ।
नार्यश्चाविधवा नित्यं भविष्यन्ति पतिव्रताः ॥

राम के राज्य में किसी प्रकार का उपद्रव नहीं होता था। पुण्य शासन का यही आदर्श है संसार के शासन का राम के शासन के अतिरिक्त क्या और दूसरा उदाहरण कहीं मिल सकेगा ?

मार्कण्डेय के चरित्र से दीर्घायु की गवेषणा एवं दिलीप और कौत्स के विनयाधिकार की खोज से विद्या का चमत्कार और आदि मानवीय उच्च नीच भावनाओं की अनुकरणीय गाथाओं से अनेक गुरु शिष्य का सम्बन्ध तथा अनुशासनमय जीवनकी घटनाओंकी गवेषणा पुराण साहित्य से प्राप्त होती है। इसी प्रकार मानव जीवन को उदात्त बनाने वाली चारित्र्य और पुरुषार्थ की गवेषणा पुराण ग्रन्थों से प्राप्य है। इतना ही नहीं, आध्यात्मिक और आधिदैविक गवेषणा के अतिरिक्त आधिभौतिकवाद और आधिभौतिक सिद्धान्त अणुशक्ति की गवेषणा की भी प्रचुर सामग्री पुराण ग्रन्थों में है।

पुराण ग्रन्थों से अणुशक्ति का ज्ञान प्राप्त कर वैशेषिक दर्शन-कार कणाद ने आकाश में निश्चेष्ट परमाणु के परस्पर सम्मिश्रण से सप्त पदार्थों की रचना को मीमांसा का प्रशिक्षण बताया है। इस समय अणुगवेषणा पर भौतिक अनुसन्धान के विशेषज्ञों ने संहारक अणु शक्ति का पता लगाया है परन्तु प्रजनन और पालन अणुशक्ति का अभी उनको ज्ञान नहीं है। वह विज्ञान संस्कृत

साहित्य में मिलता है। इस पर ध्यान देकर यन्त्रों द्वारा अनुसन्धानकर प्रत्यक्षीकरण किया जाय तो संसार का महान् उपकार होगा। जैसे, "तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुह भवम् विरञ्चिः संचिन्वन् विरचयति लोकानविकलम्। वहत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां, हरः संक्षुभ्यैनं भजति भसितोद्धूलनविधिम्॥ (सौन्दर्यलहरी)

अर्थात् शक्ति जिसे भगवती या महाशक्ति के नाम से संस्कृत साहित्यमें कहा गया है उस आकाश रूपिणी अव्यक्त शक्ति से अणुवृष्टि हुई। उन अणुओं में से सर्जनात्मक अणुओं को संचित कर संसार की रचना की गई। इसे ब्राह्मी अणुशक्ति कहा है। दूसरे प्रकार के अणुओंको गवेषणा द्वारा संचित कर वैष्णव अणुसे संसार की पालनात्मक सामग्री बनी है। संहारात्मक अणु (विस्फोटक पदार्थ) एकत्र कर रौद्र अणुओं के पिण्डीकरण से संसार के विनाश की शक्ति बनी है। इस क्रम से ब्राह्मी, वैष्णवी, और रौद्र अणुशक्ति - ये तीन प्रकार के अणु बताये गये हैं। इस गवेषणाको यदि वर्तमान अणु परीक्षण समिति आधुनिक साधनों से गम्भीर परीक्षण का प्रयत्न करे तो वर्तमान काल भी पुराण काल के सदृश वैज्ञानिक महत्त्व को प्राप्त कर सकता है।

पुराणों में सिद्धपीठ स्थली, भूमण्डलके विभाग, पुण्यसरिता महानद, सरोवर, भूगर्भवाहिनी नाड़ियां, मरुस्थली और शस्यश्यामल भूभाग आदिका वर्णन दिया है जिनसे प्रचुर मात्रा में ब्राह्मी,

वैष्णवी और रौद्री आणवी शक्ति के विषय में अनुसन्धान सफल हो सकते हैं। स्कन्द पुराण में एक राजकन्या वर्करी नामकी आई है जिसने शारीरिक निर्माण के कारणों का ज्ञान प्राप्त कर अपने मुखमण्डल को वैज्ञानिक प्रक्रियाओं द्वारा बकरी मुख से इसी देह में सुन्दर मुखमण्डल के रूप में बदल दिया और स्वयं विधुवदना बन गई। इसके आठ भाई और एक बहिन थी। उस राजा ने समस्त देश नव विभागों में विभाजित कर प्रत्येक को एक एक खण्ड दिया था तब से नवखण्ड नामसे भारतवर्ष की ख्याति हुई। उन पृथक् पृथक् खण्डों में अनेक प्रकार के भूगर्भ गत धातुओं का वर्णन है। पुराणों में केवल भूमि की ही गवेषणा नहीं है अपितु आकाशचारी ग्रह नक्षत्रों की दूरी और उनकी गति, शिशुमार चक्र, ध्रुवस्थान आदि तथा उत्तरायण, दक्षिणायन ऋतु और मास विज्ञान भी पर्याप्त मात्रा में है। इसलिए पुराण ग्रन्थ भारतवर्ष की बड़ी निधि है।

गुरुमण्डल के संरक्षक मनसुखराय मोरजी ने स्मृति एवं निरुक्त का तथा पुराण ग्रथों का स्वयं अध्ययन कर मानव जीवन की निधि जानकर गुरुमण्डल के प्रकाशन ग्रन्थों में पुराण प्रकाशन का कार्य तन, मन, धनसे प्रारम्भ कर दिया है। मोरजी के आजकल समाचार पत्रों में हिन्दी और संस्कृत के लेख पढ़ने से ज्ञात होता है कि उनकी उत्तरोत्तर विद्या प्रकाशन की प्रगति अहर्निश तीव्र भावना में है।

श्री मोरजी ने मत्स्य पुराण, अग्नि पुराण और लिङ्ग पुराणको

मनन कर कितनी ही अज्ञात समस्याओं का सुचारु रूप से समाधान कर दिया है। मत्स्य पुराण से श्राद्ध कर्म(अ० १६)का यथार्थ ज्ञान अर्थात् मृतात्मा जिस योनि में हो पुत्रों से शास्त्र विहित श्राद्धान्न उसे उस योनि की तृप्ति के पदार्थ में परिणत होकर मिलता है। अग्नि पुराण और लिङ्ग पुराण से तो उन्होंने मनुष्य हित का बहुत साहित्य एकत्रित किया है। पुराण प्रकाशन में उन्होंने सबसे प्रथम उत्पत्ति स्थिति संहार इस क्रम के अनुसार उत्पत्ति प्राधान्य ब्रह्मपुराण का प्रकाशन अग्रिम रक्खा है। संस्कृत साहित्य में आप देखेंगे प्रथम उत्पत्ति प्रकरण तब स्थिति अनन्तर लय। आदि कवि वाल्मीकि के योगवासिष्ठ में यही क्रम आया है'।

ब्रह्मपुराण में सृष्टि क्रम से लेकर वंश वर्णन, कर्तव्य वर्णन और तीर्थवर्णन अध्यात्मनिष्ठा आई है। मोरजी ने अपनी भूमिका में अति सुन्दरता से पुराण मीमांसा का वर्णन किया है। गुरुमण्डल दीन दुर्बल दुःखी जनता के सुख समृद्धि के लिए यथासाध्य कृत प्रयत्न है। इस मण्डल का प्रथम पुष्प श्रमजीवन होने से विचारवती जनता समझ सकती है कि सबसे प्रथम श्रमजीवी कृषक कुलियों की स्थिति पर विचार करना भारत का आदर्श कार्यक्रम सृष्टि के प्रारम्भ से चलता रहा है। श्रमजीवियों की तथा दीनदुःखियों की स्थिति को ठीक कर देना भारतीय धर्म परम्परा से चला आया है। यहाँ से ही भूमण्डल के अन्यान्य देशों ने श्रमजीवियों से अन्याय करने का मार्ग त्याग देना सीखा

है। यथा "कामये दुःखतप्तानाम्प्राणिनामार्ति नाशनम्" (महाभारत) यह भारत का धर्म एवं पुराणों की शिक्षा है। हम प्राणी मात्र को आशीर्वाद देते हैं कि इन पुराणों के अध्ययन से आप में दूसरी जनता के हित के भाव दैनन्दिन समृद्ध होकर संसार मात्र के मित्र बन्धु विश्वस्त होने के पात्र बनें।

पं० ब्रह्मदत्त शास्त्री एम० ए० जो गुरुमण्डल के शास्त्र प्रकाशन में श्री मोरजी के आमन्त्रण पर कार्य कर रहे हैं। पण्डित जी गुरुमण्डल के बड़े धन्यवाद पात्र है हम इन्हें आशीर्वाद देते हैं इनके अक्षुण्ण परिश्रम से जो प्रकाशन कार्य तीव्र गति से हो रहा है यह कार्य संसार की शान्ति, सुख एवं परस्पर सद्भावना का दृढ़ स्तम्भ बना रहे।

गीता जयन्ती २०१० } हरिदत्त शास्त्री

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

पुराण परिचय

संसार के प्राणी मात्र इष्ट प्राप्ति और अनिष्ट के परिहार के लिए दिन रात प्रयत्नशील हैं। "इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहारयोरलौकिकमुपायं यो वेदयति स वेदः" इष्ट प्राप्ति और अनिष्ट परिहार का जो अलौकिक उपाय बताता है वह ही वेद है। जो व्यक्ति ज्ञान उपार्जन से संसार की सम्पूर्ण कठिनाइयों को अपनी विमल बुद्धि द्वारा निर्विघ्नता पूर्वक सरल करते जाते हैं वे पुरुषार्थी और सफलजन्मा हैं। गंगाजल की सदा बहने वाली धारा के समान उनके पवित्र ज्ञान की वाणी संसार के प्राणी मात्र का उद्धार करती है।

ज्ञानका क्षेत्र विमल, व्यापक और अखण्ड है। ज्ञान, इच्छा एवं प्रयत्न की त्रिपुटीसे सत्संस्कार एवं सत्फल मिलते हैं जो वास्तवमें गौरव की वस्तु हैं। ज्ञानी वास्तव में धन्य है "विप्राणां ज्ञानतोज्यैष्ठ्यम्" (मनु० २।११५) वे लोक संग्रह की भावना से कर्तव्य कर श्रेयः साधन के ज्वलन्त उदाहरण बनते हैं। उन्हें सुख दुःख से पूर्ण इस संसार में ज्ञान रूपी खड्ग से अज्ञान एवं दुःख का नाश कर सदैव सुख प्राप्ति और आत्म लाभ का संतोष मिलता है।

प्राचीन भारतीय परम्परा में निष्कारण वेद एवं वेदाङ्ग का अध्ययन अवश्य कर्तव्यत्वेन बताया गया है "ब्राह्मणेननिष्कारणो-धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च" (महाभाष्य नवान्हिक)।

भगवान् वेद इस आज्ञा के द्वारा निष्कारण षडङ्ग वेदाध्ययन को कर्तव्य कहते हैं हमारे जीवन के श्वास प्रश्वास के साथ मिली हुई इस निधि का सम्यग्दर्शन पुराण साहित्य में सुन्दरता से प्रतिपादित है।

भारतीय जीवन से प्रेरणा लेनी हो तो भारतीयों के प्राण-स्वरूप श्रुतिस्मृति के शीर्ष स्थानीय पुराणों से लेनी चाहिए। अलौकिकपुराण साहित्य सम्पूर्ण ज्ञान का भण्डार है। चौदह विद्यास्थानों में महर्षि याज्ञवल्क्य ने इन्हें प्रथम स्थान दिया है :—देखिये याज्ञवल्क्य स्मृ० प्रथ० अ०। पुराणन्यायमीमांसा-धर्मशास्त्रांगमिश्रिताः। वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्यच चतुर्दश ॥ ३ श्लो०।

मानव जीवन का लक्ष्य परमात्मप्राप्ति है अपने जीवन में निष्काम कर्म द्वारा त्याग वृत्ति को ग्रहण कर स्वमार्गप्रशस्ति का सुलभ साधन पुराण हैं। ये सर्ववेदमय सम्पूर्ण साधन, योग क्रिया सिद्धियाँ तन्त्र, मन्त्र एवं कल्याण सिद्धान्तों से परिपूर्ण हैं।

सम्पूर्ण शास्त्रों में पुराण साहित्य की गरिमा और प्राचीनता प्रसिद्ध है।

"पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणास्मृतम्।
उत्तमं सर्वलोकानां सर्वज्ञानोपपादकम्।

त्रिवर्ग साधनं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम् ॥

(पद्मपुराण प्रथमाध्याय)

भावार्थ :—सम्पूर्ण शास्त्रों में सर्वप्रथम पुराणको ब्रह्माजी ने स्मरण किया यह सब लोकों में उत्तम, सम्पूर्ण ज्ञान का बतानेवाला धर्म, अर्थ, काम का साधन, परम पुण्यमय और शतकोटि विस्तारवाला है (पुराणों से प्रेरणा लेकर अनेकानेक महर्षियों ने नाना शास्त्र, स्मृति, तन्त्र, उपपुराण, ज्योतिष, मीमांसा, न्यायदर्शन, आयुर्वेद और इतिहास आदि एवं साहित्य स्रष्टाओं ने अगणित विषयों के ग्रन्थों की रचना की। अतः नाना शाखा प्रशाखाभेद से शतकोटि विस्तारवाले पुराण हैं)।

इतिहासपुराणञ्च गाथाश्चोपनिषत्तथा।
आथर्वणानि कर्माणि अग्निहोत्रकृतेऽभवन् ॥ (पद्म पु०)

इतिहास, पुराण, नाराशंसी आदि गाथा उपनिषद् और आथर्वणिक कर्म अग्निहोत्र करनेवालों के लिये हुए।

पुराणों के सम्बन्ध में और भी वचन उपलब्ध होते हैं :—

ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह।
उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिवि देवादिविश्रिताः ॥

(अथर्ववेद ११।७।२४)

भाष्यम् :—ऋचः पादबद्धा मन्त्राः सामानि गीत विशिष्टा मन्त्राः। छन्दांसि गायत्र्युष्णिगादीनि चतुरक्षराधिकानि समसङ्ख्याकानि पुराणं पुरातनवृत्तान्तकथनरूपमाख्यानम् यजुषा यजुर्मन्त्रेण सह। उच्छिष्टात्—उच्छिष्यमाणात् ब्रह्मणः सकाशात् जज्ञिरे आविर्भूताः।

यज्ञ से यजुर्वेद के साथ ऋक्, साम, छन्द और पुराण हुए।
सुगोपनीयम्वेदेषु पुराणेषु च दुर्लभम्—(ब्रह्म वै० ३ अध्याय)
वेदों में सुगोपनीय और पुराणों में दुर्लभतत्त्व हैं।

वेदेषु च पुराणेषु हरिः सर्वत्र गीयते। (मत्स्य०)

वेदों और पुराणों में भगवान् हरि की प्रशस्ति सर्वत्र गाई गई है इस से स्पष्ट है कि वेद और पुराणों का तादात्म्य है।

शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण है :—

स यथार्द्रैधाग्नेरभ्याहितात्पृथग् धूमा विनिश्चरन्त्येवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि व्याख्यानान्यस्यैवैतानि सर्वाणि निःश्वसितानि।

(बृहदारण्यक उपनिषद् २।४।१०)

यथाऽप्रयत्नेनैव पुरुष निःश्वासो भवत्येवमेव। भगवन्निःश्वास के रूप में भगवत्स्वरूप प्रतिपादन विराट् विश्वरूपदर्शन पुराणों की विशेषता है यही पुराण और वेदों की एकवाक्यता है।

शतपथ ब्राह्मण १३ अ० ४।३।६ में पुराणं वेदः सोऽयमिति "किञ्चित्पुराणमाचक्षीतैवमेवाध्वर्युः" कह कर वेद ही पुराण है यह प्रतिपादित है। आश्वलायन गृह्यसूत्र में पुराणों का स्वाध्याय अवश्य कर्तव्यत्वेन निरूपण किया है।

आशान्तरात्रादायुष्मतां कथाः कीर्तयन्तो माङ्गल्यानीतिहास पुराणानीत्याख्यापयमानस्तं ग्रहणम्।" ४।६।

मनुजी ने विशेषरूप से उसे स्पष्ट किया है :—

स्वाध्यायं श्रावयेत् पित्र्ये धर्मशास्त्राणि चैवहि ।
आख्यानानीतिहासांश्च पुराणानिखिलानिच ॥

३ अध्याय—२३२

पितृयुद्देश्यक स्वाध्याय कर धर्मशास्त्र, पुराण, इतिहास और सम्पूर्ण आख्यानों को इस अवसर पर सुनाओ। पुराणों का कथन वेद के समान ही अप्रतर्क्य है :—

पुराणो मानवोधर्मः साङ्गोवेदश्चिकित्सकः ।
आद्याः सिद्धानि चत्वारि न कर्तव्यानि हेतुभिः ॥

ब्रह्मोक्तयाज्ञवल्क्य संहिता १—४७ ।

पुराण, मानव धर्म, साङ्ग वेद, चिकित्सा शास्त्र ये आदि काल से सिद्ध हैं इन्हें कुतर्कों से दूषित नहीं करना चाहिए।

पुराण वेदों के समानही प्राचीन है।

पुराणं सर्व शास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम् ।
अनन्तरञ्च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गताः ॥

मत्स्यपुराण ५३—१

भारतीय संस्कृति के रक्षक के रूप में इनका स्वाध्याय मनन और उपदेशानुसार आचरण सदा ही इष्ट फल को देनेवाला है।

वेदाश्च सेतिहासाश्च पुराणा देवतागणाः ।
भूधराः सागराः सर्वे पूजनीयाः समन्ततः ॥ पद्मपुराण ।

वेद, पुराण, इतिहास, देवतागण, पर्वत और सागर इनको सदा ही पूजा करनी चाहिये।

याज्ञवल्क्य स्मृति १ अध्याय ४५ श्लोक में आया है :—

वाकोवाक्यं पुराणञ्च नाराशंसीश्च गाथिकाः ।
इतिहासांस्तथा विद्यां योऽधीते शक्तितोऽन्वहम् ॥

प्रति दिन वाक्योवाक्य आपस में वार्तालाप पुराण, नाराशंसी गाथा, इतिहास आर अन्य सभी विद्याओंका यथाशक्ति स्वाध्याय करना चाहिये। (इस से यह स्पष्ट प्रगट होता है कि प्रथम ज्ञानार्जन में ऊहापोहमूलक वार्तालापसे स्थिर सिद्धान्त पुराणका प्रतिपादन होता है नाराशंसी गाथा, यज्ञविधान, इतिहास और विद्याओं का तदनन्तर निरूपण है जो भारतीय साहित्य परम्परा में अद्वितीय है) संक्षेप में पुराण का महत्त्व अतुलनीय है :—

इदं पुराणं परमं पुण्यं वेदैश्च सम्मितम् ।
नानाश्रुतिसमायुक्तं नास्तिकाय न कीर्तयेत् ॥

मत्स्य पुराण १४७-८५

यह पुराण परमपुण्यमय, वेदार्थयुक्त, नानाश्रुतिसमवेत है, इसे नास्तिक लोगों को न सुनावे।

शृणुष्वादि पुराणेषु वेदेभ्यश्च यथाश्रुतम्। मत्स्य २६३—१४

आदि पुराणों में और वेदों में अलौकिकतत्त्व प्रतिपादित है।

इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि पुराण चतुर्दिक् प्राण हैं प्रथम परमपिता परमात्मा के निःश्वास भूत प्राण हैं, वेदों के ये प्राण हैं। सम्पूर्ण प्राणियों के उद्धारार्थ इनका आविर्भाव हुआ इसलिये सारे प्राणियों के प्राण हैं और सम्पूर्ण ज्ञान का मन्थन रूप सार होने से उसके भी प्राण ये पुराण हैं।

ज्ञान, कर्म, अभ्यास एवं ध्यान सभीका संक्षेपमें बहुत महत्त्वपूर्ण वर्णन इनमें है। जीवन के जितने सैद्धान्तिक एवं यथार्थवादी दृष्टिकोण हैं उनका पुराण विशदीकरण कर संसार का महान् उपकार साधन किया है।

जीवन की दुविधा कष्ट एवं दुःखों को रोकने का सरल उपाय बताने वाले पुराण हैं इनसे आबालवृद्ध शूद्रादि नर नारी समान रूप से लाभ उठा सकते हैं। भवरोग का यह अमोघ रसायन है। सम्पूर्ण समस्याओं को सरल उपाय से सुलझानेवाली यह अद्वितीय समाधानकारक ब्रह्मराशि भगवान् कृष्ण द्वैपायन व्यासदेव की सहज कृपा का फल है। संसार ताप से प्रताड़ित लोगों को सान्त्वना, अन्धकार में पड़े हुए को प्रकाश, भूले भटकों को सन्मार्ग, निराश लोगों को आशा की ज्योति देने वाले, शोक उद्वेग से पीडित जनों को उल्लासमय प्रसाद, कर्तव्य विमुख को कर्तव्यज्ञान, पापियों के पाप नाश का सहज साधन, राजनीति विशारदों को नीति शिक्षा, निष्काम कर्मियों को साधन उपदेश, भक्तों को भक्ति का मार्ग और ज्ञानियों को दिव्य मार्ग का प्रकाश ये पुराण देते हैं।

संक्षेप में, जो जिज्ञासु जिस उच्च लक्ष्य से इनमें श्रद्धा विश्वास पूर्वक मनोयोग देकर स्वाध्याय करता है वह एक चतुर गोताखोर के समान अनन्त राशि की खान समुद्र में से अमूल्य रत्न निकाल कर अपना उद्देश्य पूर्ण कर लेता है वैसे ही यथेच्छज्ञान की तृप्ति और लोक कल्याण की भावना इन महापुराणों की आवृत्ति और

अमूल्य शिक्षाओं के आचरण से उद्बुद्ध हो जाती है। यदि अतीत के गौरव को पुराण बतलाते हैं तो वर्तमान के निर्माण और भविष्य की कृति के लिये उनका महत्त्व कम नहीं है। सम्पूर्ण प्राणियों को शाश्वत सुख और शान्ति का वरदान देकर विपत्तिग्रस्त, कलह क्लेश से दुःखित, सन्देह एवं अविश्वास की सशक्त पाश में जकड़े प्राणियों को मुक्ति सन्देश देते हैं। भवरोग से ग्रस्त जनता के उद्धारार्थ पुराण ही एक मात्र शरण है।

साधना के मार्गों में ज्ञान, कर्म, भक्ति और उनके विविध भेदों के साथ कठिनता से प्राप्य और सुलभता से गम्य कई लक्ष्य भेदोपभेदोंके साथ बने हैं उन सबका निबन्धन पुराणों में है। इसके साथ ही सभी श्रेणी एवं वर्ग के व्यक्तियों के लिये उनके अधिकारानुसार अलग २ जीवन में उतारने योग्य सन्मार्ग साधन, उनमें आने वाले विघ्नों और उनसे छुटकारा पाने का बड़ा ही सुन्दर और रोचक उपाय प्रतिपादित किया गया है। जीवन और जगत् के परिपूर्ण स्वरूप की प्राप्ति अभ्युदय और निःश्रेयस् की सिद्धि की प्राप्ति में जीव मात्र का कल्याण साधन कर मानव आगे बढ़ कर परमात्मतत्त्व का योग्य अधिकारी कैसे बन सकता है इन सब का सुन्दर साधनों और शाश्वत चिरन्तन सत्य उपदेशों से परिपूर्ण इतिहास से युक्त विषयों का पुराणों में विशद निरूपण है।

पुराण में प्रतिपादित सर्ग, प्रति सर्ग, वंश, मन्वन्तर एवं वंशानुचरित इस पञ्चाङ्ग से सृष्टि में अनादि काल से चले आते

हुए अविच्छिन्न क्रम का हृदयङ्गम ज्ञानवर्द्धक आख्यान उपलब्ध होता है।

सर्गोऽस्याथविसर्गश्च वृत्तीरक्षान्तराणि च।
वंशो वंशानुचरितं संस्था हेतुरपाश्रयः।
दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः। (भागवत)
ब्रह्म विष्ण्वर्करुद्राणां माहात्म्यं भुवनस्य च।
ससंहारप्रदानाञ्च पुराणे पञ्चवर्णके
धर्मश्चार्थश्च कामश्च मोक्षश्चैवात्र कीर्त्यते।
सर्वेष्वपि पुराणेषु तद्विरुद्धञ्च यत्फलम्।
सात्विकेषु पुराणेषु माहात्म्यमधिकंहरेः।
राजसेषु च माहात्म्यमधिकं ब्रह्मणो विदुः।
तद्वदग्नेश्च माहात्म्यं तामसेष शिवस्य च।
सङ्कीर्णेषु सरस्वत्याः पितॄणाञ्च निगद्यते।
अष्टादश पुराणानि कृत्वा सत्यवतीसुतः। (ब्र० पुराण)

भावार्थ :—

सर्ग, विसर्ग, वृत्ति, रक्षा, अनन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था, हेतु और अपाश्रय इन दश लक्षणों से युक्त को पुराण जाननेवाले पुराण नाम से कहते हैं।

इन सर्ग विसर्ग आदि में ब्रह्मा विष्णु, सूर्य और रुद्र देवता के माहात्म्य का और भुवन कोष का अविकल वर्णन किया गया है धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चतुर्विध पुरुषार्थों का निरूपण है और इन पुरुषार्थों के बाधक तत्वों का सम्यक्तया प्रतिपादन है।

ये पुराण सात्त्विक, राजस और तामस भेद से तीन प्रकार के हैं। सात्विक में विशेष भगवान् हरि का, राजस में ब्रह्माजी का और तामस पुराणोंमें शिव और अग्नि का माहात्म्य वर्णन है। पितरों और सरस्वती का सर्वत्र ही वर्णन मिलता है। अठारह पुराणों के रचयिता भगवान् व्यासजी हैं।

पुराण मानव के ऐहिक आमुष्मिक लोककल्याण साधन के सच्चे मार्गदर्शक हैं। एक ओर जहां सृष्टि की नियमावली का यथार्थ परिदर्शन करने के लिये श्रुति का अनुगमन करती हुई स्मृतियां हमारे लिये विधान निर्माण करती है तो अनादिकाल से जीवन में होती आई अपूर्णता के फलस्वरूप भूलों से मानव को बचाने के लिये पुराण सफल ज्ञानचक्षु हैं। इनमें आख्यान, उपाख्यानों द्वारा मानव जाति का मार्ग प्रशस्त करने के लिये व्यासजी की त्रिकाल अबाधित सत्य की अनुभूति पूर्णज्ञान के फलित सत्य इन पुराणों से संसार का कितना महान् उपकार हुआ है यह बताने की आवश्यकता नहीं है।

सुतराम्, भारतीय जीवन में पुराणों का महत्त्व निर्विवाद है यह भगवन्निःश्वास रूप वेदों के समान ही प्राचीन तथापि चिरनवीन और चिरन्तन सत्य की अनुभूतियों का चरम उत्कर्ष बताने वाले सिद्धान्त ग्रन्थ हैं—पुरे अग्रे अनति गच्छति इति पुराणम्। मानव को मार्ग दर्शन करने के लिये आगे चलाने वाले साहित्य का नाम पुराण अन्वर्थ है।

ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है :—

यो विद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिषदो द्विजः ।
न चेत्पुराणं सम् विद्यान्नैव स स्याद्विचक्षणः ॥
यस्मात्पुराह्यनक्तीदं पुराणं तेन तत्स्मृतम् ।
निरुक्तमस्य यो वेद सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

अध्याय—१

भावार्थ :—

जो द्विज चारों वेदों को जानता है और साङ्गोपाङ्ग विद्याओं में पारङ्गत है यदि पुराण का उसे ज्ञान नहीं तो वह विद्वान् नहीं हो सकता। सर्वप्रथम ज्ञान का प्रकाश करने से इनकी पुराण संज्ञा हुई। इसका जो निर्वचन जानते हैं वे सब पापों से छूट जाते हैं।

अनादि नित्य और शाश्वत होने से अनादि चिरन्तन शाश्वत तत्त्व का ही प्रतिपादन इनकी विशेषता है। सर्व साधारण की चतुर्दिक् विकसित उन्नति और आभ्युदयिक निःश्रेयस् साधन सम्पत्ति के ये अक्षय भण्डार हैं। आप की जैसी रुचि, श्रद्धा एवं निष्ठा होगी वैसी ही रत्न निधि आपको प्राप्त होगी। ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, यज्ञ, दान, तप, संयम, यम, नियम, सेवा, भूतदया, वर्णधर्म, आश्रम धर्म, राज धर्म, मानवधर्म, व्यक्ति धर्म, स्त्री धर्म, सदाचार और नाना श्रेणियों के पुरुषों के विभिन्न कल्याणकारी उपदेश सुन्दर सरल और उपादेय भाषा में

इनमें लिखे गये हैं। इससे ऊपर पुरुष, प्रकृति, महत्तत्त्व, प्रकृति, विकृति, भूगोल, खगोल, ऋषि, मुनि वंशों का वर्णन, राजवंश तथा स्थावर जङ्गम सृष्टि का बहुत सुन्दर रीति से सूक्ष्म विवेचन किया गया है।

इस आदिपुराण ब्रह्मपुराण को आप महानुभावों के कर-कमलों में उपहार प्रस्तुत करते हुए अपार आनन्द होता है ऊपर प्रतिपादित ये सभी विषय आख्यान रूपमें इस महापुराण में आये हैं।

मत्स्य महापुराण की ५३ वीं अध्याय में पुराणों का परिगणन करते हुए जो विवरण दिया गया है वह विशेष रूपसे प्रयोजनीय है अतः उसका आवश्यक अंश यहां प्रस्तुत किया जाता है :—

पुराणानि दशाष्टौ च साम्प्रतं तदिहोच्यते।
नामतस्तानि वक्ष्यामि शृणुध्वं मुनिसत्तमाः।
ब्रह्मणाभिहितं पूर्वं यावन्मात्रं मरीचये।
ब्राह्मन्त्रिदश साहस्रं पुराणं परिकीर्त्यते।
एतदेव यदापद्ममभूद्धैरण्मयं जगत्।
तद्वृत्तान्ताश्रयं तद्वत् पाद्ममित्युच्यते बुधैः।
पाद्मं तत्पञ्चपञ्चाशत्सहस्राणीह कथ्यते।
वाराह कल्प वृत्तान्तमधिकृत्य पराशरः।
यत्प्राह धर्मानखिलान् तद्युक्तं वैष्णवं विदुः।
त्रयोविंशति साहस्रं तत्प्रमाणं विदुर्बुधाः।
श्वेतकल्प प्रसङ्गेन धर्मान् वायुरिहाब्रवीत्।

यत्र तद्वायवीयंस्यात् रुद्रमाहात्म्यसंयुतम् ।
चतुर्विंशत्सहस्राणि पुराणं तदिहोच्यते ।
यत्राधि कृत्य गायत्रीं वर्ण्यते धर्मविस्तरः ।
वृत्रासुरवधोपेतं तद्भागवतमुच्यते ।
सारस्वतस्य कल्पस्य मध्ये ये स्युर्नरोत्तमाः ।
तद् वृत्तान्तोद्भवंलोके तद्भागवतमुच्यते ।
अष्टादश सहस्राणि पुराणं तत्प्रचक्षते ।
यत्राह नारदोधर्मान् बृहत्कल्पाश्रयाणि च ।
पंचविंशत्सहस्राणि नारदीयं तदुच्यते ।
यत्राधिकृत्य शकुनीन् धर्माधर्मविचारणा ।
व्याख्याता वै मुनिप्रश्ने मुनिभिर्धर्मचारिभिः ।
मार्कण्डेयेन कथितं तत्सर्वं विस्तरेण तु ।
पुराणं नवसाहस्रं मार्कण्डेयमिहोच्यते ।
यत्तदीशानकं कल्पं वृत्तान्तमधिकृत्य च ।
वशिष्ठायाग्निना प्रोक्तमाग्नेयं तत्प्रचक्षते ।
तच्च षोडशसाहस्रं सर्वक्रतुफलप्रदम् ।
यत्राधिकृत्य माहात्म्यमादित्यस्य चतुर्मुखः ।
अघोरकल्पवृत्तान्तप्रसङ्गेन जगत्स्थितम् ।
मनवे कथयामास भूत ग्रामस्य लक्षणम् ।
चतुर्दश सहस्राणि तथा पञ्चशतानि च ।
भविष्य चरितप्रायं भविष्यन्तदिहोच्यते ॥
रथन्तरस्य कल्पस्य वृत्तान्तमधिकृत्य च ।

सावर्णिर्नारदाय कृष्णमाहात्म्यमुत्तमम् ॥
यत्र ब्रह्म वराहस्य चोदन्तं वर्णितं मुहुः ।
तदष्टादश साहस्रं ब्रह्मवैवर्त्तमुच्यते ॥
यत्राग्नि लिङ्ग मध्यस्थः प्राहदेवो महेश्वरः ।
धर्मार्थकाममोक्षार्थमाग्नेयमधिकृत्य च ॥
कल्पान्तेलैङ्गमित्युक्तं पुराणंब्रह्मणास्वयम् ।
तदेकादश साहस्रम् ।
महावराहस्यपुनर्माहात्म्यमधिकृत्य च ।
विष्णुनाभिहितंक्षोण्यै तद्वाराहमिहोच्यते ॥
मानवस्य प्रसङ्गेन कल्पस्य मुनिसत्तमाः ।
चतुर्विंशत्सहस्राणि तत्पुराणमिहोच्यते ।
यत्र माहेश्वरान्धर्मानधिकृत्यच षण्मुखः ।
कल्पेतत्पुरुषंवृत्तं चरितैरूपबृंहितम् ।
स्कंदंनाम पुराणञ्च ह्येकाशीतिनिगद्यते ।
सहस्राणिशतञ्चैकमितिमर्त्येषुगद्यते ।
त्रिविक्रमस्यमाहात्म्यमधिकृत्य चतुर्मुखः ।
त्रिवर्गमभ्यधात्तच्च वामनं परिकीर्तितम् ।
पुराणं दशसाहस्रं कूर्मं कल्पानुगं शिवम् ।
यत्र धमार्थकामानां मोक्षस्य च रसातले ।
माहात्म्यं कथयामास कूर्मरूपी जनार्दनः ।
इन्द्रद्युम्न प्रसङ्गेन ऋषिभ्यः शक्रसन्निधौ ।
अष्टादश सहस्राणि लक्ष्मी कल्पानुषङ्गिकम् ।

श्रुतीनां यत्र कल्पादौ प्रवृत्यर्थं जनार्दनः।
मत्स्यरूपेण मनवे नरसिंहोपवर्णनम्।
अधिकृत्याब्रवीत्सप्त कल्पवृत्तं मुनीश्वराः।
तन्मात्स्यमिति जानीध्वं सहस्राणि चतुर्दश।
यदा च गारुडेकल्पे विश्वाण्डाद्‌गरुडोद्भवम्।
अधिकृत्याब्रवीत्कृष्णो गारुडं तदिहोच्यते।
तदष्टादशकञ्चैव सहस्राणीहपठ्यते।
ब्रह्मा ब्रह्माण्डमाहात्म्यमधिकृत्याब्रवीत्पुनः।
तच्च द्वादश साहस्रं ब्रह्माण्डं द्विशताधिकम्।
भविष्याणाञ्च कल्पानां श्रूयते यत्र विस्तरः।
तद्‌ब्रह्माण्डपुराणञ्च ब्रह्मणा समुदाहृतम्।
चतुर्लक्षमिदंप्रोक्तं व्यासेनाद्भुत कर्मणा।
उपभेदान्प्रवक्ष्यामि लोके ये सम्प्रतिष्ठिताः।
पाद्मे पुराणे तत्रोक्तं नरसिंहोपवर्णनम्।
तच्चाष्टादश साहस्रं नारसिंहमिहोच्यते।
नन्दाया यत्र माहात्म्यं कार्तिकेयेन वर्ण्यते।
नन्दी पुराणं तल्लोके राख्यातमितिकीर्त्यते।
यत्र शाम्बं पुरस्कृत्य भविष्येऽपिकथानकम्।
प्रोच्यते तत्पुनर्लोके शाम्बमेतन्मुनिव्रताः।
पुरातनस्य कल्पस्य पुराणानि विदुर्बुधाः।

उपरि वर्णित विवरण में ब्रह्म, पद्म, विष्णु, शिव, (वायु) देवीभागवत, (भागवत) भविष्य, नारद, मार्कण्डेय,

ब्रह्मवैवर्त, अग्नि, लिङ्ग, वराह, वामन, मत्स्य, कूर्म, स्कन्द, गरुड़ और ब्रह्माण्ड इन अठारह पुराणों में आये हुए उनके प्रतिपाद्य विषयों का संक्षेप में प्रतिपादन है।

महा पुराणों के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं पाठकों की सेवा में वामन पुराण का एक प्रचलित श्लोक प्रस्तुत है जिसमें आद्या-क्षर से अठारहों पुराणों का पूर्ण ज्ञान हो सकता है।

मद्वयं भद्वयंचैव ब्रत्रयं व चतुष्टयम्

अनापलिङ्ग कूस्कानि पुराणानि पृथक् पृथक्।

म द्वयम् = मार्कण्डेय एवं मत्स्य।

भ द्वयम् = भागवत एवं भविष्य।

ब्र त्रयम् = ब्रह्म, ब्रह्माण्ड एवं ब्रह्म वैवर्त।

व चतुष्टयम् = विष्णु, वराह, वामन तथा वायु।

अ = अग्नि। ना = नारद, प = पद्म।

लि = लिङ्ग। ग = गरुड़। कू = कूर्म और स्क = स्कन्द।

कुछ विद्वद्वृन्द महा पुराण, उप पुराण, अतिपुराण और पुराण भेद से अठारह अठारह संख्या मानते हैं। उनके अनुसार महा पुराण ये हैं :—

ब्रह्म, पद्म, शिव, विष्णु, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिङ्ग, वराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़ और ब्रह्माण्ड।

उप पुराण :— भागवत, माहेश्वर, ब्रह्माण्ड, आदित्य, पराशर, सौर, नन्दिकेश्वर, साम्ब, कालिका, वारुण, औशनस्,

मानव, कापिल, दुर्वासस्, शिव धर्म, बृहन्नारदीय, नारसिंह, सनत्कुमार।

अति पुराण:— कार्तव, ऋजु, आदि, मुद्गल, पशुपति, गणेश, सौर, परानन्द, बृहद्धर्म, महाभागवत, देवी, कल्कि, भार्गव, वशिष्ठ, कौर्म, गर्ग, चण्डी और लक्ष्मी।

पुराण:— बृहद्विष्णु, शिव उत्तर खण्ड, लघु बृहन्नारदीय, मार्कण्डेय, वह्नि, भविष्योत्तर, वराह, स्कन्द, वामन, बृहद्वामन, बृहन्मत्स्य, स्वल्पमत्स्य, लघु वैवर्त और ५ प्रकार के भविष्य।

मेरी तुच्छ बुद्धि में पुराणों के सम्बन्ध में इस प्रकार के क्रम का जो भी रूप रहे फिर भी इतना स्पष्ट है कि न्यूनाधिक रूपमें एक या दूसरी सूचीमें सभी पुराणों का इसमें समावेश होगया है।

समुद्र मन्थन के समय चतुर्दश रत्नों की प्राप्ति उन महामहिम देवासुरों को हुई यह प्रसिद्ध है परन्तु इन पुराणों के अवगाहन से बहुमूल्य असंख्य रत्नों की प्राप्ति होती है यह ध्रुव सत्य है। पुराणों में माहात्म्य कथाओं के प्रसङ्ग में नाना इतिहास और आख्यान उपलब्ध हैं जो महत्त्व पूर्ण हैं। प्रसङ्गानुसार इतना अधिक व्यापक विषयों का समावेश हुआ है कि ध्यान पूर्वक स्वाध्याय करने से एवं उन्हें आचरण का रूप देने से आदर्श जीवन बनाने की प्रत्यक्ष प्रेरणा मिलती है इस महान् ज्ञान निधि को विश्वम्भर का शब्दकोश (Encyclopedia) कहदें तो कोई अत्युक्ति नहीं। पुराणों की विषय सूची इतनी व्यापक है कि उन्हें यहां देना इस छोटे से लेख के कलेवर में सम्भव

नहीं है। हां, हम नाना पुराणों की मुख्य २ विषयानुक्रमणिका को तत्तत्स्थानों से उद्धृत कर अलग से पाठक महानुभावों के अवलोकनार्थ दे रहे हैं। आशा है, इसको अविकल पढ़ कर विद्वद्वृन्द विषय व्यापकता से उत्साहित होकर सम्पूर्ण पुराण साहित्य के अध्ययन से संसार का हित सम्पादन करेंगे।

अधिकन्तु, तन्त्र मन्त्र इन्हीं के अन्तर्गत हैं। वैद्यक शास्त्र के सभी विषय गरुड़ पुराण अग्नि पुराणादि सभी मुख्य पुराणों में पाये जाते हैं। दर्शन, विज्ञान, राजनीति तो सभी का क्रमबद्ध प्रतिपादित विषय हैं। आध्यात्मिक साधना के लिये स्तोत्र, कवच, एव सहस्रनाम आदि पुराणों में उपलब्ध हैं। वेदों एवं पुराणों में प्रकृति (पृथ्वी) को गाया है। वेदों में सूक्ष्मरूप से (नारा-शंसी गाथा-यज्ञगाथा) का निरूपण किया है तथा पुराणों में अधिष्ठात्री देवी प्रकृतीश्वरी का विशदीकरण किया है, एवं महर्षियों ने स्मृतियों में इसी आधार पर व्यवहार मार्ग की प्रसस्ति गाई है। वेद, वेदाङ्ग, पुराण एवं स्मृतियों को धर्म-शास्त्र कहा है। ये शाश्वत सत्य हैं। इनके निरन्तर श्रवण मनन एवं निधिध्यासन करने से अपना कल्याण है।

इसके साथ साथ जो विवरण भू वृत्तान्त के सम्बन्ध में आया है उसमें तीर्थ प्रधान वर्णन होने से गवेषणा और अनु-सन्धान कर्ता महानुभावों को पूर्ण सहायता मिल सकती है।

सम्पूर्ण पुराणों में प्रथम यह ब्रह्म पुराण आदिकल्प का है इसीलिये सुमेरु स्थानीय है। आज की विघटित दुरवस्थाओं

का संकेत युगधर्मों के प्रकरणों के पढ़ने से दर्पण में प्रतिबिम्बित दर्शक बिम्ब के समान स्पष्ट ज्ञान होता है।

इसके साथ की लगी विषयसूचि का निर्माण इसी उद्देश्य से परिश्रम पूर्वक किया गया है कि विद्वज्जनों की तुलना में संस्कृत के प्रति प्रेम रखते हुए भी संस्कृत भाषा का लाभ न उठाने वाले पुराण प्रेमी महानुभाव इसके विषय ज्ञान से वञ्चित न रहें बल्कि इस सूचि से प्रभावित होकर अधिक संस्कृत की ओर आकर्षित हो अपने संस्कृत के अध्ययन को बढ़ा कर कृतकार्य हों।

अपने गत दर्शकों के दिन प्रति दिन के श्रुति स्मृति एवं पुराणों के स्वाध्याय से मुझे जीवन की गरिमा बढ़ानेवाले तत्त्वों और उसे उच्चस्तर पर ले जाने वाले क्रिया कलापों को हृदयङ्गम करने का सुअवसर मिला है। मैं इनका स्वाध्याय करता हुआ अघाता नहीं हूँ जब जब अपने स्वाध्याय कालमें मैं इन ग्रन्थरत्नों को देखता हूँ तो चिरन्तन तथ्य सार्वजनीन लोककल्याण के लिये प्रतिपादित इनके विषय मुझे अधिकाधिक आकर्षित करलेते हैं। मैं इन्हें हृदय से लगा लेता हूँ। फिर दुःख भी होता है कि भारत की इतनी अमूल्य निधि भारतीयों के पास रहते दैन्य, अभाव, और दुर्दशा, कलह आदि जहां समूल नष्ट होने चाहिए वहां वे अपनी जड़ हमारे समाज में इतनी गहरी जमा चुके हैं कि इनसे छुटकारा कठिन सा हो रहा है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि सृष्टि के इन प्राणों का व्यापक रूप में प्रचार होने से ही समूल बुराइयां नष्ट हो सकती हैं।

मेरी सभी महानुभावों से यह विनम्र प्रार्थना है कि इनमें प्रतिपादित वस्तु तत्त्व को हृदय की विशालता व्यापक दृष्टिकोण और सत्य शिव तथा सुन्दर की रचना के उद्देश्य से अनुशीलन करने का प्रयत्न करें इसी में हम लाभान्वित होकर अपना और अपने आत्मीय जन एवं सृष्टि का कल्याण कर सकते हैं।

अपने जीवन को अनुभूतियों को साकार रूप देनेवाली महती ज्ञान देवता को पूजा अहर्निश स्वाध्यायके रूप में हो (स्वाध्यायान्मा प्रमदः") इसी लक्ष्य से गुरुमण्डल ग्रन्थमाला के नवम पुष्प के रूप में सम्पूर्ण स्मृतियों का संग्रह प्रकाशित करने का प्रयास किया गया है आशा है शताधिक संख्या में प्राप्त इन स्मृतियों को हस्तलिखित ग्रन्थों की प्रतिलिपियां उपलब्ध हो जाने से जीवन को प्रेरणा और स्फूर्ति देनेवाला महर्षि कल्प उन प्रातः स्मरणीय प्राप्त पुरुषों का मान्य निर्णय संसार को मार्ग दर्शन के लिये मिलेगा। आप महानुभावों की शुभाशोः तथा भूतभावन भगवान् विश्वनाथ के कृपार्द्र कटाक्ष से सफलतापूर्वक प्रकाशित कर प्रस्तुत की जायगी ऐसी आशा है।

वेदों और पुराणोंका स्वाध्याय हम भारतीयों के अध्ययन एवं पाठ्यक्रम से कितना दूर हो गया है यह सभी महानुभावों को विदित है। इसीका यह दुष्परिणाम है कि विश्व के उपदेष्टा वेदमार्ग प्रवर्तक भारत के गौरव ऋषिमहर्षियों की सन्तान होकर भी हम भारतीय नैतिक स्तर से नीचे गिरते जा रहे हैं और हमारी पतनावस्था चरम सीमा को पार कर गई है।

इनके पठनपाठन क्रम का श्री गणेश निरुक्त जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ एक से कर शनैः२ इसके विशद् अध्ययन से सारे विश्व को ज्ञान सूर्य का प्रकाश मिले और अज्ञानान्धकार से जर्जर विश्व को महती प्रेरणा मिले इसी उद्देश्य से गुरुमण्डल के दशम पुष्प के रूप में आप महानुभावों को निरुक्त का उपहार प्रस्तुत किया है। हमारी यही एक अमर अभिलाषा है कि सम्पूर्ण वेदनिधि का अविकल प्रकाशन कार्य कोई उदारमना शास्त्रव्यसनी महानुभाव लें तो विश्व का एक बड़ा भारी अभावपूर्ण होगा। इस महान् ग्रन्थ को पुराण प्रेमी शास्त्रैकाध्यायी विद्वज्जनों की सेवामें उपस्थित कर यह प्रार्थना करते हैं कि आप लोग वेदवेदाङ्गादि के अध्ययन अध्यापन क्रम को पुनरुज्जीवित कर स्वतन्त्र भारत के उत्थान काल में प्रातःस्मरणीय आर्ष ज्ञान की उत्कृष्ट विभूतियां उन ऋषियों को अपनी सच्ची श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर हमलोगों के इस प्रयास को सफल करेंगे।

मनुष्य ने अनादि काल से यावन्मात्र प्राणियों के उद्धार का प्रण लिया हुआ है इस दिशा में उसके लिये श्रुति स्मृति, जो सृष्टि की नियमावली है और पुराण जो उसके उपबृंहक हैं वे सदा से ही दृढ़ आधार शिला पर निर्मित प्रकाशस्तम्भ का काम करते हैं। आज की महती अनर्थ परम्परा में विपरीत अवस्थाओं का कटु अनुभव करता हुआ मनुष्य जो निराशा, अशान्ति और संघर्ष के थपेड़ों से दुःखी हो रहा है उसका समाधान ये पुराण हैं। मेरी मान्यता है कि इस निराशापूर्ण वातावरण में [आशा

का अज्ञानान्धकार में ज्ञानालोक का जीवन में अपनी कर्मण्यता की समाप्ति समझने वाले पुरुष को पुरुषार्थ का यहाँ तक कि संसारमें जो कुछ असत् अविवेक, अविद्या, अज्ञानादि रूपी अन्धकार हैं उनसे छुटकारा दिलानेवाला यह महातन्त्र है बल्कि तारकमन्त्र है। अस्त्रों से विश्व को अहिंसा, सत्य, और प्रेम और शान्ति का सन्देश दीजिये।

गत चैत्र मास में नवरात्रों के पूर्व जबसे पुराण पारायण में श्री मोर ग्रन्थानुसन्धान समिति की पण्डित मण्डली ने समय देना आरम्भ किया तो मुझे ऐसा लगा कि इनका अविकल दोहन कर अपने जीवन को कृतकृत्य करना हम भारतीयों का प्रधान कर्तव्य है। उसी समय इसके प्रकाशन का संकल्प अङ्कुरित हुआ और ब्रह्मपुराण के प्रकाशन का बीज उसी में निहित है जो पुष्पित एवं पल्लवित रूप में सेवा में उपस्थित है।

मेरी यह प्रबल इच्छा थी कि उसे शीघ्रातिशीघ्र गुरुमण्डल ग्रन्थमाला के एकादश पुष्प के रूप में आप महानुभावों की सेवा में प्रस्तुत करूं इतने अल्प समय में शीघ्रतावश जो कुछ त्रुटियां प्रेस के कर्मचारियों तथा कार्यकर्तृवृन्द की अनवधानता से रह गई है उन्हें कृपालु विद्वद्वृन्द सुधारने की उदारता दिखला कर कृपा करें।

इस महत्कार्य में आरम्भ से ही श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत कालेज लक्ष्मणगढ़ एवं भूत० सहायक सञ्चालक राजस्थान पुरातत्व मन्दिर जयपुर का

भूमिकालेखन व शोधन कार्य में तथा श्री पं० कजोड़ीलालजी मिश्र एवं पं० श्री रामनाथजी दाधीच साहित्य शास्त्री का प्रूफ कार्य संशोधन में पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है उन्हें अपने अभिन्न अङ्ग के नाते किसी प्रकार का धन्यवाद प्रदान करना शिष्टता के विरुद्ध है। श्रीपरमपूज्य राजगुरुजी हरिदत्तजी शास्त्री विद्यालङ्कार विद्यारत्न के सञ्चालकत्व में यह सब होने से उनकी विभूति एवं आशीर्वाद का ही फल है। आपने पुराण महिमा लिख हमें उत्साह एवं कर्त्तव्य पथ की प्रेरणा दी है। अन्त में मैं आप सभी महानुभावों का हृदय से आभार प्रदर्शन करता हुआ इस ज्ञान राशि के प्रचार का स्वाध्याय द्वारा पुण्य लाभ करने की करबद्ध प्रार्थना करता हूँ।

आशा है आप सभी उदाराशय आपेक्षिक अपूर्णता की उपेक्षा बुद्धि से क्षमा कर इस परिश्रम को सच्चे अर्थों से सफल बना हमें कृतकृत्य करेंगे।

कलकत्ता—
गीता जयन्ती
मार्गशीर्ष शुक्ला
११।२०१०

कृपाभिलाषी
मनसुखराय मोर

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

अष्टादशपुराणानां विषयानुक्रमणिका प्रारभ्यते ।

॥ श्रीः ॥

ब्रह्मपुराण



वेदव्यास प्रणीते महापुराणादि तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च

बृहन्नारदीये ४ पा० ९२ अ० उक्ता यथा—

ब्राह्मं पुराणं तत्रादौ सर्व्वलोकहिताय वै ।
व्यासेन वेदविदुषा समाख्यातं महात्मना ॥
तद्वै सर्वपुराणाग्र्यं धर्मकामार्थमोक्षदम् ।
नानाख्यानेतिहासाढ्यं दशसाहस्रमुच्यते ॥

तत्पूर्वभागे—

"देवानाम सुराणाञ्च यत्रोत्पत्तिः प्रकीर्तिता ।
प्रजापतीनाञ्च तथा दक्षादीनां मुनीश्वर ! ॥
ततो लोकेश्वरस्यात्र सूर्य्यस्य परमात्मनः ।
वंशानुकीर्त्तनं पुण्यं महापातकनाशनम् ॥
तत्रावतारः कथितः परमानन्दरूपिणः ।
श्रीमतो रामचन्द्रस्य चतुर्व्यूहावतारिणः ।
ततश्च सोमवंशस्य कीर्त्तनं यत्र वर्णितम् ।
कृष्णस्य जगदीशस्य चरितं कल्मषापहम् ।

द्वीपानाञ्चैव सिन्धूनां वर्षाणाञ्चाप्यशेषतः ।
वर्णनं यत्र पातालस्वर्गाणाञ्च प्रदृश्यते ।
नरकाणां समाख्यानं सूर्यस्तुतिकथानकम् ।
पार्वत्याश्च तथा जन्म विवाहश्च निगद्यते ।
दक्षाख्यानं ततः प्रोक्तमेकाम्रक्षेत्रवर्णनम् ।
पूर्वभागोऽयमुदितः पुराणस्यास्य मानद ! ॥"

तदुत्तरभागे—

अस्योत्तरे विभागे तु पुरुषोत्तमवर्णनम् ।
विस्तरेण समाख्यातं तीर्थयात्राविधानतः ॥
अत्रैव कृष्णचरितं विस्तरात् समुदीरितम् ।
वर्णनं मम लोकस्य पितृश्राद्धविधिस्तथा ॥
वर्णाश्रमाणां धर्माश्च कीर्त्तिता यत्र विस्तरात् ।
विष्णुधर्मयुगाख्यानं प्रलयस्य च वर्णनम् ॥
योगानां च समाख्यानं सांख्यानाञ्चाऽपि वर्णनम् ।
ब्रह्मवादसमुद्देश पुराणस्य च संशनम् ।
एतद् ब्रह्मपुराणन्तु भागद्वयसमाचितम् ॥
वर्णितं सर्व पापघ्नं सर्वसौख्यप्रदायकम् ॥

तत्फलश्रुति :—

सूतशौनकसम्वादं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।
लिखित्वैतत्पुराणं यो वैशाख्यां हेमसंयुतम् ॥
जलधेनुयुतञ्चापि भक्त्या दद्याद् द्विजातये ।

पौराणिकाय सम्पूज्य वस्त्रभोज्यविभूषणैः ॥
स वसेद् ब्रह्मणोलोके यावच्चन्द्रार्कतारकम् ।
यः पठेच्छृणुयाद्वाऽपि ब्रह्मानुक्रमणीं द्विज ।
सोऽपि सर्वपुराणस्य श्रोतुर्वक्तुः फलं लभेत् ।
श्रृणोति यः पुराणन्तु ब्राह्मं सर्वं जितेन्द्रियः ।
हविष्याशी च नियमात् स लभेद् ब्रह्मणः पदम् ।
किमत्र बहुनोक्तेन यद् यदिच्छति मानवः ।
तत्सर्वं लभते वत्स पुराणस्यास्य कीर्त्तनात् ।

पद्मपुराण

तत्स्थ विषयाणाम्प्रतिपादनम् नारदीयपुराणेउक्तं

यथा :—

प्रथमे सृष्टिखण्डे :—

"पुलस्त्येन तु भीष्माय सृष्ट्यादि क्रमतो द्विज ।
नानाख्यानेतिहासाद्यैर्यत्रोक्तो धर्मविस्तरः ।
पुष्करस्य च माहात्म्यं विस्तरेण प्रकीर्तितम् ।
ब्रह्मयज्ञविधानञ्च वेदपाठादिलक्षणम् ।
दानानां कीर्त्तनं यत्र व्रतानाञ्च पृथक् पृथक् ।
विवाहः शैलजायाश्च तारकाख्यानकं महत् ।
माहात्म्यञ्च गवादीनां कीर्त्तितं सर्वपुण्यदम् ।

कालकेयादि दैत्यानां वधो यत्र पृथक् पृथक् ।
ग्रहाणामर्च्चनं दानं यत्र प्रोक्तं द्विजोत्तम ॥
तत्सृष्टिखण्डमुद्दिष्टं व्यासेन सुमहात्मना ।

द्वितीये भूमि खण्डे :—

पितृमात्रादिपूज्यत्वे शिवशर्मकथा पुरः ।
सुव्रतस्य कथा पश्चात् वृत्रस्य च वधस्तथा ।
पृथोर्वेणस्य चाख्यानं धर्माख्यानं ततःपरम् ।
पितृशुश्रूषणाख्यानं नहुषस्य कथा ततः ।
ययाति चरितञ्चैव गुरुतीर्थनिरूपणम् ।
राज्ञा जैमिनि सम्वादो बह्वाश्चर्यकथायुतः ।
कथाह्यशोकसुन्दर्या हुण्ड-दैत्यवधान्विता ।
कामोदकाख्यानकं तत्र विहुण्डवधसंयुतम् ।
कुञ्जुगस्य च सम्वादश्च्यवनेन महात्मना ।
सिद्धाख्यानं ततः प्रोक्तं खण्डस्यास्यफलोहनम् ।
सूतशौनकसम्वादं भूमिखण्डमिदंस्मृतम् ।

तृतीये स्वर्ग खण्डे :—

"ब्रह्माण्डोत्पत्तिरुदिता यत्रर्षिभ्यश्चसौतिना
सभूमिलोकसंस्थानं तीर्थाख्यानं ततःपरम् ।
नर्मदोत्पत्ति कथनं तत्तीर्थानां कथा पृथक् ।
कुरुक्षेत्रादितीर्थानां कथा पुण्याः प्रकीर्तिताः ।
कालिन्दी पुण्यकथनं काशीमाहात्म्यवर्णनम् ।

गयायाश्चैव माहात्म्यं प्रयागस्य च पुण्यकम् ।
वर्णाश्रमानुरोधेन कर्मयोगनिरूपणम् ।
व्यासजैमिनि सम्वादः पुण्यकर्मकथाचितः ।
समुद्रमथनाख्यानं व्रताख्यानं ततःपरम् ।
ऊर्ज्जपञ्चाहमाहात्म्यं स्तोत्रं सर्वापराधनुत् ।
एतत्स्वर्गाभिधं विप्र ! सर्वपातकनाशनम् ।"

चतुर्थे पातालखण्डे :—

"रामाश्वमेधे प्रथमं रामराज्याभिषेचनम् ।
अगस्त्याद्यागमश्चैव पौलस्त्यान्वयकीर्त्तनम् ।
अश्वमेधोपदेशश्च हयचर्य्याततःपरम् ।
नानाराजकथाः पुण्या जगन्नाथानुवर्णनम् ।
वृन्दावनस्य माहात्म्यं सर्वपापप्रणाशनम् ।
नित्यलीलानुकथनं यत्र कृष्णावतारिणः ।
माधवस्नान माहात्म्ये स्नानदानार्च्चनेफलम् ।
धरावराहसम्वादो यम ब्राह्मणयोः कथा ।
सम्वादो राजदूतानां कृष्णस्तोत्रनिरूपणम् ।
शिवशम्भुसमायोगो दधीच्याख्यानकन्ततः ।
भस्ममाहात्म्यमतुलं शिवमाहात्म्यमुत्तमम् ।
देवरातसुताख्यानं पुराणाज्ञप्रशंसनम् ।
गौतमाख्यानकञ्चैव शिवगीता ततःस्मृता ।
कल्पान्तरी रामकथा भारद्वाजाश्रमस्थिती ।
पातालखण्डमेतद्धि शृण्वतां ज्ञानिनां सदा ।

सर्वपापप्रशमनं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥

पञ्चमे, उत्तर खण्डे :—

पर्वताख्यानकं पूर्वं गौर्यै प्रोक्तं शिवेन वै ।
जालन्धरकथा पश्चात् श्रीशैलाद्यनुकीर्त्तनम् ।
सागरस्य कथा पुण्या ततः परमुदीरिता ।
गंगाप्रयागकाशीनां गयायाश्चाधिपुण्यकम् ।
आम्लादिदानमाहात्म्यं तन्महाद्वादशीव्रतम् ।
चतुर्विंशैकादशीनां माहात्म्यं पृथगीरितम् ।
विष्णुधर्मसमाख्यानं विष्णुनामसहस्रकम् ।
कार्तिकव्रतमाहात्म्यं माघस्नान फलन्ततः ।
जम्बुद्वीपस्य तीर्थानां माहात्म्यं पापनाशनम् ।
साभ्रमत्याश्च माहात्म्यं नृसिंहोत्पत्तिवर्णनम् ।
देवशर्मादिकाख्यानं गीता माहात्म्यवर्णने ।
भक्ताख्यानञ्च माहात्म्यं श्रीमद्भागवतस्य ह ।
इन्द्रप्रस्थस्य माहात्म्यं बहुतीर्थकथान्वितम् ।
मन्त्ररत्नाभिधानञ्च त्रिपाद्भूत्यनुवर्णनम् ।
अवतारकथा पुण्या मत्स्यादीनामतःपरम् ।
रामनाम शतं दिव्यं तन्माहात्म्यञ्च बाडव ! ।
परीक्षणञ्च भृगुणा श्रीविष्णोर्वैभवस्य च ।
इत्येतदुत्तरंखण्डं पञ्चमं सर्वपुण्यदम् ।

तत्फलश्रुतिः —

“पञ्चखण्डयुतं पाद्मं यः शृणोति नरोत्तमः ।

स लभेद्वैष्णवं धाम भुक्त्वा भोगानिहेप्सितान् ।
एतद्वै पञ्चपञ्चाशत् सहस्रं पद्मसञ्ज्ञकम् ।
पुराणं लेखयित्वा वै ज्यैष्ठ्यां स्वर्णाज्यसंयुतम् ।
यः प्रदद्यात्सुमतये पुराणज्ञाय मानद ।
स याति वैष्णवं धाम सर्वदेवनमस्कृतः ।
पद्मानुक्रमणीमेतां यः पठेच्छृणुयात्तथा ।
सोऽपि पद्मपुराणस्य लभेत्श्रवणजं फलम् ।"

विष्णुपुराण

तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च बृहन्नारदीये—९४ अध्याये उक्ता यथा—
श्रृणु वत्स प्रवक्ष्यामि पुराणं वैष्णवं महत् । त्रयोविंशति साहस्रं सर्वपातक नाशनम् । यत्रादिभागे निर्दिष्टाः षडंशाः शक्तृजेन ह ।
मैत्रेयायादिमे तत्र पुराणस्यवतारिका ।

तत्र प्रथमभागस्य प्रथमांशे :—

"आदिकारणसर्गश्च देवादीनाञ्चसम्भवः ।
समुद्रमथनाख्यानं दक्षादीनां कथाचयः ।
ध्रुवस्य चरितं चैव पृथोश्चरितमेव च ।
प्राचेतसं तथाख्यानं प्रह्लादस्य कथानकम् ।
पृथुराज्याधिकाराख्यः प्रथमोऽशइतीरितः ।

प्रथम भागस्य द्वितीयांशे :—

पातालनरकाख्यानं सप्तसर्गनिरूपणम् ।
सूर्य्यादिचारकथनं पृथग्लक्षणसंगतम् ।
चरितं भरतस्याथ मुक्तिमार्गनिदर्शनम् ।
निदाघऋतुसम्वादो द्वितीयोंऽशउदाहृतः ।

प्रथमभागस्य तृतीयांशे :—

"मन्वन्तरसमाख्यानं वेदव्यासावतारकम् ।
नरकोद्धारकं कर्म गदितञ्च ततःपरम् ।
सगरस्यौर्वसम्वादे सर्वधर्मनिरूपणम् ।
श्राद्धकल्पं तथोद्दिष्टं वर्णाश्रमनिबन्धने ।
सदाचारश्च कथितो मायामोहकथा ततः ।
तृतीयोंऽशोऽयमुदितः सर्वपापप्रणाशनः ।"

प्रथमभागस्य चतुर्थांशे :—

"सूर्यवंशकथा पुण्या सोमवंशानुकीर्तनम्
चतुर्थेऽशे मुनिश्रेष्ठ नानाराजकथान्वितम्"

प्रथमभागस्य पञ्चमांशे :—

"कृष्णावतारसम्प्रश्नो गोकुलीया कथा ततः ।
पूतनादिवधोबाल्येकौमारेऽघादिहिंसनम् ।
कैशोरे कंसहननं माथुरं चरितन्तथा ।
ततस्तु यौवने प्रोक्ता लीला द्वारवतीभवा
सर्वदैत्यवधो यत्र विवाहाश्च पृथग्विधाः ।

यत्र स्थित्वा जगन्नाथः कृष्णोयोगेश्वरेश्वरः
भूभारहरणं चक्रे पस्स्वहननादिभिः।
अष्टावक्रीयमाख्यानं पञ्चमोंऽशाइतीरितः।"

प्रथमभागस्य षष्ठांशे :—

कलिजं चरितम्प्रोक्तं चातुर्विध्यं लयस्य च।
ब्रह्मज्ञानसमुद्देशः खाण्डिक्यस्य निरूपितः।
केशिध्वजेन चेत्येष षष्ठोंऽशः परिकीर्तितः।

तस्य द्वितीय भागे :—

अतः परन्तु सूतेन शौनकादिभिरादरात्।
पृष्टेन चोदिताः शश्वत्विष्णुधर्मोत्तराह्वयाः।
नाना धर्मकथाः पुण्या व्रतानि नियमा यमाः।
धर्मशास्त्रञ्चार्थशास्त्रं वेदान्तं ज्यौतिषन्तथा।
वंशाख्यानम्प्रकरणात् स्तोत्राणि मनवस्तथा।
नाना विद्याश्रयाःप्रोक्ताः सर्वलोकोपकारकाः।
एतद्विष्णुपुराणं वै सर्व शास्त्रार्थसंग्रहः।"

तत्फलश्रुतिः —

"वाराह कल्पवृत्तान्तं व्यासेनकथितन्त्विह।
यो नरः पठते भक्त्या यः शृणोति च सादरम्।
तावुभौ विष्णुलोकं हि व्रजेताम्भुक्तभोगकौ।
तल्लिखित्वा च योदद्यादाषाढ्यां घृतधेनुना।
सहितं विष्णुभक्ताय पुराणार्थविदे द्विजः।

स याति वैष्णवं धाम विमानेनार्कवर्चसा।
यश्च विष्णुपुराणस्य समनुक्रमणीं द्विज।
कथयेच्छृणुयाद्वाऽपि स पुराणफलं लभेत्।

शिवपुराण

तत्स्थ विषयाणां प्रतिपादनम्

ज्ञानसंहितायाम्:—

ऋषिगणस्य प्रश्नः। ब्रह्मनारदसंवादःज्योतिर्लिङ्ग प्रादुर्भावश्च। ओंकार प्रादुर्भावः, शिवस्यानुग्रहः, विष्णुकृत शिवस्तुतिः। उभयोःकृते शिवस्य वरदानम्। ब्रह्मणो हंसरूपधारणस्य विष्णोः वराहरूपधारणस्य च कारणरूप निर्देशः, ब्रह्मादीनामुत्पत्तिकथनम्। ऋष्यादीनां सृष्टिः। भगवत्या देहत्यागस्य संक्षेपेण वृत्तान्त-कथनम् शिवपूजा विधिश्च। पावमान मन्त्रैः शिवपूजा विधिः। तारकोपाख्यानं, ब्रह्मण समीपे देवादीनांगमनञ्च। ब्रह्मदेव संवादः शिवस्य तपो वर्णनञ्च मदनदहनम्, पार्वत्याश्च प्रत्यावर्त्तनम्। पार्वत्यास्तपः। पार्वतीतपः समुद्दिश्य देवगणानामृषीणाञ्च शिवसन्निधाने गमनम्, जटिल ब्राह्मणवेशे पार्वत्याःसकाशं-शिवस्यागमनम्। हरपार्वती संवादः। शिवविवाहोद्योगः। शिवविवाह यात्रा। शिवरूप दर्शने मेनकायाःखेदस्तां प्रति

भगवत्याः ज्ञानोपदेशः। हरपार्वत्योर्विवाहः। कार्त्तिकेयस्य जन्मः देवसेनापतित्वं तारकवधश्च एवं ब्रह्मणो वरेण तारकपुत्राणां त्रिपुरेऽधिष्ठानम्। विष्णुसृष्टौ मुण्डिकर्तृक दैत्यगणानाम्मोहोत्पादनम्। मुण्डिन उपदेशेन दैत्यानां धर्मनाशः दरिद्रताञ्च दृष्ट्वा विष्णुप्रभृतिदेवगणानां शिवस्तवः। विष्णूपदेशेन देवगणानां कोटिशिवमन्त्रजापः शिवस्तवश्च। देवमयरथारोहणे शिवकर्तृक त्रिपुरनाशः। देवगणानां वरलाभश्च। हरिकर्तृक लिङ्गार्चन फलकथनम्। अधिकारानुसारेण देवेभ्यस्तैजसादि लिङ्गदानम्। शिवपूजाविधि कथनम्। आह्निककर्तव्य शिवपूजाविधिः। षोडशोपचारेण साम्बशिवपूजा। धान्यादिभिः शिवपूजायाः फलविशेषकथनम्। जानकी शापेन केतकी पुष्पेण शिवपूजायानिषेधः रामचरित्र कीर्तनञ्च। चम्पक पुष्पस्य शिवपूजार्थं राज्ञोमोहस्तदुत्पादनपूर्वक कृतदुष्कर्माब्राह्मण चम्पकपुष्पयोश्च नारदस्यशापः। गणेशचरित्रम्। गणेशकर्तृक शिवगणानांपराजयः शिवकर्तृक गणेशशिरश्छेदनञ्च। शिरश्छेदनेन देव्याःक्रोधः महादेवस्य च गणपतेः प्राणदानं गाणपत्यप्रदानञ्च। कार्त्तिक गणेशयोर्विवादः गणेशस्य जयलाभश्च। गणेशस्य विवाहस्तच्छ्रुत्वा कार्त्तिकस्यक्रोधः क्रौञ्चपर्वतगमनञ्च। रुद्राक्षधारणमहात्म्यकथनम्। प्रधानज्योर्लिङ्गोपलिङ्गानां नामस्थान कथनम्। नन्दिकेशतीर्थमाहात्म्ये गोवत्ससंवादादिः। नन्दिकेश तीर्थमाहात्म्यकथनम्। अत्रीश्वरलिङ्गमाहात्म्यकथनम्। ज्योतिर्लिंगादीनां समस्त वस्तूनां माहात्म्यकथनम्

शिवलिंगमाहात्म्य कथनञ्च। अश्वकेश्वर वर्णनप्रसंगेऽश्वकमर्दन कथनम्। शिवरात्रिव्रत संशय हेतुदधीचितनयानां दोषकथनम्। सोमेश्वरकथा ज्योतिर्लिंगोत्पत्तिकथनञ्च। महाकालोंकारेश्वरयोरुत्पत्तिः। केदारेश्वरप्रसङ्गः। भीमशङ्कर प्रादुर्भावः। विश्वेश्वरस्य माहात्म्यम् गौरींप्रति शिवस्य काशीमाहात्म्यकथनम्। गोपेश्वरमाहात्म्य कथनम्। काशीमरणान्मोक्षप्राप्तेः शङ्कानिवारणम्। गौतमस्य तपस्यातत्क्षेत्रकथनञ्च। गणेशपूजनं गौतमचरित्रञ्च। गौतमप्रशंसा, गंगास्थितिः कुशावर्तमाहात्म्यं त्र्यम्बकमाहात्म्यञ्च। रावणस्यतपस्या माहात्म्यम्, वैद्यनाथस्योत्पत्तिः। रामेश्वर माहात्म्ये नागेशमाहात्म्यञ्च। घुस्मेश्वर माहात्म्यञ्च, वराहरूपेण हिरण्याक्षवधः प्रह्लादचरित्रञ्च। प्रह्लादहिरण्य कशिपू प्रस्तावः। हिरण्यकशिपुवधः नृसिंहचरित्रञ्च। नल जन्मान्तर कथा। पाण्डवगण कर्तृक दुर्वाससः प्रीत्युत्पादनम्। व्यासादेशेन इन्द्रकील पर्वते अर्जुनस्यतपः इन्द्रसमागमश्च। भिल्लरूपस्य शिवस्यागमनञ्च। भिल्लवेषधारि शिवस्यअर्जुनेन सह युद्धः। अर्जुनस्य वरदानम्। पार्थिवशिवपूजाविधिः। बिल्वेश्वरमाहात्म्यम्। विष्णुकर्तृक सहस्रकमलशिवपूजा। शिवकृपया सुदर्शनचक्र लाभः। शिवसहस्रनाम वर्णनम्। विष्णुप्रभृतीन् शिवस्य शिवरात्रिव्रत कथनम्। शिवरात्रिव्रतस्योद्यापनविधिः। व्याधस्येतिहास कथनम्। अज्ञानेन कृतस्य शिवरात्रिव्रतस्य प्रशंसा। शिवरात्रिव्रतकरणेन पापिनो वेदनिधे मुक्तिः। चतुर्विध मुक्तिवर्णनम्। शिवकर्तृक विष्णुप्रभृतीनामुत्पत्ति कथनम्। एकमात्रभक्तिसाधनेन शिवभक्तेर्लाभकथनम्।

विद्येश्वर संहितायाम्—

साध्यसाधन निरूपणम्। मननादि स्वरूपवर्णनम्। श्रवणाद्यशक्तव्यक्तीनां लिङ्गपूजनसाधनकथनम्। ब्रह्मविष्ण्वोः युद्धं दृष्ट्वा शिवसमीपे देवतानां गमनम्। ज्योतिर्मयलिङ्गप्रादुर्भावस्तद् दृष्ट्वा ब्रह्म विष्ण्वो विवाद शान्तिः। भैरवकर्तृक ब्रह्मणः शिरश्छेदनं। ब्रह्माणंप्रति शिवस्यानुग्रहः। ब्रह्मविष्णु कृताशिव पूजा लिंगनिर्माणं लिंगप्रतिष्ठा। लिंगपूजायाः नियम कथनम्। शिवतीर्थ सेवामाहात्म्यम्। विप्रादि सदाचारस्य नित्यकृत्यता। पञ्चमहायज्ञकथनम्। दिनविशेषे देवपूजायाः कर्तव्यताकथनम्। देशकालादि विशेषे पूजाफल कथनम्। पार्थिव प्रतिमा पूजाविधिः। प्रणवमाहात्म्यं। शिव भक्तपूजाकथनम्। षड्लिंग माहात्म्यम्। बन्धनमुक्त्याः स्वरूपकथनम्। लिंगक्रमकथनम्।

कैलाश संहितायाम् :—

वाराणसीधाम्नि सूतकर्तृक मुनीनां निकटे प्रणवार्थ कथनारम्भः। कैलाशधाम्नि देवीकृता शिवं प्रति प्रणवार्थ जिज्ञासा। प्रणवोक्ता मन्त्रदीक्षादि कथनम्। प्रणवोद्धारः, विविध पूजा एवं न्यासान्तरादि विधिः।

कार्तिकेयं प्रति वामदेव ऋषेः प्रणवस्य कृते प्रश्नः। कुमार कर्तृकं वामदेवं प्रति प्रणवोपासना कथनम्। षड्विधार्थ परिज्ञानं। विस्तृत प्रणवार्थ कला तन्त्रादि विवर्ण कथनम्।

सनत्कुमार संहितायाम् :—

नैमिषारण्ये सनत्कुमारस्यागमनम्। व्यासादिभिर्मिलनम्। शिवपूजा विषये ऋषीणां प्रश्नः। सनत्कुमारस्य पृथ्व्यादेः संस्थानक्रमप्रभृतीनां कथनम्। प्रकृतितः महदादिक्रमेण जगतः सृष्टिः सप्तद्वीपवर्णनञ्च। नरकादि वर्णनम्। ऊर्द्ध्वलोक योग-माहात्म्यकथनम्। सविस्तरं रुद्रमाहात्म्यं, पञ्चमूर्ति कथनम्। रुद्रकीर्तन फलम्। रुद्रस्तवः। सनत्कुमारस्य चरित्रम्।परमसि-द्धिश्च। शिवसर्वज्ञादि कथनम्। रुद्रलोक ब्रह्मलोक विष्णुलोकानां कथनम्। रुद्रस्थानस्य सर्व श्रेष्ठत्व कथनम्। विभीषण महेश्वर संवादः। लिङ्ग पूजा शिवनाम कीर्तनफलञ्च। स्थान माहा-त्म्य कथनम्। ब्रह्म विष्णु महेश्वराणां मध्ये कस्य ज्येष्ठत्वम् इति व्यास प्रश्ने सनत्कुमार समुत्तरदानं शिव लिङ्ग माहात्म्यादि कथनञ्च। लिङ्गस्थापनं शिवशक्त्योः पूजनविधिः शिव पूजायां पुष्पनिरूपणम्। अनशन विधिः। शिवप्रीतिकरः धर्मस्य संक्षिप्त उपदेशः। लक्ष्मणाष्टमीव्रतकथनञ्च। अन्न-दान माहात्म्यं भिन्न २ दानानां प्रशंसा च। विविध धर्मकार्याणा-मुपदेशः। सविस्तरं नियमफलकथनम्। पार्वत्याः शिवस्य शिरसि चन्द्रधारणे विषभक्षण विषये च प्रश्नः। भस्म प्रशंसा भस्म धारणस्य फल कथनम्। शिवस्य श्मशानवासहेतुः। शिवपूजायाः फलकथनम्। शिवविभूतिकथनम्। शिवस्थान-निर्देशः। प्रणवस्योपासना। प्रणवदेवता कथनम्। ध्यान योग कथनम्। दुर्वाससः महादेवं प्रति पुनर्ध्यान वर्णनम्

तदर्थं काशीवासनिर्देशश्च। वायुनाडिकादि निरूपणम्। ध्यान-निधेः प्रशंसा। प्रणवोपासना निरूपणम्। शरीरस्य सर्वदेव-मयत्व कथनम्। नाड़ी विस्तार कथनम्। हरपार्वतीसंवादः काशीमाहात्म्य कथनञ्च। मधूकस्योपाख्यानम्। सपुत्रस्यप्रताप-मुकुटराज्ञ ओंकारेश्वर दर्शनम्। ओंकारस्तवः। नन्दीश्वरस्य तपस्या। नन्दिनं प्रति शिवस्य वरदानम्। महादेवस्य स्मरणम्। देवानामागमनम्। शिवस्यादेशेन देवानां नन्दिनः गाणत्या-भिषेककरणम्। नन्दिनःस्तवः नन्दिविवाहश्च। नीलकण्ठमाहात्म्यं, स्तोत्रञ्च, त्रिपुरवृत्तान्तम्। देवानांदुःखंदृष्ट्वा महादेवस्य सन्तोषः। त्रिपुरनाशस्योद्योगः। त्रिपुरदाहः। पार्वत्याः प्रश्नः। शिवस्य ब्रह्मणश्च माहात्म्य कीर्तनम्। पाशुपतयोगः। देहस्थनाडीनां विवर्णम्। विमलज्ञानेन ईश्वरपदप्राप्तिः। शिवस्थितिलोक-कथनम्।

वायवीय संहितायाम्—

महादेवकृपया श्रीकृष्णस्य पुत्रलाभ कथनम्। वेदादि-व्यवस्था। पुराण संख्या कथनम्। ब्रह्मणोनिकटे ऋषीणां शिवतत्त्व कथनम्। ब्रह्मण आदेशेन नैमिषारण्ये यज्ञार्थं गमनम्। नैमिषारण्ये ऋषीन्प्रतिवायोः कुशलप्रश्नोक्तिः। शिवतत्त्वम् मायास्वरूपकथनञ्च। शिवस्य कालरूपत्वप्रकटनम्। सविस्तरं-कालमान कथनम्। प्रकृतिसृष्टि कथनम्। ब्रह्मकर्तृक वराहरूपे ब्रह्मण जगद्व्यवस्थापनम्। शिवप्रसादाद्ब्राह्मणः सृष्टिकरणम्।

ब्रह्म विष्णु महेश्वराणां परस्परं वशवर्त्तित्वम्। ब्रह्मणश्च महादेवादुत्पत्ति कथनम्। ब्रह्माणं प्रतिसृष्टिकरणार्थं रुद्रस्यादेशः। प्रजावृद्ध्यर्थं ब्रह्मण अर्धनारीश्वरप्रसादनम्। रुद्रकर्तृकस्त्रियाः सृष्टिः मैथुनसृष्टिश्च। दक्षयज्ञ कथनम् देव्याश्च देहत्यागः। वीरभद्रनिरूपणम्। काल्याःसृष्टिः। दक्षयज्ञनाशः। वीरभद्रस्य शिवनिकटे देवानयनम्। दक्षस्य छागमुखता च। व्याघ्रं प्रतिपार्वत्या अनुग्रहः। शिवसमीपे देव्यागमनम् व्याघ्रस्य सोमनंदी नाम करणञ्च। देव्याः समीपे शिवकर्तृक अग्निष्टोमात्मक विश्वप्रपञ्च कथनम्। त्रिविध शब्दार्थ कथनम्। जगतः शब्दरूपित्वकीर्तनम्। महर्षीणां शिव शक्त्योः कीर्तनम्। नास्तिकताविनाशाय तयोर्जन्म। वायुना सविस्तरं शिवतत्वकथनम् मुक्त्यर्थं ज्ञानस्यचोपदेशः। पाशुपत योगे मुक्तिलाभकथनम्। पाशुपतव्रतकथनं भस्ममाहात्म्य कथनञ्च। दुग्धप्राप्त्यर्थमुपमन्योः महादेवस्य प्रसादेन दुग्धसमुद्रप्राप्तिः।

उत्तर भागे :—

श्वेतकल्पे प्रयागे मुनिगणैर्जिज्ञासितं प्रश्नं प्रति सूतस्य वायुकथित शिवमाहात्म्यकथनरूपमुत्तरम्। श्रीकृष्णम्प्रति उपमन्योः पाशुपत ज्ञानकथनम्। सुरेन्द्रादि परीक्षा। ब्रह्मविष्णु प्रभृतभिः शिवस्वरूप कथनम्। श्रीपुरुषात्मक उमामहेश्वरयोर्जगत्प्रपञ्चकत्वकथनम्। परब्रह्मापरब्रह्मणोरैकत्व कथनम्। महादेवस्य अप्राकृतरूपस्य प्रणवात्मकत्वकथनं प्रणवस्वरूप कथनञ्च। भक्त्यादि द्वारा मानवानां शिवप्राप्तियोग्यता। ब्रह्मादिदेवान् देवीम्प्रति च शिवस्य वेदसार ज्ञानोपदेशः। शिवावतारस्य कल्प-

योगेश्वरस्य च कथनम् शिवपञ्चाक्षर मन्त्रस्वरूपम् माहात्म्यञ्च। शैवमन्त्रस्वरूपस्य कथा। दीक्षाप्रयोगः। षडध्वशुद्धिप्रभृतिकथनम्। शिवज्ञानः शिवमन्त्रस्य च साधनविधिः। आचार्यत्वसिद्धे-रभिषेकादीनां संस्काराणाञ्च कथनम्। शैवादीनामाह्निक कर्म कथनम्। अन्तर्याग बहिर्याग कथनक्रमश्च। नानाविधानेषु हर-पार्वत्योः पूजा विधिः। होमकुण्डानां परिमाणादीनां निर्णयः। मासादि विशेषेषु नैमित्तिक शिवपूजा कथनम्। काम्यशिवपूजा कथनम्। शिवस्तोत्रम् प्रकारान्तरेण लिङ्ग पूजा च। शिवपूजाफले ब्रह्मादीनां स्वीयस्वीय पदप्राप्तिः। ब्रह्मविष्णोः लिङ्गदर्शनम्। शिवप्रतिष्ठा शिवप्रोक्षणविधिश्च। योगोपदेशः। मुनीनां समीपे शिवचरित पूर्वक वायोरन्तर्धानम्। यज्ञ समाप्तौ ब्रह्मणो निकटे मुनीनामागमनम्। ब्रह्मण आदेशेन सुमेरु पर्वते सनत्कुमार समीपे मुनीनामागमनम्। नन्दिसमागमः। नन्दिकर्तृक शिवकथा वर्णनम्।

धर्मसंहितायाम् :—

शिवमाहात्म्यनिरूपणम्। उपमन्योः समीपे श्रीकृष्णस्य शिवमन्त्रे दीक्षाग्रहणम्। रुरुदैत्य वधः। गोपीप्रभृति रूप महादेवेन सह अप्सरसां विहारः। उषाऽनिरुद्धयोःसमागमः। बाणराज्ञोयुद्धादि कथनम्। काल्यास्तपस्या, आडीदैत्यवृत्तान्तः। वीरकस्य नन्दिरूपेण जन्म कारणम्। शिवस्य कामाचारो लिङ्गोद्भवकथा च। शक्रादीनां कामकिंकरत्वकथनम्। महात्मनां कामक्षोभः। विश्वामित्र प्रभृतीनां कामवश्यता कथनम्। श्रीरामस्य कामाधीनत्व कथनम्।

नित्यनैमित्तिक शिव पूजाविधिः। शङ्करक्रियायोगस्तत्फलञ्च। शिवभक्त पूजा तत्फलञ्च। विविधपाप कथनम् पापफलानि च। धर्म्मप्रसङ्गः। अन्नदानविधिः। जलदान माहात्म्यम्। पुराण पाठस्य माहात्म्यम् धर्म्मश्रवण माहात्म्यञ्च। महादानकथनम्। सुवर्ण पृथिवी दानम्। कान्तारहस्ति दानम्। एकदिनस्याराधनेनैव शङ्करस्य कृपा। शिव सहस्रनाम वर्णनम् धर्म्मोपदेशस्तुलापुरुषदानञ्च। परशुरामस्य तुलापुरुषदानम्। ब्रह्मणः प्रसङ्गः। नरकादिकीर्त्तनम्। द्वीपादिकथनम्। भारतवर्षादिकथनम्। ग्रहादीनांकथा मृत्युञ्जयोद्धारश्च। मन्त्रराजप्रभाव कीर्त्तनम्। पञ्चब्रह्मकथनं पञ्चब्रह्मविधानञ्च। तत्पुरुष विधानम्। अघोरकल्प वामदेवकल्प सद्योजातकल्पादिकथनम्। संसार कथा स्त्रीस्वभावादिकथनञ्च। अरुन्धतीदेवानांसम्वादः। विवाहकथा। मृत्युचिन्हस्य आयुषःप्रमाणम्। कालजयः। छाया पुरुषलक्षणम्। धार्मिकाणां गतिर्लिङ्गपूजायाः कारणञ्च। विष्णुकृतः शिवस्तवः लिङ्ग पूजायाः फलञ्च। सृष्टि कथनम्। प्रजापतिकृत सृष्टिकथनम्। पृथु राज्ञः पूजायाः कथा। देवदानवादीनां सृष्टि विस्तारः। आधिपत्यनिर्णयः। पृथु चरित वर्णनम्। मन्वन्तरादिवर्णनम्। सञ्ज्ञाछायादीनांकथनम्। सूर्यवंशवर्णनम्। सत्यव्रत सगर राज्ञोश्च विवरणकथनम् पितृकल्पस्यश्राद्धस्य च कथा, पितृसप्तकवर्णनम्। मुनीनांजात्यन्तरप्राप्तिः। साधुसङ्गेन मुनिसप्तकस्य सद्गति लाभः। व्यासपूजा।

विधान सहितं सम्यक् पुराणंफलदंश्रुतम्।
तस्माद्विधानयुक्तन्तु पुराणं फलमुत्तमम्॥

भागवतम्

तत्प्रतिपादित विषयाश्च

प्रथमस्कन्धे :—

देवीभागवतस्य महापुराणत्वादि सिद्धान्त निर्णयः। ग्रन्थारम्भमंगलम्, ऋषीणां पुराणविषयप्रश्नः ग्रन्थ सङ्ख्या विषयश्च। ससंख्याक पुराणाख्या तत्तद्युगीय व्यासानुकथनञ्च। देवीसर्वोत्तमेति कथनं प्रसङ्गतः शुकजन्म च। देव्या महोत्कर्षः। मधुकैटभयोर्युद्धोद्योगः। ब्रह्मणा मधुकैटभभीतेन पराम्बिकायाःस्तुतिः। आराध्यनिर्णयः। देवीप्रसादान्मधुकैटभयोर्हरिणावधः। शिवस्यवरदानम्। बुधोत्पत्तिः। पुरूरवस उत्पत्तिः। पुरुरवसउर्वश्याश्चचरितम्। शुकस्योत्पत्ति। शुकवैराग्यम्। शुकायैतत्पुराणोपदेशः। जनकस्य परीक्षार्थं शुकस्य मिथिलागमनम्। शुकायजनकोपदेशः। शुकस्य विवाहादिकम्। शुकनिर्गमनोत्तरंव्यासकृत्योपवर्णनम्।

द्वितीयस्कन्धे :—

व्यासजन्मवृत्तान्तवर्णनम्। पराशराद्दासकन्योदरे व्यासस्यजन्म। शन्तनोःसत्यवत्या गङ्गया च सह विवाहःवसूनामुत्पत्तिश्च। शन्तनुना सत्यवत्या वरणम्। व्यासात् पुत्रत्रयोत्पत्तिः पाण्डवोत्पत्तिश्च। पाण्डवानां कथानकं मृतानां दर्शनञ्च। यदुकुलस्य-

नाशः उत्तरासूनोर्वृत्तञ्च। रुरुपुरावृत्त कथनपूर्वको गुप्तगृहे राज्ञोवासः। तक्षक द्विजयोः सम्भाषणं तक्षकेण राज्ञोदंशनञ्च सर्पसत्राय बद्धपरिकरस्य जनमेजयस्यास्तीकेन निवारणम्। आस्तीकस्योद्‌भवो भागवतमाहात्म्यञ्च।

तृतीय स्कन्धे :—

भुवनेश्वरीनिर्णयः। विमानेन ब्रह्मादीनां गतिः। विमानस्थैर्हरादिभिर्देवी दर्शनम्। विष्णुनाकृतं देवीस्तोत्रं तदूर्ध्वं हरस्तुतिर्ब्रह्मस्तुतिश्च। ब्रह्मणे श्रीदेव्या उपदेशः। तत्वनिरूपणम्। गुणानां रूपसंस्थानादि। पुनरपिगुणानां लक्षणमधिकृत्य नारद प्रश्नः। सत्यव्रतकथा। वाग्बीजोच्चारणात् सत्यव्रतस्य सिद्धिलाभः। अंबायज्ञविधिः। अम्बिकामखस्य विष्णुनानुष्ठानम्। राजप्रश्नोत्तरं वैभववर्णनञ्च। युधाजिद्वीरसेनयोर्दौहित्रार्थयुद्धम्। युधाजितः सुदर्शनजिघांसया भरद्वाजाश्रमं प्रति गमनम्। विश्वामित्रकथोत्तरं राजपुत्रस्य कामबीजप्राप्तिः काशीराजस्य स्वसुता विवाहोद्योगः। सुदर्शनेन सह राज्ञां स्वयम्वरागमनम्। राजसंवाद निवृत्तिपूर्वकं कन्याबोधः। राज्ञांकोलाहले कन्यासम्मतस्य राज्ञःस्थानम्। सुदर्शनविवाहः सुबाहोः कन्याया विवाहश्च। महारणेशत्रूणां देव्या व्यापादनम्। देवी महिमा काश्यां दुर्गावासश्च। अंबिका तोषणं तत्पुरे देवीस्थापनञ्च। नवरात्रविधे र्नृपाय व्यासेन कथनम्। कुमारिकाकथनम्। रामायणकथा प्रश्नः। रामशोकः। नारदेनव्रतकथनम्।

चतुर्थ स्कन्धे :—

कृष्णावतार प्रश्नः। कर्मणोजन्मादिकारणत्वनिरूपणम्। अदितेः शापकथनम्। अधमजगतः स्थितिः। नारायणकथा। नराग्रजेनोर्वशीसृष्टिः। अहंकारावर्तनम्। प्रह्लादनारायणोः समागमः प्रह्लाद नारायणोर्युद्धम्। हरये भृगुणाशापदानम्। शुक्रस्य मन्त्रलाभार्थं गमनं शुक्रमातुर्वधश्च। भृगुणा शुक्रमातुरुज्जीवनम्। जयन्त्या शुक्रसेवार्थं प्रेषणम्। शुक्ररूपेण देवानां गुरुणा दैत्यवञ्चना। दैत्यानां शुक्र सम्प्राप्तिः। देवदानवयोर्युद्ध शान्तिः। हरेर्नानावताराः। सुरांगनानां नारायणाश्रमे गमनम्। दुष्टराजभाराक्रान्ताया मेदिन्या ब्रह्माणं प्रति गमनम्। देवैःशक्तिस्तवनम्। वासुदेवांशावतारकथा। देवक्याः सप्तानां पुत्राणांवधः। देवानामंशावतारणम्। कृष्णजन्मकथनम्। कृष्णकथा। पराशक्तेः सर्वज्ञत्वकथनम्।

पञ्चम स्कन्धे :—

विष्णोरपेक्षया रुद्रस्य श्रेष्ठत्वम्। देवीमाहात्म्यवर्णनम् महिषोत्पत्तिः। देवेन्द्रेण सह समरोद्योगः। देवानां संसदि विमर्शः। देवसेनापराजयः। देवदानवयुद्धम्। पराभूतानां देवानां कैलासगमनम्। जगदम्बायाः पलाशसमिधांज्वालनयोत्पत्ति कथनम्। देवैर्महायुधैर्देव्यर्चनम्। रक्तदूतसंवादकीर्तनम्। महिषासुरसंसदि विमृश्यानाम्नोदूतस्यप्रेषणम्। ताम्रस्यागमनोत्तरं बाष्कल दुर्मुखयोः प्रेषणम्। बाष्कलदुर्मुखयोर्वधः। ताम्रचिक्षुरयोर्देव्यावधः। महारणेऽसिलोमादीनां निधनम्। महिषासुरस्य

देव्या संवादः। [illegible] कथानकम्। महिषस्यवधः। देवैःकृत-महादेवीस्तुतिः अन्तर्धानोत्तरं वृत्तकथनम्। शुम्भासुरकथा। परादेव्याः सुरकार्यार्थं प्रादुर्भावः। कौशिकीति प्रसिद्धाया देव्या-गिरौप्रादुर्भावः। दूतसंवादकीर्तनम्। धूम्रलोचनवधः। चण्ड-मुण्डयोः श्रीदेव्यासहयुद्धम्। रक्तबीजयुद्धम्। रक्तबीजवधः शुम्भस्य युद्धस्यविस्तारः। शुंभस्ययुद्धोद्योगः। निशुंभवधः। शुंभासुरवधाश्रितकथा। राजवैश्योश्चरित्रत्रय सेवकयोर्वार्ता। भुवनसुन्दर्या राज्ञेकथनम्। राज्ञे तापसोपदेशः। राजवैश्ययोर्देव्याः प्रत्यक्षदर्शनम्।

षष्ठ स्कन्धे :—

वृत्रदैत्यवधकथारम्भः। त्रिशिरोवधवर्णनम्। प्रिश्राज्ञया-वृत्रस्य तपोर्थंवनगमनम्। वृत्रेण वरगर्वेण पराभूतानां देवानां शंकरसमीपेगमनम्। देवीस्तुत्या देवैर्वरप्रापणम्। वृत्यदैत्यवधा-श्रिता कथा। वासवस्य गुप्तवासो नहुषस्य चेन्द्रपदेऽभिषेकः। नहुषेण प्रार्थितायाः शच्याश्चिंतता, देवीप्रसादतस्तस्या इन्द्रदर्शनम्। नहुषस्याधःपातः त्रिविधस्य कर्मणो रूपकथनम्। युगोद्भवानां धर्माणां कथनं सदसद्धर्मविनिर्णयश्च। आडीबकमहायुद्धस्य-तीर्थयात्रा प्रसङ्गत उपवर्णनम् शुनःशेपकथान्ते युद्धस्यस्मरणम्। वसिष्ठस्य मित्रावरुणापत्यत्वविस्तरः। निमेर्देहान्तरेगतिः हैहया-नां कथा। हैहयेन भार्गवाणांवधः। देवीकृपया भृगुवंशस्तुतिः। हैहयस्यकथा। हरेरश्विन्यां जन्म। हयीजातस्य हरेः कथानकम्। एकवीराभिषेचनोद्भववृत्तकथनम्। एकावल्याः कथानकम्।

हैहयभूभृतः कालकेतुना महायुद्धम्। विक्षेपशक्ति कथनम्। व्यासेन स्वमोहोपपादनम्। नारदेनापि तथाकरणम्। नारदस्य विवाहः। पुनरपि तस्यैव विस्तारः। स्त्रीभावं गतस्यनारदस्य पुनःपुरुषत्वप्राप्तिः। हरिणा महामाया प्रभावकथनम्। भगवती-ध्यानादिकम्।

सप्तम स्कन्धे :—

सूर्य सोमोद्भवानां कथारम्भः। तदन्वयस्यविस्तारः। सुकन्यकाया च्यवनाय प्रदानम्। सुकन्या देवभिषजोः सम्वादः। रविपुत्रप्रसादजा च्यवनस्य युवावस्था। शर्यातेर्यज्ञकरणम्। तत्राश्विनोःसोमपानम्। तद्वंशकथनम्। ककुत्स्थादीनामुत्पत्तिः। सत्यव्रतकथा। त्रिशङ्कोः कथानकम्। त्रिशङ्कोः स्वर्गवासः। हरिश्चन्द्रेनृपे सतित्रिशङ्कोर्विश्वामित्रेण समागमः। हरिश्चन्द्र-कथा। राज्ञःपुत्रोत्सवः। शुनःशेपवधाश्रयाकथा। विश्वा-मित्रेण शुनःशेपस्य मोचनम्। हरिश्चन्द्रेण विश्वामित्रवैरम्। हरिश्चन्द्रस्य राज्यविध्वंसः। नृपस्य दक्षिणा दानयत्नः। तत्कृतः शोकः। हरिश्चन्द्रेणात्मविक्रयः। चाण्डालेन हरिश्चन्द्रक्रयः। हरिश्चद्रस्य चाण्डालगृहेऽवस्थानम्। भूभृतःपुत्रभार्याकथा। पत्नीमभिज्ञाय हरिश्चन्द्रस्य शोकः। हरिश्चन्द्रस्य स्वर्गवासः। शताक्षो महिमा। राजवार्तायाः प्रश्नः। गौरीजन्म नानापीठो-द्भवश्च। पार्वत्या हिमालयाज्जन्म। आत्मतत्त्वनिरूपणम्। विश्वरूपदर्शनम्। ज्ञानस्य मोक्षार्थत्वम्। मन्त्रसिद्धेःसाधनम्।

ब्रह्मतत्त्वम्। भक्तिमहिमा। देव्या महोत्सवव्रतानि स्थानानि च। भगवती पूजनम्। ब्रह्मपूजा विधानम्।

अष्टमस्कन्धे :—

मनवे देव्या वरदानम्। वराहेण धरोद्धरणम्। मनुवंशवर्णनम्। प्रियव्रतकथानकम्। भूमण्डलस्य विस्तारः। देवीवर्णनं देव्युपास्तिश्च। मूलादूर्ध्वमहार्यवर्णनम्। इलावृत्तवर्णनम्। वर्षान्तर्गत सेव्यसेवकत्वकथनम्। तत्र सेव्यसेवकरूपाणां वर्णनम्। वर्षान्तरे क्रमप्राप्ता सेव्यसेवकता। द्वीपान्तरसमाचारः। शिष्टद्वीप समाचारः। लोकालोकगिरिव्यवस्था। रवेर्गमनमांद्यादिप्रकारः। सोमादीनां गत्यनुसारेण विविधं फलम्। ध्रुवमण्डलसंस्थानम्। राहुमण्डल सूर्यचन्द्रोपरागश्च। तलादेर्वर्णनम्। तलातलस्थितिः। नरकस्वरूपम्। पातकोपपादनम्। शिष्टानां नरकाणां वर्णनम्। देव्याराधनम्।

नवमस्कन्धे :—

संक्षेपेण शक्तिवर्णनम्। पंचप्रकृतिसंभवः। देवतादिसृष्टिः। सरस्वतीस्तोत्र पूजादि। धर्मात्मजेन नारदाय सरस्वती महास्तोत्र कथनम्। लक्ष्मीगंगा भारतीनां जन्म पृथ्वीलोके। तासां शापोद्धारप्रकारः। गङ्गादीनां समुत्पत्तिः कलौ वर्त्तनञ्च। शक्त्युत्पत्तिप्रसङ्गतोभूमिशक्तेःसमुत्पत्तिः। धरादेव्या अपराधेकृतेसति-नरकादि फलप्राप्तिकथनम्। गङ्गोत्पत्तिः। राधाकृष्णाऽङ्ग-संभवाया गङ्गाया गोलोके समुत्पत्तिः। जाह्नवी नारायणप्रिया-

अस्तीति कथनम्। ब्रह्माविष्ण्वोः परस्पर सम्बन्धकथनम्। तुलस्युपाख्यानप्रश्नः। महालक्ष्म्या राजगृहे जन्म। धर्मध्वज-सुतायास्तुलस्याःकथा। शङ्खचूडेनतुलस्याः सङ्गतिः संवादश्च। तयोर्विवाहानन्तरं देवानां वैकुण्ठगमनम्। शङ्खचूडस्य देवैः सह संग्रामः। शङ्खचूडमहेशयोर्युद्धम्। युद्धारम्भः। जनार्दनेन शङ्ख-चूडस्यकवचहरणम्। तुलसीसंगमवर्णनंतन्माहात्म्यञ्च। महामन्त्र सहितं तुलसीपूजनम्। सावित्र्याख्यानम्। तस्या राजोदरेजन्म। अध्यात्मप्रश्नः। स्नानधर्म फलम्। नानादान फलम्। सावित्र्यै-मूलशक्ति महामन्त्रदानम्। पातकानां फलानि। कुण्डेषु ये पतन्ति तेषां लक्षणम्। अवशिष्टानां कुण्डानां कथनम्। पुनरपि शिष्टानां कुण्डानां कथनम्। देवीभक्त्या यमपुरीत्रयनाश कथनम्। कुण्डानां लक्षणम्। देवीमहोत्कर्षः। महालक्ष्म्याख्यानम्। लक्ष्मी-जन्मादेर्नारदाय कथनम्। शक्रस्य ब्रह्मलोकं प्रति गमनम्। महालक्ष्म्यर्चनक्रमादि। स्वाहाशक्तेरुपाख्यानम्। स्वधायाः-समुपाख्यानम्। दक्षिणाया उपाख्यानम्। षष्ठी देव्याउपाख्यानम्। मंगलचण्ड्याः कथा। मनसायाः कथास्तोत्रादि। सुरभ्याख्यानम्। राधाया दुर्गायाश्च चरित्रम्।

दशमस्कन्धे :—

मनोःस्वायम्भुवस्याख्यानम्। भगवत्या विन्ध्याद्रिगमनम्। विन्ध्येन भानुमार्गनिरोधः। वृषध्वजस्तुतिस्तस्मै वृत्तान्तकथनञ्च। महाविष्णुस्तोत्रम्। अगस्त्येन देवी प्रार्थनातोविन्ध्याद्रेर्वृद्धि कुण्ठनम्। मुनिना विन्ध्यवृद्धिकुण्ठनम्। स्वारोचिषस्य मनोः कथा।

चाक्षुषस्य मनोः कथा। सावर्णेर्मनोः कथा। महाकालीचरितम्। महालक्ष्मीमहासरस्वत्योश्चरितम्। नवमादि मनूनां चरित्र वर्णनम्।

एकादशस्कन्धे :—

प्रातःकृत्यम्। शौचादि विधिः। स्नानादि विधिः रुद्राक्ष धारण महिमा च। रुद्राक्षाणां बहुविधत्व कथनम्। जपमाला विधानम्। रुद्राक्ष महिमा। एकवक्त्रादि रुद्राक्षाणां वर्णनम्। भूत शुद्धिः। शिरोव्रतविधानम्। गौण भस्मादि वर्णनम्। तस्य त्रिविधत्वं माहात्म्यञ्च। भस्म धारण विस्तरः। भस्मनो-महिमा। विभूति धारण माहात्म्यम्। त्रिपुंड्रोर्ध्व पुण्ड्रयोर्महिमा। सन्ध्योपासनम्। सन्ध्यादि कृत्यम्। पूर्णोपचारादि कथनम्। मध्याह्न संध्या करणम्। ब्रह्मयज्ञादिकम्। गायत्री पुरश्चरणम्। वैश्वदेवादिकम्। भोजनान्ते करणीयं तप्तकृच्छ्रादि लक्षणञ्च। काम्यकर्म संग्रहणं प्रायश्चित्तविधानञ्च।

द्वादशस्कन्धे :—

गायत्र्या ऋष्यादि कथनम्। वर्णानां शक्त्यादि। जगन्मातुः कवचम्। गायत्री हृदयम्। गायत्री स्तोत्रम्। गायत्री नाम सहस्रम्। दीक्षा विधिः। केनोपनिषत्कथा। गौतम शापेन ब्राह्मणानामन्यदेवतोपासनश्रद्धा। द्वीप वर्णनम्। पद्मरागादि निर्मित प्राकार वर्णनम्। चिन्तामणि गृह वर्णनम्। जनमेजयेन देवी मखकरणम्। उपसंहारः पुराण फलदर्शनञ्च।

भविष्यपुराणम्

तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च नारदीय पुराणे ४ पा० १०० अ०

उक्ता यथा :—

अथ ते सम्प्रवक्ष्यामि पुराणंसर्वसिद्धिदम् ।
भविष्यं भवतः सर्वलोकाभीष्टप्रदायकम् ॥
तत्राहं सर्वदेवानामादिकर्त्ता समुद्यतः ।
सृष्ट्यर्थं तत्र सञ्जातोमनुः स्वायम्भुवःपुरा ॥
स मां प्रणम्यपप्रच्छ धर्मं सर्वार्थसाधकम् ।
अहं तस्मै तदाप्रीतः प्रावोचं धर्मसंहिताम् ॥
पुराणानां यदाव्यासो व्यासञ्चक्रेमहामतिः ।
तदा तां संहितां सर्वां पञ्चधा व्यभजन्मुनिः ॥
अघोरकल्पवृत्तान्तनानाश्चर्यकथाचिताम् ।"

तत्र प्रथम पर्वणि :—

"तत्रादिमं स्मृतं पर्व ब्राह्मं यत्रास्त्युपक्रमः ।
सूतशौनकसम्वादे पुराणप्रश्न संक्रमः ।
आदित्य चरितः प्रायः सर्वाख्यान समाचितः ।
सृष्ट्यादि लक्षणोपेतः शास्त्रसर्वस्वरूपकः ।
पुस्तलेखकलेखानां लक्षणञ्च ततःपरम् ।

संस्काराणाञ्च सर्वेषां लक्षणञ्चात्रकीर्तितम् ।
पक्षत्यादितिथीनाञ्च कल्पाः सप्त च कीर्तिताः ।
अष्टमाद्याः शेषकल्पा वैष्णवेपर्वणि स्मृताः ।
शैवे च कामतोभिन्ना सौरेचान्त्यकथाचयः ।
प्रतिसर्गाव्हयं पश्चान्नानाख्यानसमाचितम् ।
पुराणस्योपसंहारः सहितं पर्व पञ्चमम् ।
एषु पञ्चसु पूर्वस्मिन् ब्रह्मणो महिमाधिकः ।

द्वितीय तृतीय चतुर्थ पञ्चम पर्वसुः—

"धर्मे कामे च मोक्षे तु विष्णोश्चापिशिवस्य च ।
द्वितीये च तृतीये च सौरो वर्ग चतुष्टये ।
प्रतिसर्गाव्हयन्त्वान्त्यं प्रोक्तं सर्वे कथाचितम् ।
एतद्भविष्यं निर्दिष्टं पर्वव्यासेन धीमता ।
चतुर्दशसहस्रं तु पुराणं परिकीर्तितम् ।
भविष्यं सर्वदेवानां साम्यं यत्र प्रकीर्तितम् ।
गुणानां तारतम्येन समं ब्रह्मेति हि श्रुतिः" ।

तत्फलश्रुतिः :—

तल्लिखित्वा तु यो दद्यात्पौष्यां विद्वान्विमत्सरः ।
गुडधेनुयुतं हेम वस्त्रमाल्यविभूषणैः ।
वाचकम्पुस्तकञ्चापि पूजयित्वा विधानतः ।
गन्धाद्यैर्भोज्यभक्ष्यैश्च कृत्वानीराजनादिकम् ।
यो वै जितेन्द्रियो भूत्वा सोपवासः समाहितः ।
अथवा यो नरो भक्त्या कीर्तयेच्छृणुयादपि ।

स मुक्तः पातकैर्घोरैः प्रयाति ब्रह्मणःपदम् ।
योऽप्यनुक्रमणीमेतां भविष्यस्य निरूपिताम् ।
पठेद्वा शृणुयाच्चैतौ भुक्तिं मुक्तिञ्च विन्दतः ।

नारदीय पुराणम्

तद्विषयाश्च :—

"शृणु विप्र ! प्रवक्ष्यामि पुराणं नारदीयकम् ।
पञ्चविंशतिसाहस्रं बृहच्चित्रकथाश्रयम् ॥ १ ॥

तत्रपूर्वभागे प्रथमपादे :—

"सूत शौनक सम्वादः सृष्टि संक्षेप वर्णनम् ।
नानाधर्मकथाः पुण्याः प्रवृत्तेः समुदाहृताः ।
प्राग्भागे प्रथमे पादे सनकेन महात्मना ।"

पूर्वभागे द्वितीयपादे :—

"द्वितीये मोक्षधर्माख्ये मोक्षोपायनिरूपणम् ।
वेदाङ्गानाञ्च कथनं शुकोत्पत्तिश्च विस्तरात् ।
सनन्दनेन गदिता नारदाय महात्मने ।"

पूर्वभागे तृतीयपादे :—

महातन्त्रे समुद्दिष्टं पशुपाशविमोक्षणम् ।
मन्त्राणां शोधनं दीक्षा मन्त्रोद्धारश्च पूजनम् ।

प्रयोगाः कवचंचैव सहस्रं स्तोत्रमेव च।
गणेशसूर्यविष्णूनां शिवशक्त्योरनुक्रमात्।
सनत्कुमार मुनिना नारदाय तृतीयके।"

पूर्वभागे चतुर्थपादे :—

पुराण लक्षणञ्चैव प्रमाणं दानमेव च।
पृथक् पृथक् समुद्दिष्टं दानकाल पुरःसरम्।
चैत्रादि सर्वमासेषु तिथीनां च पृथक् पृथक्।
प्रोक्तम्प्रतिपदादीनां व्रतं सर्वाघनाशनम्।
सनातनेन मुनिना नारदाय चतुर्थके।
पूर्वभागोऽयमुदितो बृहदाख्यान सञ्ज्ञितः।"

तदुत्तरभागे :—

अस्योत्तरेविभागेतु प्रश्न एकादशी व्रते।
वशिष्ठेनाथ सम्वादो मान्धातुः परिकीर्तितः।
रुक्माङ्गद कथापुण्या मोहिन्युत्पत्तिकर्म च।
वसुशापश्च मोहिन्यै पश्चादुद्धरणक्रिया।
गंगा कथा पुण्यतमा गयायात्रानुकीर्त्तनम्।
काश्यामाहात्म्यमतुलम्पुरुषोत्तम वर्णनम्।
यात्रा विधानं क्षेत्रस्य बह्वाख्यानसमन्वितम्।
प्रयागस्याथ माहात्म्यं कुरुक्षेत्रस्यतत्परम्।
हरिद्वारस्य चाख्यानं कामोदाख्यानकन्तथा।
बदरीतीर्थमाहात्म्यं कामाख्यायास्तथैव च।

प्रभासस्य च माहात्म्यं पुराणाख्यानकन्तथा ।
गौतमाख्यानकम् पश्चाद् वेदपादस्तवस्ततः ।
गोकर्णक्षेत्र माहात्म्यं लक्ष्मणाख्यानकं तथा ।
सेतु माहात्म्य कथनं नर्मदातीर्थवर्णनम् ।
अवन्त्याश्चैव माहात्म्यं मथुरायास्ततःपरम् ।
वृन्दावनस्य महिमा वसो र्ब्रह्मान्तिकेगतिः ।
मोहिनीचरितम् पश्चादेवं वै नारदीयकम् ।

तत्फलश्रुतिः :—

यः शृणोति नरोभक्त्या श्रावये द्वासमाहितः ।
स याति ब्रह्मणो धाम नात्र कार्याविचारणा ।
यस्त्वेतदिषपूर्णायां धेनूनां सप्तकाचितम् ।
प्रदद्याद्द्विजवर्याय स लभेन्मोक्षमेव च ।
यश्चानुक्रमणीमेतां नारदीयस्य वर्णयेत् ।
शृणुयाद्वैक चित्तेन सोऽपिस्वर्गगतिंलभेत् ।

मार्कण्डेय पुराणम्

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च नारदपुराणे पूर्वभागे
८७ अ० उक्ता यथा :—

"यत्राधिकृत्य शकुनीन् सर्वधर्म निरूपणम् ।
मार्कण्डेयेन मुनिना जैमिनेः प्राक् समीरितम् ॥

पक्षिणां धर्मसंज्ञानां ततो जन्म निरूपणम् ।
पूर्वजन्मकथा चैषां विक्रिया च दिवस्पतेः ॥
तीर्थयात्रा बलस्यातो द्रौपदेयकथानकम् ।
हरिश्चन्द्रकथा पुण्या युद्धमाडीबकाभिधम् ॥
पितापुत्रसमाख्यानं दत्तात्रेयकथा ततः ।
हैहयस्याथ चरितं महाख्यानसमान्वितम् ॥
मदालसाकथा प्रोक्ता ह्यलर्कचरिताचिता ।
सृष्टिसंकीर्तनं पुण्यं नवधा परिकीर्तितम् ॥
कल्पान्तकालनिर्देशो यक्ष्मसृष्टिनिरूपणम् ।
रुद्रादिसृष्टिरप्युक्ता द्वीपवर्षानुकीर्त्तनम् ॥
मनूनां च कथा नाना कीर्त्तिताः पापहारिकाः ।
तासु दुर्गाकथात्यन्तं पुण्यदा चाष्टमेऽन्तरे ॥
तत्पश्चात्प्रणवोत्पत्तिस्त्रयीतेजः समुद्भवः ।
मार्त्तण्डस्य च जन्माख्या तन्माहात्म्यसमाचिता ॥
वैवस्वतान्वयश्चापि वत्सव्याश्चरितं ततः ।
खनित्रस्य ततः प्रोक्ता कथा पुण्या महात्मनः ॥
अविक्षिच्चरितं चैव किमिच्छ व्रतकीर्तनम् ।
नरिष्यन्तस्य चरितं इक्ष्वाकुचरितं ततः ॥
तुलस्याश्चरितं पश्चाद्रामचन्द्रस्य सत्कथा ।
कुशवंशसमाख्यानं सोमवंशानुकीर्तनम् ॥
पुरूरवः कथा पुण्या नहुषस्य कथाद्भुता ।
ययाति चरितं पुण्यं यदुवंशानुकीर्तनम् ॥

श्रीकृष्ण बालचरितं माथुरं चरितं ततः ।
द्वारकाचरितञ्चाथ कथा सर्वावतारजा ॥
ततः सांख्यसमुद्देशः प्रपञ्चासत्वकीर्त्तनम् ।
मार्कण्डेयस्य चरितं पुराणश्रवणे फलम् ।
यः शृणोति नरोभक्त्या पुराणमिदमादरात् ।
मार्कण्डेयाभिधं वत्स स लभेत्परमां गतिम् ॥
यस्तु व्याकुरुते चैतच्छैवं स लभते पदम् ।
तत्प्रयच्छेल्लिखित्वा यः सौवर्णकरिसंयुतम् ॥
कार्तिक्यां द्विजवर्याय स लभेद् ब्रह्मणः पदम् ।
शृणोति श्रावयेद्वापि यश्चानुक्रमणामिमाम् ॥
मार्कण्डेय पुराणस्य सलभेद्वाञ्छितम्फलम् ।

अग्निपुराणम्

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च—

भगवतोऽवतारः, सृष्टिप्रकारः, विष्णुपूजा, अग्निपूजा, मुद्रादिलक्षणम्, दीक्षा, अभिषेकः, मण्डपलक्षणम्, कुशमार्जनविधिः, पवित्रारोपः, देवतायतनादिनिर्माणप्रकारः, शालग्रामलक्षणपूजे, देवप्रतिष्ठानियामकदीक्षा, देवप्रतिष्ठाविधिः, ब्रह्माण्डस्वरूपं, गङ्गादितीर्थमाहात्म्यं, दीपवर्णनम्, ऊर्द्ध्वाधोलोकवर्णनम्, ज्योतिश्चक्रस्वरूपम्। युद्धजयोपायषट्कर्मविधानम्, यन्त्रमन्त्रौषधप्रकारः,

कुब्जिकार्चनविधिः, कोटिहोमविधानम्, ब्रह्मचर्य्यधर्मः, श्राद्ध-कल्पः, ग्रहयज्ञः, वैदिकस्मार्त्तकर्म्मणी, प्रायश्चित्तम्, तिथिभेदे-व्रतभेदः, वारव्रत नक्षत्रव्रते, मासव्रतम्, दीपदानविधिः, नूतन-व्यूहारम्भादि, नरक निरूपणम्, दानव्रतम्, नाड़ी चक्रम्। सन्ध्या-विधिः, गायत्र्यर्थः, शिवस्तोत्रं, राज्याभिषेकः, राजधर्म्मः, राजाध्येय शास्त्रम्, शुभाशुभशकुनादि, मण्डलादि, रमणदीक्षा-विधिः, श्रीरामनतिः, रत्नलक्षणम्, धनुर्विद्या, व्यवहारविधिः, देवासुरयोर्युद्धम्, आयुर्वेदः, गजादिचिकित्सा, पूजाप्रकारः। शान्तिविधिः, छन्दः शास्त्रम्, साहित्यम्, शिष्टानुशासनम्, सृष्ट्यादि प्रलयवर्णने, शारीरिकरूपम्, नरकवर्णनम्, योगः, ब्रह्म-ज्ञानम्, पुराणमाहात्म्यञ्च।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराणम्

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च बृहन्नारदीये ४ पा० १०१ अ०

उक्ता यथा—

ब्रह्मोवाच— शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि पुराणं दशमं तव। ब्रह्मवैवर्त्तकं नाम वेदमार्गानुदर्शकम्। सावर्णिर्यत्र भगवान् साक्षाद्देवर्षयेऽतिथिः। नारदाय पुराणार्थं प्राह सर्वमलौकिकम्। धर्मार्थकाममोक्षाणां सारः प्रीतिर्हरौ हरे। तयोरभेदसिद्ध्यर्थं ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम्।

रथन्तरस्य कल्पस्य वृत्तान्तं यन्मयोदितम् ।
शतकोटि पुराणं तत् संक्षिप्य प्राह वेदवित् ॥
व्यासश्चतुर्द्धा संव्यस्य ब्रह्मवैवर्त संज्ञितम् ।
अष्टादश सहस्रन्तत्पुराणं परिकीर्त्तितम् ॥
ब्रह्म १ प्रकृति २ विघ्नेश ३ कृष्ण खण्ड ४ समाचितम् ।
तत्र सूतर्षिसम्वादः पुराणोपक्रमो मतः ॥

तत्रप्रथमे ब्रह्मखण्डे :—

सृष्टिप्रकरणं त्वाद्यं ततो नारदवेधसोः ।
विवादः सुमहान् यत्र द्वयोरासीत्पराभवः ॥
शिवलोकगतिः पश्चाज्ज्ञानलाभः शिवान्मुनेः ।
शिववाक्येन तत्पश्चात् मरीचेर्नारदस्य तु ॥
मननञ्चैव सावर्णिर्ज्ञानार्थं सिद्धसेविते ।
आश्रमे सुमहापुण्ये त्रैलोक्याश्चर्यकारिणि ॥
एतद्धि ब्रह्मखण्डं हि श्रुतं पापविनाशनम् ।

द्वितीये प्रकृति खण्डे :—

"ततः सावर्णिसम्वादो नारदस्य समीरितः ।
कृष्णमाहात्म्यसंयुक्तो नानाख्यानकथोत्तरः ॥
प्रकृतेरंशभूतानां कलानाञ्चापि वर्णितम् ।
माहात्म्यं पूजनाद्यञ्च विस्तरेण यथास्थितम् ॥
एतत्प्रकृतिखण्डं हि श्रुतं भूतिविधायकम् ।

तृतीये गणेश खण्डे :—

गणेशजन्मसम्प्रश्नः सपुण्यकमहाव्रतम् ।

पार्वत्याः कार्त्तिकेयेन सह विघ्नेशसम्भवः ॥
चरितं कार्त्तवीर्यस्य जामदग्न्यस्य चाद्भुतम् ।
विवादः सुमहान्पश्चाज्जामदग्न्यगणेशयोः ॥
एतद्विघ्नेशखण्डं हि सर्वं विघ्नविनाशनम् ।"

चतुर्थे श्रीकृष्णजन्मखण्डे :—

"श्रीकृष्णजन्म सम्प्रश्नो जन्माख्यानं ततोऽद्भुतम् ।
गोकुले गमनं पश्चात्पूतनादिवधोऽद्भुतः ॥
बाल्यकौमारजा लीलाविविधास्तत्र वर्णिताः ।
रासक्रीड़ा च गोपीभिः शारदी समुदाहृता ॥
रहस्ये राधया क्रीड़ा वर्णिता बहुविस्तरा ।
सहाक्रूरेण तत्पश्चान्मथुरा गमनं हरेः ॥
कंसादीनां वधे वृत्ते सदस्यद्विजसंस्कृतिः ।
काश्य सान्दीपनेः पश्चाद् विद्योपादानमद्भुतम् ॥
यवनस्य वधः पश्चाद् द्वारकागमनं हरेः ।
नरकादि वधस्तत्र कृष्णेन विहितोऽद्भुतः ॥
कृष्णखण्डमिदं विप्र ! नृणां संसार खण्डनम् ।

तत्फलश्रुति :—

"पठितश्च श्रुतं ध्यातं पूजितं चाभिवर्णितम् ।
इत्येतद् ब्रह्मवैवर्त्तं पुराणं चात्यलौकिकम् ॥
व्यासोक्तं चादिसम्भूतं पठन् शृण्वन् विमुच्यते ।
विज्ञानज्ञानशमनाद् घोरात्संसारसागरात् ॥

लिखित्वेदं च यो दद्यान्माध्यां धेनुसमान्वितम् ।
ब्रह्मलोकमवाप्नोति स मुक्तोऽज्ञानबन्धनात् ॥
यश्चानुक्रमणीं वाऽपि पठेद् वा श्रृणुयादपि ।
सोऽपि कृष्णप्रसादेन लभते वाञ्छितम्फलम् ॥

लिङ्गपुराणम्

व्यास प्रणीते महापुराणे प्रतिपाद्य विषयाः
नारदपुराणे १०२ अ० उक्ता यथा :—

ब्रह्मोवाच ।

श्रृणु पुत्र ! प्रवक्ष्यामि पुराणं लिंगसंज्ञितम् ।
पठतां श्रृण्वताञ्चैव भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥
यच्च लिङ्गाभिधे तिष्ठन् वह्निलिंगे हरोऽभ्यधात् ।
मह्यं धर्मादिसिद्ध्यर्थमग्निकल्पकथाश्रयम् ॥
तदेव व्यासदेवेन भागद्वयसमान्वितम् ।
पुराणं लिंगमुदितं बह्वाख्यानविचित्रितम् ।
तदेकादशसाहस्रं हरमाहात्म्यसूचकम् ।
परं सर्वपुराणानां सारभूतं जगत्त्रये ।
पुराणोपक्रमेप्रश्नः सृष्टि संक्षेपतः पुरा ॥

तत्र पूर्वभागे—

योगाख्यानं ततः प्रोक्तं कल्पाख्यानं ततः परम् ।
लिंगोद्भवस्तदर्चा च कीर्तिता हि ततः परम् ॥

सनत्कुमारशैलादि संवादश्चाथ पावनः ।
ततो दधीचिचरितं युगधर्मनिरूपणम् ॥
ततो भुवनकोषाख्या सूर्यसोमान्वयस्ततः ।
ततश्च विस्तरात्सर्गस्त्रिपुराख्यानकस्तथा ॥
लिंगप्रतिष्ठा च ततः पशुपाशविमोक्षणम् ।
शिवव्रतानि च तथा सदाचारनिरूपणम् ॥
प्रायश्चित्तान्यरिष्टानि काशीश्रीशैलवर्णनम् ।
अन्धकाख्यानकं पश्चात् वाराहचरितं पुनः ॥
नृसिंहचरितं पश्चाज्जलन्धरवधस्ततः ।
शैवं सहस्रनामाथ दक्षयज्ञविनाशनम् ॥
कामस्य दहनं पश्चात् गिरिजायाः करग्रहः ।
ततो विनायकाख्यानं नृत्याख्यानं शिवस्य च ॥
उपमन्युकथा चापि पूर्वभाग इतीरितः ।"

उत्तर भागे—

विष्णुमाहात्म्यकथनमम्बरीषकथा ततः ।
सनत्कुमारनन्दीशसम्वादश्चपुनर्मुने ॥
शिवमाहात्म्यसंयुक्तस्नानयागादिकं ततः ।
सूर्यपूजाविधिश्चैव शिवपूजा च मुक्तिदा ॥
दानानि बहुधोक्तानि श्राद्धप्रकरणन्ततः ।
प्रतिष्ठा तत्र गदिता ततोऽघोरस्य कीर्त्तनम् ॥
व्रजेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा ततः ।
त्र्यम्बकस्य च माहात्म्यं पुराणश्रवणस्य च ॥

एतस्योपरिभागस्ते लैंगस्य कथितो मया।
व्यासेन हि निबद्धस्य रुद्रमाहात्म्यसूचिनः॥
लिखित्वैतत्पुराणन्तु तिलधेनुसमाचितम्।
फाल्गुन्यां पूर्णिमायां यो दद्याद्भक्त्या द्विजातये॥
यःपठेच्छृणुयाद्वापि लैङ्गं पापापहं नरः।
सभुक्तभोगोलोकेऽस्मिन्नन्ते शिवपुरंव्रजेत्॥
लिंगानुक्रमणीमेतां पठेद्यः शृणुयात्तथा।
तावुभौ शिवभक्तौ तु लोकद्वितयभोगिनौ॥
जायेतां गिरिजाभर्त्तुः प्रसादान्नात्र संशयः।

वराहपुराणम्

तद्विषयाश्च नारदीय पुराणे पूर्वभागे बृहदुपाख्याने चतुर्थभागे १०३ अध्याये उक्ता यथा :-

श्री ब्रह्मोवाच

"शृणु वत्स! प्रवक्ष्यामि वाराहं वै पुराणकम्।
भागद्वययुतं शश्वद्विष्णुमाहात्म्यसूचकम्।
मानवस्य तु कल्पस्य प्रसङ्गं मत्कृतं पुरा।
निबबन्ध पुराणेऽस्मिंश्चतुर्विंशसहस्रके॥
व्यासो हि विदुषां श्रेष्ठः साक्षान्नारायणो भुवि।
तत्रादौशुभसंवादस्मृतोभूमिवराहयोः।"

तत्र पूर्व भागे :—

"अथादिकृतवृत्तान्ते रम्यस्यचरितं ततः ।
दुर्ज्जयाय च तत्पश्चाच्छ्राद्धकल्पउदीरितः ॥
महातपस आख्यानं गौर्य्युत्पत्तिस्ततःपरम् ।
विनायकस्य नागानां सेनान्यादित्ययोरपि ॥
गणानाञ्च तथा देव्या धनदस्य वृषस्य च ।
आख्यानं सत्यतपसो व्रताख्यानसमन्वितम् ॥
अगस्त्यगीता तत्पश्चाद्रुद्रगीता प्रकीर्तिता ।
महिषासुरविध्वंसे माहात्म्यञ्च त्रिशक्तिजम् ।
पर्व्वाध्यायस्ततःश्वेतोपाख्यानं गोप्रदानिकम् ।
इत्यादिकृतवृत्तान्तं प्रथमोद्देशनामकम् ॥
भगवद्धर्मके पश्चाद्व्रततीर्थकथानकम् ।
द्वात्रिंशदपराधानां प्रायश्चित्तं शरीरकम् ॥
तीर्थानाञ्चापि सर्व्वेषां माहात्म्यं पृथगीरितम् ।
मथुराया विशेषेण श्राद्धादीनां विधिस्ततः ॥
वर्णनं यमलोकस्य ऋषिपुत्रप्रसङ्गतः ।
विपाकः कर्म्मणाञ्चैव विष्णुव्रत निरूपणम् ॥
गोकर्णस्य च माहात्म्यं कीर्त्तितं पापनाशनम् ।
इत्येष पूर्वभागोऽस्य पुराणस्य निरूपितः ॥

उत्तरभागे :—

उत्तरे प्रविभागे तु पुलस्त्यकुरुराजयोः ।
संवादे सर्वतीर्थानां माहात्म्यं विस्तरात्पृथक् ॥

अशेषधर्माश्चाख्याताः पौष्करं पुण्यपर्व च ।
इत्येवं तव वाराहं प्रोक्तं पापविनाशनम् ॥

तत्फलश्रुतिः :—

पठतां शृण्वताञ्चैव भगवद्भक्तिवर्द्धनम् ।
काञ्चनं गरुड़ं कृत्वा तिलधेनुसमान्वितम् ॥
लिखित्वैतच्च यो दद्याच्चैत्र्यां विप्राय भक्तितः ।
स लभेद्वैष्णवं धाम देवर्षिगणवन्दितः ॥
यो वानुक्रमणीमेतां शृणोत्यपि पठत्यपि ।
सोऽपि भक्तिं लभेद्विष्णौ संसारोच्छेदकारिणीम् ॥

वामन पुराणम्

तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च नारद पुराणे उक्ता यथा :—

ब्रह्मोवाच ।

"शृणुवत्स ! प्रवक्ष्यामि पुराणं वामनाभिधम् ।
त्रिविक्रम चरित्राढ्यं दशसाहस्रसंख्यकम् ॥
कूर्म्मकल्प समाख्यानं वर्गत्रयकथानकम् ।
भागद्वय समायुक्तं वक्तृ श्रोतृ शुभावहम् ॥"

तत्र पूर्व भागे :—

"पुराणप्रश्नः प्रथमं ब्रह्मशीर्षच्छिदा ततः ।
कपालमोचनाख्यानं दक्षयज्ञविहिंसनम् ॥
हरस्य कालरूपाख्या कामस्य दहनन्ततः ।

प्रह्लाद नारायणयो र्युद्धं देवासुराह्वयम् ॥
सुकेश्यर्कसमाख्यानं ततो भुवनकोषकम् ।
ततः काम्यव्रताख्यानं श्रीदुर्गाचरितं ततः ॥
तपती चरितं पश्चात्कुरुक्षेत्रस्य वर्णनम् ।
सरोमाहात्म्यमतुलं पार्वती जन्म कीर्त्तनम् ॥
तपस्तस्या विवाहश्च गौर्य्युपाख्यानकन्ततः ।
ततः कौशिक्युपाख्यानं कुमारचरितं ततः ॥
ततोऽन्धकवधाख्यानं साध्योपाख्यानकन्ततः ।
जाबालिचरितं पश्चादरजायाः कथाद्भुता ॥
अन्धकेश्वरयोर्युद्धं गणत्वंचान्धकस्य च ।
मरुतां जन्म कथनं बलेश्च चरितं ततः ॥
ततस्तु लक्ष्म्याश्चरितं त्रैविक्रममतः परम् ।
प्रह्लाद तीर्थ यात्रायां प्रोच्यन्ते तत्कथाः शुभाः ॥
ततश्च धुन्धु चरितं प्रेतोपाख्यानकततः ।
नक्षत्र पुरुषाख्यानं श्रीदामचरितं ततः ॥
त्रिविक्रम चरित्रान्ते ब्रह्मप्रोक्तः स्तवोत्तमः ।
प्रह्लादबलिसंवादे सुतले हरिशंसनम् ॥
इत्येष पूर्व भागोऽस्य पुराणस्य तवोदितः ॥"

तदुत्तरे भागे बृहद्वामनाख्ये :—

शृणुतस्योत्तरं भागं बृहद्वामन सञ्ज्ञकम् ।
माहेश्वरी भगवती सौरी गाणेश्वरी तथा ॥
चतस्रः संहिताश्चात्र पृथक् साहस्रसंख्यया ।

माहेश्वर्यान्तु कृष्णस्य तद्भक्तानाञ्च कीर्त्तनम् ॥
भागवत्यांजगन्मातुरवतारकथाद्भुता ।
सौर्य्यां सूर्य्यस्य महिमा गदितः पापनाशनः ॥
गाणेश्वर्य्यां गणेशस्य चरितश्च महेशितुः ।
इत्येतद् वामनं नाम पुराणं सुविचित्रकम् ॥
पुलस्त्येन समाख्यातं नारदाय महात्मने ।
ततो नारदतः प्राप्तं व्यासेन सुमहात्मना ॥
व्यासात्तु लब्धवान् वत्स तच्छिष्यो रोमहर्षणः ।
स चाख्यास्यति विप्रेभ्योनैमिषीयेभ्य एव च ॥
एवं परम्पराप्राप्तं पुराणं वामनं शुभम् ॥"

तत्फलश्रुति :—

"ये पठन्ति च शृण्वन्ति तेऽपियान्ति परांगतिम् ।
लिखित्वैतत्पुराणन्तु यः शरद्विषुवेऽर्पयेत् ॥
विप्राय वेदविदुषे घृतधेनुसमान्वितम् ।
स समुद्धृत्य नरकान्नयेत्स्वर्गं पितॄन् स्वकान् ॥
देहान्ते भुक्तभोगोऽसौ याति विष्णोः परम्पदम् ।

मत्स्यपुराणम्

तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च तत्रैव २९० अध्याय उक्ता यथा—

सूतउवाच ।

एतद्वः कथितं सर्वं यदुक्तं विश्वरूपिणा ।

मात्स्यं पुराणमखिलं धर्मकामार्थसाधनम् ॥
यत्रादौ मनुसम्वादो ब्रह्माण्ड कथनन्तथा ।
सांख्यं शरीरकम्प्रोक्तं चतुर्मुखमुखोद्भवम् ॥
देवासुराणामुत्पत्तिर्मारुतोत्पत्तिरेव च ।
मदनद्वादशीतद्वल्लोकपालाभिपूजनम् ॥
मन्वन्तराणामुद्देशो वैन्यराजाभिवर्णनम् ।
सूर्य्याद्वैवस्वतोत्पत्तिर्बुधस्यागमनन्तथा ।
पितृवंशानुकथनं श्राद्धकालस्तथैव च ॥
पितृतीर्थप्रवासश्च सोमोत्पत्तिस्तथैव च ।
कीर्त्तनं सोमवंशस्य ययातिचरितं तथा ॥
कार्त्तवीर्यस्य माहात्म्यं वृष्णिवंशानुकीर्त्तनम् ।
भृगुशापस्तथा विष्णोर्दैत्यशापस्तथैव च ॥
कीर्त्तनं पुरुवंशस्य वंशो हौताशनस्तथा ।
पुराणकीर्त्तनं तद्वत् क्रियायोगस्तथैव च ॥
व्रतं नक्षत्रसंख्याकं मार्कण्डशयनं तथा ।
कृष्णाष्टमीव्रतंतद्वद्रोहिणी चन्द्रसंज्ञितम् ॥
तड़ागविधिमाहात्म्यं पादपोत्सर्ग एव च ।
सौभाग्य शयनं तद्वदगस्त्यव्रतमेव च ॥
तथानन्ततृतीया तु रसकल्याणिनी तथा ।
आर्द्रानन्दकरी तद्वद्व्रतं सारस्वतं पुनः ॥
उपरागाभिषेकश्च सप्तमीस्नपनं पुनः ।
भीमाख्या द्वादशी तद्वदनङ्गशयनं तथा ॥

अशून्यशयनं तद्वत्तथैवांगारक व्रतम् ।
सप्तमीसप्तकं तद्वद्विशोकद्वादशी तथा ॥
मेरुप्रदानं दशधा ग्रहशान्तिस्तथैव च ।
ग्रहस्वरूपकथनं तथा शिवचतुर्दशी ॥
तथा सर्वफलत्यागः सूर्यवारव्रतं तथा ।
संक्रान्तिस्नपनं तद्वद्विभूतिद्वादशी व्रतम् ।
षष्टि व्रतानां माहात्म्यं तथा स्नानविधिक्रमः ॥
प्रयागस्य तु माहात्म्यं सर्वतीर्थानुकीर्तनम् ।
पैलाश्रमफलं तद्वद् द्वीपलोकानुकीर्तनम् ॥
तथान्तरिक्षचारश्च ध्रुवमाहात्म्यमेव च ।
भवनानि सुरेन्द्राणां त्रिपुरायोधनं तथा ॥
पितृपिण्डदमाहात्म्यं मन्वन्तर विनिर्णयः ।
वज्राङ्गस्य तु सम्भूतिः तारकोत्पत्तिरेव च ॥
तारकासुरमाहात्म्यं ब्रह्मदेवानुकीर्त्तनम् ।
पार्वतीसम्भवस्तद्वत् तथा शिवतपोवनम् ॥
अनङ्गदेहदाहस्तु रतिशोकस्तथैव च ।
गौरीतपोवनं तद्वच्छिवनाथप्रसादनम् ॥
पार्वतऋषिसम्वादस्तथैवोद्वाहमङ्गलम् ।
कुमारसम्भवस्तद्वत् कुमारविजयस्तथा ॥
तारकस्य वधो घोरो नरसिंहोपवर्णनम् ।
पद्मोद्भवविसर्गस्तु तथैवान्धकघातनम् ॥
वाराणस्यास्तु माहात्म्यं नर्मदायास्तथैव च ।

प्रवरानुक्रमस्तद्वत् पितृनाथानुकीर्त्तनम् ॥
ततोभयमुखीदानं दानं कृष्णाजिनस्य च ।
तथा सावित्र्युपाख्यानं राजधर्मास्तथैव च ॥
यात्रानिमित्तकथनं स्वप्नमाङ्गल्यकीर्त्तनम् ।
वामनस्य तु माहात्म्यं तथैवादिवराहकम् ॥
क्षीरोदमथनं तद्वत्कालकूटाभिशासनम् ।
प्रासादलक्षणन्तद्वन्मण्डपानान्तु लक्षणम् ॥
पुरूवंशे तु सम्प्रोक्तं भविष्यद्राजवर्णनम् ।
तुलादानादि बहुशो महादानानुकीर्त्तनम् ॥
कल्पानुकीर्त्तनं तद्वद्ग्रन्थानुक्रमणी तथा ।
एतत्पवित्रमायुष्यमेतत्कीर्तिविवर्धनम् ॥
एतत्पवित्रं कल्याणं महापापहरं शुभम् ।
अस्मात् पुराणादपि पादमेकं पठेत्तु यः सोऽपि विमुक्तपापः ।
नारायणाख्यं पदमेति नूनमनङ्गवद्दिव्यसुखानि भुङ्क्ते ॥

कूर्म पुराणम्

व्यास प्रणीतेषु अष्टादश महापुराणेषु पञ्चदशे पुराणे तत्प्रतिपाद्य विषयाश्च बृहन्नारदीये दर्शिता यथा :—

श्री ब्रह्मोवाच—

शृणु वत्स ! मरीचेऽद्य पुराणं कूर्म्म संज्ञितम् ।
लक्ष्मीकल्पानुचरितं यत्र कूर्म्मवपुर्हरिः ॥

धर्म्मार्थकाममोक्षाणां माहात्म्यञ्च पृथक् पृथक् ।
इन्द्रद्युम्नप्रसङ्गेन प्राहर्षिभ्यो दयाधिकम् ॥
तत्सप्तदशसाहस्त्रं सचतुःसंहितं शुभम् ।
यत्र ब्राह्मया(संहितया)पुरा प्रोक्ता धर्म्मा नानाविधा मुने॥
नानाकथाप्रसङ्गेन नृणां सद्गतिदायकाः ।"

तत्पूर्व भागे—

"तत्र पूर्व विभागे तु पुराणोपक्रमः पुरा ।
लक्ष्मीप्रद्युम्नसम्वादः कूर्मर्षिगणसङ्कथा ॥
वर्णाश्रमाचारकथा जगदुत्पत्तिकीर्त्तनम् ।
कालसंख्या समासेन लयान्ते स्तवनं विभोः ॥
ततः सङ्क्षेपतः सर्गः शाङ्करंचरितं तथा ।
सहस्रनाम पार्वत्या योगस्य च निरूपणम् ॥
भृगुवंशसमाख्यानं ततः स्वायम्भुवस्य च ।
देवादीनां समुत्पत्तिर्दक्षयज्ञाहतिस्ततः ॥
दक्षसृष्टि कथा पश्चात् कश्यपान्वयकीर्त्तनम् ।
आत्रेयवंशकथनं कृष्णाय चरितं शुभम् ॥
मार्क्कण्डकृष्णसंवादो व्यासपाण्डवसंकथा ।
युगधर्म्मानुकथनं व्यासजैमिनिकी कथा ॥
वाराणस्याश्च माहात्म्यं प्रयागस्य ततः परम् ।
त्रैलोक्यवर्णनञ्चैव वेदशाखानिरूपणम् ॥"

तदुत्तर भागे—

उत्तरेऽस्य विभागे तु पुरा गीतेश्वरी ततः ।

व्यासगीता ततः प्रोक्ता नाना धर्म्मप्रबोधिणी ॥
नानाविधानां तीर्थानां माहात्म्यञ्च पृथक् ततः ।
नानाधर्म प्रकथनं ब्राह्मीयं संहिता स्मृता ॥
अतः परं भगवती संहितार्थनिरूपणे ।
कथिता यत्र वर्णानां पृथग् वृत्तिरुदाहृता ॥

तदुत्तर भागे भगवत्याख्यद्वितीयसंहितायाः पञ्चसु पादेषु—

"पादेऽस्याः प्रथमे प्रोक्ता ब्राह्मणानां व्यवस्थितिः ।
सदाचारात्मिका वत्स ! भोगसौख्यविवर्द्धिनी ॥
द्वितीये क्षत्रियाणान्तु वृत्तिः सम्यक्प्रकीर्तिता ।
यया त्वाश्रितया पापं विधूयेह व्रजेद्दिवम् ॥
तृतीये वैश्यजातीनां वृत्तिरुक्ता चतुर्विधा ।
यया चरितया सम्यक् लभते गतिमुत्तमाम् ॥
चतुर्थेऽस्यास्तथा पादे शूद्रवृत्तिरुदाहृता ।
यया सन्तुष्यति श्रीशो नृणां श्रेयो विवर्द्धनः ॥
पञ्चमेऽस्यास्ततः पादे वृत्तिः सङ्करजन्मनाम् ।
यया चरितयाऽऽप्नोति भाविनीमुत्तमांजनिम् ॥
इत्येषा पञ्चपाद्युक्ता द्वितीया संहिता मुने ।
तृतीयात्रोदिता सौरी नृणां कामविधायिनी ॥
षोढा षट्कर्मसिद्धिं सा बोधयन्ती च कामिनाम् ।
चतुर्थी वैष्णवी नाम मोक्षदा परिकीर्तिता ॥
चतुष्पदी द्विजादीनां साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणी ।
ताः क्रमात् षट्चतुर्द्वीषु साहस्राः परिकीर्तिताः ॥

तत्फलश्रुतिः :—

"एतत्कूर्मपुराणन्तु चतुर्वर्गफलप्रदम्।
पठतां शृण्वतां नृणां सर्वोत्कृष्टगतिप्रदम् ॥
लिखित्वैतत्तु यो भक्त्या हेमकूर्मसमन्वितम् ।
ब्राह्मणायायने दद्यात् स याति परमांगतिम् ॥

स्कन्दपुराणम्

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च
श्री नारदीयपुराणे पूर्वभागे बृहदुपाख्याने चतुर्थपादे
१०४ अध्याये उक्ता यथा

ब्रह्मोवाच ।

शृणु वक्ष्ये मरीचे च पुराणं स्कन्दसंज्ञितम् ।
यस्मिन् प्रतिपदं साक्षान्महादेवो व्यवस्थितः ॥
पुराणे शतकोटौ तु यच्छैवं वर्णितं मया ।
लक्षितस्यार्थजातस्य सारो व्यासेन कीर्तितः ॥
स्कन्दाह्वयस्यत्र खण्डाः सप्तैव परिकल्पिताः ।
एकाशीति सहस्रन्तु स्कान्दं सर्व्वाघकृन्तनम् ॥
यः शृणोति पठेद्वापि स तु साक्षाच्छिवः स्थितः ।
यत्र माहेश्वरा धर्माः षण्मुखेन प्रकाशिताः ।
कल्पे तत्पुरुषेवृत्ताः सर्वसिद्धिविधायिकाः ॥

तत्र माहेश्वर खण्डे :—

"तस्य माहेश्वरश्चाद्यः खण्डः पापप्रणाशनः ॥

किञ्चिन्न्यूनार्कसाहस्रो बहुपुण्यो बृहत्कथः ।
सुचरित्रशतैर्युक्तः स्कन्दमाहात्म्यसूचकः ॥
यत्र केदारमाहात्म्ये पुराणोपक्रमः पुरा ।
दक्षयज्ञकथा पश्चाच्छिवलिङ्गार्चनेफलम् ॥
समुद्रमथनाख्यानं देवेन्द्रचरितं ततः ।
पार्वत्या समुपाख्यानं विवाहस्तदनन्तरम् ॥
कुमारोत्पत्तिकथनं ततस्तारकसङ्गरः ।
ततः पशुपताख्यानं चण्डाख्यानसमाचितम् ॥
द्यूतप्रवर्त्तनाख्यानं नारदेन समागमः ।
ततः कुमारमाहात्म्ये पञ्चतीर्थकथानकम् ॥
धर्म्मवर्म्मनृपाख्यानं नदीसागरकीर्त्तनम् ।
इन्द्रद्युम्नकथा पश्चान्नाडीजङ्घकथाचिता ॥
प्रादुर्भावस्ततो मह्याः कथा दमनकस्य च ।
महीसागरसंयोगः कुमारेशकथा ततः ॥
ततस्तारकयुद्धञ्च नानाख्यानसमान्वितम् ।
वधश्च तारकस्याथ पञ्चलिङ्गनिवेशनम् ॥
द्वीपाख्यानं ततः पुण्यं ऊर्ध्वलोकव्यवस्थितः ।
ब्रह्माण्डस्थितिमानञ्च वर्करेशकथानकम् ॥
महाकालसमुद्भूतिः कथा चास्य महाद्भुता ।
वासुदेवस्य माहात्म्यं कोटितीर्थं ततः परम् ॥
नानातीर्थसमाख्यानं गुप्तक्षेत्रे प्रकीर्त्तितम् ।
पाण्डवानां कथापुण्या महाविद्या प्रसाधनम् ॥

तीर्थयात्रासमाप्तिश्च कौमारमिदमद्भुतम् ।
अरुणाचलमाहात्म्ये सनकब्रह्मसंकथा ॥
गौरीतपःसमाख्यानं तत्तत्तीर्थनिरूपणम् ।
महिषासुरजाख्यानं वधश्चास्य महाद्भुतः ॥
शोणाचलेशिवास्थानं नित्यदा परिकीर्त्तितम् ।
इत्येष कथितः स्कान्दे खण्डो माहेश्वरोऽद्भुतः ॥

द्वितीये वैष्णव खण्डे :—

द्वितीयो वैष्णवः खण्डस्तस्याख्यानानि मे शृणु ।
प्रथमं भूमिवाराहं समाख्यानं प्रकीर्तितम् ॥
यत्र वोचककुम्रस्य माहात्म्यं पापनाशनम् ।
कमलायाः कथा पुण्या श्रीनिवासस्थितिस्ततः ॥
कुलालाख्यानकश्चात्र सुवर्णमुखरी कथा ।
नानाख्यानसमायुक्ता भारद्वाजकथाद्भुता ॥
मतङ्गाञ्जनसंवादः कीर्त्तितः पापनाशनः ।
पुरुषोत्तममाहात्म्यं कीर्त्तितं चोत्कले ततः ॥
मार्कण्डेयसमाख्यानमम्बरीषस्य भूपतेः ।
इन्द्रद्युम्नस्य चाख्यानं विद्यापतिकथा शुभा ॥
जैमिनेः समुपाख्यानं नारदस्यापि वाडव ।
नीलकण्ठसमाख्यानं नारसिंहोपवर्णनम् ॥
अश्वमेधकथा राज्ञो ब्रह्मलोकगतिस्तथा ।
रथयात्राविधिः पश्चाज्जन्मस्नानविधिस्तथा ॥
दक्षिणामूर्त्युपाख्यानं गुण्डिचाख्यानकं ततः ।

रथरक्षा विधानञ्च शयनोत्सवकीर्त्तनम् ॥
श्वेतोपाख्यानमत्रोक्तं वह्न्युत्सवनिरूपणम् ।
दोलोत्सवो भगवतो व्रतं सांवत्सराभिधम् ॥
पूजा च कामिभिर्विष्णोरुद्दालकनियोगकः ।
मोक्षसाधनमत्रोक्तं नानायोगनिरूपणम् ॥
दशावतारकथनं स्नानादि परिकीर्तनम् ।
ततो बदरिकायाश्च माहात्म्यं पापनाशनम् ॥
अग्न्यादि तीर्थमाहात्म्यं वैनतेयशिलाभवम् ।
कारणं भगवद्वासे तीर्थं कापालमोचनम् ॥
पञ्चधाराभिधं तीर्थं मेरुसंस्थापनं तथा ।
ततःकार्त्तिकमाहात्म्ये माहात्म्यं मदनालसम् ॥
धूम्रकेशसमाख्यानं दिनकृत्यानि कार्तिके ।
पञ्चभीष्मव्रताख्यानं कीर्त्तिदं भुक्तिमुक्तिदम् ॥
तद्व्रतस्य च माहात्म्ये विधानं स्नानजं तथा ।
पुण्ड्रादिकीर्त्तनञ्चात्र मालाधारणपुण्यकम् ॥
पञ्चामृतस्नानपुण्यं घण्टानादादिजं फलम् ।
नानापुष्पार्च्चनफलं तुलसीदलजम्फलम् ॥
नैवेद्यस्य च माहात्म्यं हरिवासन (र) कीर्तनम् ।
अखण्डैकादशी पुण्यं तथा जागरणस्य च ॥
मत्स्योत्सवविधानञ्च नाम माहात्म्यकीर्त्तनम् ।
ध्यानादि पुण्यकथनं माहात्म्यं मथुराभवम् ॥
मथुरातीर्थमाहात्म्यं पृथगुक्तं ततः परम् ।

वनानां द्वादशानाञ्च माहात्म्यं कीर्त्तितं ततः ॥
श्रीमद्भागवतस्यात्र माहात्म्यं कीर्त्तितं परम् ।
वज्रशाण्डिल्यसम्वादमन्तर्लीलाप्रकाशकम् ॥
ततो माघस्य माहात्म्यं स्नानदानजपोद्भवम् ।
नानाख्यानसमायुक्तं दशाध्याये निरूपितम् ॥
ततो वैशाखमाहात्म्ये शय्यादानादिजम्फलम् ।
जलदानादि विधयः कामाख्यानमतः परम् ॥
श्रुतदेवस्य चरितं व्याधोपाख्यानमद्भुतम् ॥
तथाक्षयतृतीयादेर्विशेषात्पुण्यकीर्त्तनम् ।
ततस्त्वयोध्या माहात्म्ये चक्रब्रह्माख्यतीर्थके ॥
ऋणपापविमोक्षाख्ये तथाधारसहस्रकम् ।
स्वर्गद्वारं चन्द्रहरि धर्म्महर्य्युपवर्णनम् ॥
स्वर्णवृष्टेरुपाख्यानं तिलोदा सरयूयुतिः ।
सीताकुण्डं गुप्तहरिः सरयूर्घर्घराचयः ॥
गोप्रचारश्च दुग्धोदं गुरुकुण्डादि पञ्चकम् ।
घोषार्कादीनि तीर्थानि त्रयोदश ततः परम् ॥
गयाकूपस्य माहात्म्यं सर्व्वाघविनिवर्त्तकम् ।
माण्डव्याश्रमपूर्वाणि तीर्थानि तदनन्तरम् ॥
अजितादि मानसादि तीर्थानि गदितानि च ।
इत्येष वैष्णवः खण्डो द्वितीयः परिकीर्तितः ॥

तृतीये ब्रह्मखण्डे—

"अतः परं ब्रह्मखण्डं मरीचे शृणु पुण्यदम् ।

यत्र वै सेतुमाहात्म्ये फलं स्नानेक्षणोद्भवम् ॥
गालवस्य तपश्चर्य्या राक्षसाख्यानकं ततः ।
चक्रतीर्थादि माहात्म्यं देवीपत्तनसंयुतम् ॥
वेतालतीर्थमहिमा पापनाशादि कीर्त्तनम् ।
मङ्गलादिकमाहात्म्यं ब्रह्मकुण्डादि वर्णनम् ॥
हनूमत् कुण्डमहिमागस्त्यतीर्थभवम्फलम् ।
रामतीर्थादि कथनं लक्ष्मीतीर्थनिरूपणम् ॥
शङ्खादितीर्थमहिमा तथासाध्यामृतादिजः ।
धनुष्कोट्यादि माहात्म्यं क्षीरकुण्डादिजं तथा ॥
गायत्र्यादिक तीर्थानां माहात्म्यं चात्र कीर्त्तितम् ।
रामनाथस्य महिमा तत्त्वज्ञानोपदेशनम् ॥
यात्राविधानकथनं सेतौ मुक्तिप्रदं नृणाम् ।
धर्म्मारण्यस्य माहात्म्यं ततः परमुदीरितम् ॥
स्थाणुः स्कन्दाय भगवान् यत्र तत्त्वमुपादिशत् ।
धर्म्मारण्यसुसंभूतिस्तत्पुण्य परिकीर्त्तनम् ॥
कर्म्मसिद्धेः समाख्यानं ऋषिवंश निरूपणम् ।
अप्सरातीर्थमुख्यानां माहात्म्यं यत्र कीर्त्तनम् ॥
वर्णानामाश्रमाणाञ्च धर्म्मतत्त्वनिरूपणम् ।
देवस्थानविभागश्च बकुलार्क कथा शुभा ॥
छत्रा नन्दा तथा शान्ता श्रीमाता च मतङ्गिनी ।
पुण्यदाख्यः समाख्याता यत्र देव्यः समास्थिताः ॥
इन्द्रेश्वरादि माहात्म्यं द्वारकादि निरूपणम् ।

लोहासुरसमाख्यानं गङ्गाकूपनिरूपणम् ॥
श्रीरामचरितञ्चैव सत्यमन्दिरवर्णनम् ।
जीर्णोद्धारस्यकथनं शासनप्रतिपादनम् ॥
जातिभेदप्रकथनं स्मृतिधर्म्मनिरूपणम् ।
ततस्तु वैष्णवा धर्म्मा नानाख्यानैरुदीरिताः ॥
चातुर्म्मास्ये ततः पुण्ये सर्वधर्म्मनिरूपणम् ।
दानप्रशंसा तत्पश्चाद् व्रतस्य महिमा ततः ॥
तपसश्चैव पूजायाः सच्छिद्रकथनन्ततः ।
प्रकृतीनां भिदाख्यानं शालग्रामनिरूपणम् ॥
तारकस्य वधोपायो ऽयक्षार्च्चामहिमा तथा ।
विष्णोः शापश्च वृक्षत्वं पार्व्वत्यनुनयस्ततः ॥
हरस्य ताण्डवं नृत्यं रामनामनिरूपणम् ।
हरस्य लिङ्गपतनं कथायें जवनस्य च ॥
पार्वतीजन्मचरितं तारकस्य वधोऽद्भुतः ।
प्रणवैश्वर्य कथनं तारकाचरितं पुनः ॥
दक्षयज्ञ समाप्तिश्च द्वादशाक्षररूपणम् ।
ज्ञानयोग समाख्यानं महिमा द्वादशार्णजः ॥
श्रवणादिक पुण्यञ्च कीर्त्तितं शर्म्मदं नृणाम् ।

तृतीय ब्रह्मखण्डस्तोत्तर भागे—

"ततो ब्रह्मोत्तरे भागे शिवस्य महिमाद्भुतः ।
पञ्चाक्षरस्य महिमा गोकर्णमहिमा ततः ॥
शिवरात्रेश्च महिमा प्रदोषव्रतकीर्त्तनम् ।

सोमवारव्रतञ्चापि सोमन्तिन्याः कथानकम् ॥
भद्रायुत्पत्ति कथनं सदाचारनिरूपणम् ।
शिववर्म्म समुद्देशो भद्रायुद्वाहवर्णनम् ॥
भद्रायुमहिमा चापि भस्ममाहात्म्य कीर्त्तनम् ।
शवराख्यानकञ्चैव उमामाहेश्वर व्रतम् ॥
रुद्राक्षस्य च माहात्म्यं रुद्राध्यायस्य पुण्यकम् ।
श्रवणादिक पुण्यञ्च ब्रह्मखण्डोऽयमीरितः ॥"

चतुर्थ काशी खण्डे—

"अतः परं चतुर्थन्तु काशीखण्डमनुत्तमम् ।
विन्ध्यनारदयोर्यत्र सम्वादः परिकीर्त्तितः ॥
सत्यलोकप्रभावश्चागस्त्यावासे सुरागमः ।
पतिव्रता चरित्रञ्च तीर्थचर्य्या प्रशंसनम् ॥
ततश्च सप्त पूर्याख्या संयमिन्या निरूपणम् ।
ब्रध्नस्य च तथेन्द्राग्नयोर्लोकाप्तिः शिवशर्म्मणः ॥
अग्नेः समुद्भवश्चैव क्रव्याद्वरुणसम्भवः ।
गन्धवत्यलकापुर्य्योरीश्वर्य्याश्च समुद्भवः ॥
चन्द्रोडुबुधलोकानां कुजेज्यार्कभुवां क्रमात् ।
सप्तर्षिणां ध्रुवस्यापि तपोलोकस्य वर्णनम् ॥
ध्रुवलोक कथा पुण्या सत्यलोक निरीक्षणम् ।
स्कन्दागस्त्य समालापो मणिकर्णी समुद्भवः ॥
प्रभावश्चापि गङ्गाया गङ्गानाम सहस्रकम् ।
वाराणसी प्रशंसा च भैरवाविर्भवस्ततः ॥

दण्डपाणि ज्ञानवाप्योरुद्भवः समनन्तरम् ।
ततः कलावत्याख्यानं सदाचारनिरूपणम् ॥
ब्रह्मचारिसमाख्यानं ततः स्त्रीलक्षणानि च ।
कृत्याकृत्यविनिर्देशो ह्यविमुक्तेशवर्णनम् ॥
गृहस्थयोगिनो धर्म्माः कालज्ञानं ततः परम् ।
दिवोदास कथा पुण्या काशीवर्णनमेव च ॥
योगिन्यर्चा च लोलार्कोत्तरशाम्बकजा कथा ।
द्रुपदार्कस्य तार्क्ष्याख्यारुणार्कस्योदयस्ततः ॥
दशाश्वमेधतीर्थाख्या मन्दराच्च गणागमः ।
पिशाचमोचनाख्यानं गणेशप्रेषणन्ततः ॥
मायागणपतेश्चाथ भुवि प्रादुर्भवस्ततः ।
विष्णुमाया प्रपञ्चोऽथ दिवोदासविमोक्षणम् ॥
ततः पञ्चनदोत्पत्तिर्बिन्दुमाधव सम्भवः ।
ततो वैष्णवतीर्थाख्या शूलिनः काशिकागमः ॥
जैगीषव्येण सम्वादो ज्येष्ठे शाख्या महेशितुः ।
क्षेत्राख्यानं कन्दुकेशव्याघ्रेश्वरसमुद्भवः ॥
शैलेशरत्नेश्वरयोः कृत्तिवासस्य चोद्भवः ।
देवतानामधिष्ठानं दुर्गासुर पराक्रमः ॥
दुर्गाया विजयश्चाथ ओङ्कारेशस्य वर्णनम् ।
पुनरोङ्कारमाहात्म्यं त्रिलोचन समुद्भवः ॥
केदाराख्या च धर्म्मेश कथा विश्वभुजोद्भवा ।
वीरेश्वरसमाख्यानं गङ्गामाहात्म्यकीर्त्तनम् ॥

विश्वकर्म्मेश महिमा दक्षयज्ञोद्भवस्तथा
सतीशम्याम्रृतेशादेर्भुजस्तम्भः पराशरेः ॥
क्षेत्रतीर्थ कदम्बश्च मुक्तिमण्डपसंकथा ।
विश्वेश विभवश्चाथ ततो यात्रा परिक्रमः ॥

पञ्चमे अवन्ती खण्डे :—

"अतः परं त्ववन्त्याख्यं शृणु खण्डश्च पञ्चकम्।
महाकालवनाख्यानं ब्रह्मशीर्षच्छिदा ततः ॥
प्रायश्चित्तविधिश्चाग्नेरुत्पत्तिश्च समागमः ।
देवदीक्षा शिवस्तोत्रं नानापातकनाशनम् ॥
कपालमोचनाख्यानं महाकालवनस्थितिः ।
तीर्थं कलकलेशस्य सर्व्वपापप्रणाशनम् ॥
कुण्डमप्सरसञ्ज्ञश्च सर्गं रुद्रस्य पुण्यदम् ।
कुटुम्बेशश्च विद्याध्रमर्कटेश्वरतीर्थकम् ॥
स्वर्गद्वारं चतुःसिन्धुतीर्थं शङ्करवापिका ।
सकरार्कः गन्धवती तीर्थं पापप्रणाशनम् ॥
दशाश्वमेधैकानंशा तीर्थं च हरिसिद्धिदम् ।
पिशाचकादि यात्रा च हनूमत्कयमेश्वरौ ॥
महाकालेशयात्रा च वल्मीकेश्वरतीर्थकम् ।
शक्रेशमेशोपाख्यानं कुशस्थल्याः प्रदक्षिणम् ॥
अक्रूरमन्दाकिन्यङ्कपादचन्द्रार्कवैभवम् ।
करमेश कुक्कुटेश लड्डुकेशादि तीर्थकम् ॥
मार्कण्डेशं यज्ञवापी सोमेशं नरकान्तकम् ।

केदारेश्वर रामेश सौभाग्येश नरार्ककम् ॥
केशार्क.शक्तिभेदश्च स्वर्णक्षरमुखानि च ।
ओङ्कारेशादि तीर्थानि अन्धकस्तुतिकीर्त्तनम् ॥
कालारण्ये लिङ्गसंख्या स्वर्णशृङ्गाभिधानकम् ।
कुशस्थल्या अवन्त्याश्चोज्जयिन्या अभिधानकम् ॥
पद्मावती कुमुद्वत्यमरावतीति नामकम् ।
विशाला प्रतिकल्पाभिधाने च ज्वरशान्तिकम् ॥
शिप्रास्नानादिकफलं नागोन्मीता शिवस्तुतिः ।
हिरण्याक्षवधाख्यानं तीर्थं सुन्दरकुण्डकम् ॥
नीलगङ्गा पुष्कराख्यं विन्ध्यावासन तीर्थकम् ।
पुरुषोत्तमाधिमासं तत्तीर्थञ्चाघनाशनम् ॥
गोमती वामने कुण्डे विष्णोर्नाम सहस्रकम् ।
वीरेश्वरसरः कालभैरवस्य च तीर्थके ॥
महिमा नागपञ्चम्यां नृसिंहस्य जयन्तिका ।
कुटुम्बेश्वरयात्रा च देवसाधककीर्त्तनम् ॥
कर्कराजाख्यतीर्थञ्च विघ्नेशादि सुरोहनम् ।
रुद्रकुण्डप्रभृतिषु बहुतीर्थनिरूपणम् ॥
यात्राष्टतीर्थजा पुण्या रेवामाहात्म्यमुच्यते ।
धर्म्मपुण्यस्यवैराग्ये मार्कण्डेयेन सङ्गमः ॥
प्रागलयानुभवाख्यानं अमृता परिकीर्त्तनम् ।
कल्पे कल्पे पृथक् नाम नर्म्मदायाः प्रकीर्त्तितम् ॥
स्तवमार्षं नार्मदञ्च कालरात्रिकथा ततः ।

महादेवस्तुतिः पश्चात् पृथक्कल्पकथाद्भुता ॥
विशल्याख्यानकं पश्चाज्जालेश्वरकथा तथा ।
गौरीव्रतसमाख्यानं त्रिपुरज्वालनन्ततः ॥
देहपातविधानञ्च कावेरीसङ्गमस्ततः ।
दारुतीर्थं ब्रह्मवर्ज्जं यत्रेश्वर कथानकम् ॥
अग्नितीर्थं रवितीर्थं मेघनादं विदारुकम् ।
देवतीर्थं नर्म्मदेशं कपिलाख्य करञ्जकम् ।
कुण्डलेशं पिप्पलादं विमलेशञ्च शूलभित् ॥
शचीहरणमाख्यातमन्धकस्यवधस्ततः ।
शूलभेदोद्भवो यत्र दानधर्म्माः पृथग्विधाः ॥
आख्यानं दीर्घतपसऋष्यशृङ्ग कथा ततः ।
चित्रसेनकथा पुण्या काशिराजस्य मोक्षणम् ॥
ततो देवशिलाख्यानं शवरी चरितान्वितम् ।
व्याधाख्यानं ततः पुण्यं पुष्करिण्यर्कतीर्थकम् ॥
आदित्येश्वर तीर्थञ्च शक्रतीर्थं करोटिकम् ।
कुमारेशमगस्त्येशं च्यवनेशञ्च मातृजम् ॥
लोकेशं धनदेशञ्च मङ्गलेशञ्च कामजम् ।
नागेशञ्चापि गोपारं गौतमं शङ्खचूडजम् ॥
नारदेशं नन्दिकेशं वरुणेश्वरतीर्थकम् ।
दधिस्कन्दादितीर्थानि हनूमन्तेश्वरन्ततः ॥
रामेश्वरादि तीर्थानि सोमेशं पिङ्गलेश्वरम् ।
ऋणमोक्षं कपिलेशं पूतिकेशं जलेशयम् ॥

चण्डार्कयमतीर्थञ्च कल्होडीशञ्च नान्दिकम् ।
नारायणञ्च कोटीशं व्यासतीर्थं प्रभासिकम् ॥
नागेशं सङ्कर्षणकं मन्मथेश्वरतीर्थकम् ।
एरण्डीसङ्गमं पुण्यं सुवर्णशिलतीर्थकम् ॥
करञ्जं कामहं तीर्थं भाण्डीरं रोहिणीभवम् ।
चक्रतीर्थं धौतपापं स्कान्दमाङ्गिरसाह्वयम् ॥
कोटितीर्थमपोन्याख्यमङ्गाराख्यं त्रिलोचनम् ।
इन्द्रेशं कम्बुकेशञ्च सोमेशं कोहनेशकम् ॥
नार्म्मदं चार्कमाग्नेयं भार्गवेश्वरसत्तमम् ।
ब्राह्मं दैवं च भागेशमादि वाराहणंकवे ॥
रामेशमथ सिद्धेश माहात्म्यं कङ्कटेश्वरम् ।
शाकं सौम्यञ्च नान्देशं तापेशं रुक्मिणीभवम् ॥
योजनेशं वराहेशं द्वादशी शिव तीर्थके ।
सिद्धेशं मङ्गलेशञ्च लिङ्गवाराहतीर्थकम् ॥
कुण्डेशं श्वेतवाराहं भार्गवेशं रवीश्वरम् ।
शुक्रादीनि च तीर्थानि हुँकारस्वामितीर्थकम् ॥
सङ्गमेशं नारकेशं मोक्षं सार्पञ्च गोपकम् ।
नागं साम्बञ्च सिद्धेशं मार्कण्डाक्रूरतीर्थके ॥
कामोदशूलारोपाख्यो माण्डव्यं गोपकेश्वरम् ।
कपिलेशं पिंगलेशं भूतेशं गांगगौतमे ॥
आश्वमेधं भृगुकच्छं केदारेशञ्च पापनुत् ।
कनखलेशं जालेशं शालग्रामं वराहकम् ॥

चन्द्रप्रभासमादित्यं श्रीपत्याख्यञ्च हंसकम् ।
मूलस्थानञ्च शूलेशंमाम्नायाचित्रदैवकम् ॥
शिखीशं कोटितीर्थञ्च दशकन्यं सुवर्णकम् ।
ऋणमोक्षं भारभूतिरत्रास्ते पुंखमुण्डिमम् ॥
आमलेशं कपालेशं शृङ्गेरण्डीभवन्ततः ।
कोटितीर्थं लोटनेशं फलस्तुतिरतः परम् ।
द्रुमिजङ्गलमाहात्म्ये रोहिताश्वकथाततः ॥
धुन्धुमारसमाख्यानं वधोपायस्ततोऽस्य च ।
वधो धुन्धोस्ततः पश्चात् सतश्चित्रवहोद्भवः ।
महिमास्य ततश्चण्डीशप्रभावोरतीश्वरः ॥
केदारेशो लक्षतीर्थं ततो विष्णुपदीभवम् ।
मुखारं च्यवनान्धाख्यं ब्रह्मणश्च सरस्ततः ॥
चक्राख्यं ललिताख्यानं तीर्थञ्चबहुगोमथम् ।
रुद्रावर्त्तञ्च मार्कण्डं तीर्थं पापप्रणाशनम् ॥
रावणेशं शुद्धपटं देवान्धुप्रेततीर्थकम् ।
जिह्वोदतीर्थसम्भूतिः शिवोद्भेदं फलस्तुतिः ॥
एष खण्डो ह्यवन्त्याख्यः शृण्वतां पापनाशनः ।

षष्ठे नागरखण्डे :—

"अतः परं नागराख्यः खण्डः षष्ठोऽभिधीयते ।
लिङ्गोत्पत्तिसमाख्यानं हरिश्चन्द्रकथा शुभा ॥
विश्वामित्रस्य माहात्म्यं त्रिशङ्कुस्वर्गतिस्तथा ।
हाटकेश्वरमाहात्म्ये वृत्रासुरवधस्तथा ॥

नागबिलं शङ्खतीर्थमचलेश्वरवर्णनम् ।
चमत्कारपुराख्यानं चमत्कारकरं परम् ।
गयशीर्षं बालशाख्यं बालमण्डं मृगाह्वयम् ॥
विष्णुपादञ्च गोकर्णं युगरूपं समाश्रयः ।
सिद्धेश्वरं नागसरः सप्तार्षेयं ह्यगस्तकम् ॥
भ्रूणगर्त्तंनलेशञ्च भीष्मं दुर्वैरमर्ककम् ।
शार्मिष्ठं सोमनाथञ्च दौर्गमानर्त्तकेश्वरम् ॥
जमदग्निवधाख्यानं नैःक्षत्रियकथानकम् ।
रामह्रदं नागपुरं जड़लिङ्गञ्च यज्ञभूः ॥
मुण्डीरादि त्रिकार्कञ्च सतीपरिणयस्तथा ।
बालखिल्यञ्च यागेशं बालखिल्यञ्च गारुडम् ॥
लक्ष्मीशापः सात्तविंशः सोमप्रासादमेव च ।
अम्बावृद्धं पादुकाख्यमाग्नेयं ब्रह्मकुण्डकम् ॥
गोमुखं लोहयष्ट्याख्यमजापालेश्वरी तथा ।
शानैश्चरं राजवापी रामेशो लक्ष्मणेश्वरः ।
कुशेशाख्यं लवेषाख्यं लिङ्गं सर्व्वोत्तमोत्तमम् ।
अष्टषष्टिसमाख्यानं दमयन्त्यास्त्रिजातकम् ॥
ततोऽम्बारेवती चात्र भट्टिकातीर्थसम्भवम् ।
क्षेमङ्करी च केदारं शुक्लतीर्थं मुखारकम् ॥
सत्यसन्धेश्वराख्यानं तथा कर्णोत्पला कथा ।
अटेश्वरं याज्ञवल्क्यं गौर्य्यं गाणेशमेव च ॥
ततोवास्तुपदाख्यानमजागहकथानकम् ।

सौभग्यान्धकशूलेशं धर्म्मराजकथानकम् ॥
मिष्टान्नदेश्वराख्यानं गाणपत्यत्रयं ततः ।
जाबालिचरितञ्चैव मकरेशकथा ततः ॥
कालेश्वर्य्यन्धकाख्यानं कुण्डमाप्सरसन्तथा ।
पुष्यादित्यं रौहिताश्वं नागरोत्पत्तिकीर्त्तनम् ॥
भार्गवं चरितं चैव वैश्वामित्रं ततः परम् ॥
सारस्वतं पैप्पलादं कंसारीशञ्च पैण्डिकम् ।
ब्रह्मणो यज्ञचरितं सावित्र्याख्यानसंयुतम् ॥
रैवतं भर्तृयज्ञाख्यं मुख्यतीर्थनिरीक्षणम् ।
कौरवं हाटकेशाख्यं प्रभासं क्षेत्रकत्रयम् ॥
पौष्करं नैमिषं धार्म्ममरण्यत्रितयं स्मृतम् ।
वाराणसीद्वारकाख्यावन्त्याख्येति पुरीत्रयम् ॥
वृन्दावनं खाण्डवाख्यं मद्रैकाख्यं वनत्रयम् ।
कल्पः शालस्तथा नन्दीग्रामत्रयमनुत्तमम् ॥
असिशुक्लपितृसञ्ज्ञं तीर्थत्रयमुदाहृतम् ।
श्र्यर्बुदौ रैवतश्चैव पर्व्वतत्रयमुत्तमम् ॥
नदीनां त्रितयं गङ्गा नर्मदा च सरस्वती ॥
सार्द्धकोटित्रयफलमेकैकञ्चैषु कीर्तितम् ।
कूपिका शङ्खतीर्थञ्चामरकं बालमण्डनम् ।
हाटकेशक्षेत्रफलप्रदं प्रोक्तं चतुष्टयम् ॥
शाम्बादित्यं श्राद्धकल्पं यौधिष्ठिरमथान्धकम् ।
जलशायि चतुर्म्मास्यमशून्यशयनव्रतम् ।

मङ्कणेशं शिवरात्रिस्तुलापुरुषदानकम् ।
पृथ्वीदानं बाणकेशं कपालमोचनेश्वरम् ।
पापपिण्डं सप्तलैङ्गं युगमानादिकीर्त्तनम् ।
निम्बेशशाकम्भर्याख्या रुद्रैकादश कीर्त्तनम् ।
दानमाहात्म्यकथनं द्वादशादित्यकीर्त्तनम् ।
इत्येष नागरः खण्डः प्रभासाख्योऽधुनोच्यते ।

सप्तमे प्रभास खण्डे :—

"सोमेशो यत्र विश्वेशोऽर्कस्थलं पुण्यदं महत् ।
सिद्धेश्वरादिकाख्यानं पृथगत्र प्रकीर्त्तितम् ॥
अग्नितीर्थं कपर्द्दीशं केदारेशं गतिप्रदम् ।
भीमभैरवचण्डीशभास्कराङ्गारकेश्वराः ।
बुधेज्यभृगुसौरेन्द्रशिखीशाहरविग्रहाः ।
सिद्धेश्वराद्याः पञ्चान्ये रुद्रास्तत्र व्यवस्थिताः ।
वरारोहा ह्यजापाला मंगला ललितेश्वरी ।
लक्ष्मीशोऽवाड़वेशश्चार्घोशः कामेश्वरस्तथा ॥
गौरीशवरुणेशाख्यमुशीषञ्च गणेश्वरम् ।
कुमारेशश्च शाकल्यं शकुलोतङ्कगौतमम् ॥
दैत्यघ्नेशं चक्रतीर्थं सन्निहत्याह्वयन्तथा ।
भूतेशादीनि लिङ्गानि आदिनारायणाह्वयम् ॥
ततश्चक्रधराख्यानं शाम्बादित्यकथानकम् ।
कथा कण्टकशोधिन्या महिषघ्न्यास्ततः परम् ॥
कपालीश्वरकोटीशबालब्रह्माह्वसत् कथा ।

नरकेश सम्वर्त्तेश निधीश्वरकथा ततः ।
बलभद्रेश्वरस्याथ गंगाया गणपस्य च ।
जाम्बवत्याख्यसरितः पाण्डुकूपस्यसत्कथा ।
शतमेघलक्षमेघकोटिमेघकथा तथा ।
दुर्व्वासार्कयदुस्थान हिरण्यासंगमोत्कथा ॥
नगरार्कस्य कृष्णस्य सङ्कर्षणसमुद्रयोः ।
कुमार्य्याः क्षेत्रपालस्य ब्रह्मेशस्य कथा पृथक् ॥
पिंगला संगमेशस्य शंकरार्कघटेशयोः ।
ऋषितीर्थस्य नन्दार्कत्रितकूपस्य कीर्त्तनम् ॥
शशोपानस्य पर्णार्कन्यङ्कुमत्योः कथाद्भुता ।
वाराहस्वामिवृत्तान्तं छायालिंगाख्यगुल्फयोः ।
कथा कनकनन्दायाः कुन्तीगंगेशयोस्तथा ॥
चमसोद्भेदविदुरत्रिलोकेशकथा ततः ।
मङ्कणेश त्रैपुरेश षण्डतीर्थ कथा तथा ॥
सूर्यप्राचीत्रीक्षणयोरुमानाथ कथा तथा ।
भूद्वारशूलस्थलयोश्च्यवनार्केशयोस्तथा ।
अजापालेशबालार्ककुबेरस्थलजा कथा ॥
ऋषितोया कथा पुण्या संगालेश्वरकीर्त्तनम् ।
नारदादित्यकथनं नारायणनिरूपणम् ॥
तप्तकुण्डस्य माहात्म्यं मूलचण्डीशवर्णनम् ।
चतुर्वक्त्र गणाध्यक्ष कलम्बेश्वरयोः कथा ।
गोपालस्वामिवकुलस्वामिनोर्म्मरुती कथा ।

क्षेमार्कोन्नतविघ्नेशजलस्वामिकथा तथा ।
कालमेघस्य रुक्मिण्या उर्वशीश्वरभद्रयोः ॥
शङ्खावर्त्तमोक्षतीर्थं गोष्पदाच्युतसद्मनाम् ।
जालेश्वरस्य हुङ्कारकूपचण्डीशयोः कथा ।
आशापुरस्थविघ्नेशकलाकुण्डकथाऽद्भुता ॥
कपिलेशस्य च कथा जरद्गवशिवस्य च ।
नलकर्कोटकेश्वरयोर्हाटकेश्वरजा कथा ॥
नारदेशमन्त्रभूषा दुर्गकूटगणेशजा ।
सुपर्णलाख्यभैरव्योर्मल्लतीर्थभवा कथा ॥
कीर्त्तनं कर्दमालस्य गुप्तसोमेश्वरस्य च ।
बहुस्वर्णेशशृङ्गेश कोटीश्वरकथा ततः ।
मार्कण्डेश्वरकोटीश दामोदरगृहोत्कथा ।
स्वर्णरेखा ब्रह्मकुण्डं कुन्तीभीमेश्वरौ तथा ॥
मृगीकुण्डश्च सर्वस्वं क्षेत्रे वस्त्रापथे स्मृतम् ।
दुर्वाबिल्वेशगंगेशरैवतानां कथाऽद्भुता ॥
ततोऽर्बुदेश्वरकथा अचलेश्वरकीर्त्तनम् ।
नागतीर्थस्य च कथा वशिष्ठाश्रमवर्णनम् ।
भद्रं कर्णस्य माहात्म्यं त्रिनेत्रस्य ततः परम् ॥
केदारस्य च माहात्म्यं तीर्थागमनकीर्त्तनम् ।
कोटीश्वररूपतीर्थहृषीकेशकथा ततः ।
सिद्धेश शुक्रेश्वरयोर्म्मणिकर्णीशकीर्त्तनम् ॥
पंगुतीर्थ-यमतीर्थ-वाराहतीर्थवर्णनम् ।

चन्द्रप्रभासपिण्डोद श्रीमाता शुक्रतीर्थजम् ॥
कात्यायन्याश्च माहात्म्यं ततः पिण्डारकस्य च ।
ततः कनखलस्याथ चक्रमानुषतीर्थयोः ॥
कपिलाग्नितीर्थकथा तथा रक्तानुबन्धजा ।
गणेशपार्थेश्वरयोर्यात्राया मुद्गलस्य च ॥
चण्डीस्थानं नागभवशिरः कुण्डमहेशजा ।
कामेश्वरस्य मार्कण्डेयोत्पत्तेश्च कथा ततः ॥
उद्दालकेश सिद्धेश गततीर्थकथा पृथक् ।
श्रीदेवमातोत्पत्तिश्च व्यासगौतमतीर्थयोः ॥
कुलसन्तारमाहात्म्य रामकोट्याव्हतीर्थयोः ।
चन्द्रोद्भेदेशानशृङ्ग ब्रह्मस्थानोद्भवोहनम् ॥
त्रिपुष्कर-रुद्रहृद-गुहेश्वर-कथा शुभा ।
अविमुक्तस्य माहात्म्यमुमामाहेश्वरस्य च ॥
महौजसः प्रभावश्च जम्बुतीर्थस्य वर्णनम् ।
गङ्गाधरमिश्रकयोः कथाचाथ फलश्रुतिः ॥
द्वारकायाश्च माहात्म्ये चन्द्रशर्मकथानकम् ।
जागराद्याख्यव्रतञ्च व्रतमेकादशीभवम् ।
महाद्वादशीकाख्यानं प्रह्लादर्षि समागमः ।
दुर्वासस उपाख्यानं यात्रोपक्रमकीर्त्तनम् ॥
गोमत्युत्पत्तिकथनं तस्यां स्नानादिजम्फलम् ।
चक्रतीर्थस्य माहात्म्यं गोमत्युदधिसङ्गमः ॥
सनकादिहृदाख्यानं नृगतीर्थकथा ततः ।

गोप्रचारकथा पुण्या गोपीनां द्वारकागमः ।
गोपीसंरः समाख्यानं ब्रह्मतीर्थादिकीर्त्तनम् ।
पञ्चनद्यागमाख्यानं नानाख्यानसमन्वितम् ।
शिवलिङ्गमहातीर्थकृष्णपूजादिकीर्त्तनम् ।
त्रिविक्रमस्य मूर्त्त्याख्या दुर्वासः कृष्णसंकथा ।
कुशदैत्यवधोऽर्थाख्या विशेषार्च्चनजम्फलम् ।
गोमत्यां द्वारकायाञ्च तीर्थागमनकीर्त्तनम् ।
कृष्णमन्दिरसंप्रेक्षा द्वारवत्यभिषेचनम् ।
तत्र तीर्थावासकथा द्वारका पुण्यकीर्त्तनम् ।
इत्येष सप्तमः प्रोक्तः खण्डः प्राभासिकोद्विजः ।
स्कान्दे सर्वोत्तरकथा शिवमाहात्म्यवर्णने ।

तत्फलश्रुति :—

लिखित्वैतत्तु यो दद्याद्धेमशूलसमाचितम् ।
माघ्यां सत्कृत्य विप्राय स शैवे मोदते पदे ॥

गरुड़पुराणम्

गरुड़ायोक्तं विष्णुना पुराणम् नारदीयपुराणे १०८ अध्याये तद्विषयाश्च

ब्रह्मोवाच—मरीचे ! शृणुवच्म्यद्य पुराणं गारुड़ं शुभम् ।
गरुड़ायाब्रवीत्पृष्टो भगवान्गरुड़ासनः ॥

एकोनविंशसाहस्रं तार्क्ष्यकल्पकथाचितम् ॥

तत्र पूर्वखण्डे :—

पुराणोपक्रमो यत्र सर्गः संक्षेपतस्ततः ।
सूर्यादिपूजनविधि दीक्षाविधिरतः परम् ।
श्र्यादिपूजा ततः पश्चान्नवव्यूहार्च्चनं द्विज ।
पूजाविधानञ्च वैष्णवं तथा पञ्जरन्ततः ।
योगाध्यायस्ततो विष्णो र्नामसाहस्रकीर्त्तनम् ।
ध्यानं विष्णोस्ततः सूर्यपूजामृत्युञ्जयार्च्चनम् ।
माला मंत्रा शिवार्च्चाथ गणपूजा ततः परम् ।
गोपालपूजा त्रैलोक्यमोहनं श्रीधरार्च्चनम् ।
विष्णवर्च्चा पञ्चतत्त्वार्च्चा चक्रार्च्चा देवपूजनम् ।
न्यासादि सन्ध्योपास्तिश्च दुर्गार्च्चाथसुरार्चनम् ।
पूजा माहेश्वरी चातः पवित्रारोहणार्च्चनम् ।
मूर्तिध्यानं वास्तुमानं प्रासादानाञ्च लक्षणम् ।
प्रतिष्ठा सर्वदेवानां पृथक् पूजाविधानतः ।
योगोऽष्टाङ्गो दानधर्मः प्रायश्चित्तविधिक्रिया ।
द्वीपेशनरकाख्यानं सूर्यव्यूहश्च ज्यौतिषम् ।
सामुद्रिकं स्वरज्ञानं नवरत्नपरीक्षणम् ।
माहात्म्यमथ तीर्थानां गयामाहात्म्यमुत्तमम् ।
ततो मन्वन्तराख्यानं पृथक्पृथग्विभागशः ।
पित्राख्यानं वर्णधर्मा द्रव्यशुद्धिःसमर्पणम् ।
श्राद्धं विनायकस्यार्चा ग्रहयज्ञस्तथाऽऽश्रमाः ।

मल्लाख्या प्रेताशौचं नीतिसारोव्रतोक्तयः ।
सूर्यवंशः सोमवंशोऽवतारकथनं हरेः ।
रामायणं हरिवंशो भारताख्यानकन्ततः ।
आयुर्वेदे निदानम्प्राक् चिकित्साद्रव्यजागुणाः ।
रोगघ्नं कवचं विष्णो गारुडस्त्रैपुरोमनुः ।
प्रश्नचूडामणिश्चान्ते हयायुर्वेदकीर्त्तनम् ।
ओषधीनामकथनं ततो व्याकरणोहनम् ।
छन्दः शास्त्रं सदाचारस्ततः स्नानविधिःस्मृतः ।
तर्पणं वैश्वदेवञ्च सन्ध्यापार्वणकर्म च ।
नित्यश्राद्धं सपिण्डाख्यं धर्मसारोऽघनिष्कृतिः ।
प्रतिसङ्क्रम उक्तोऽस्माद् युगधर्माः कृतेः फलम् ।
योगशास्त्रं विष्णुभक्तिर्नमस्कृति फलं हरेः ।
माहात्म्यं वैष्णवञ्चाथ नारसिंहस्तवोत्तमम् ।
ज्ञानामृतं गुह्याष्टकं स्तोत्रं विष्णवर्च्चनाह्वयम् ।
वेदान्तसांख्यसिद्धान्तं ब्रह्मज्ञानात्मकं तथा ।
गीतासारः फलोत्कीर्त्तिः पूर्वखण्डोऽयमीरितः ।

उत्तरखण्डे प्रेतकल्पे :—

अथास्यैवोत्तरे खण्डे प्रेतकल्पः पुरोदितः ।
यत्र तार्क्ष्येण संस्पृष्टो भगवानाह वाडवः ।
धर्मप्रकटनं पूर्वं योनीनां गतिकारणम् ।
दानादिकफलञ्चापि प्रोक्तमत्रौर्ध्वदेहिकम् ।

यमलोकस्य मार्गस्य वर्णनञ्च ततः परम् ।
षोडशश्राद्धफलकं वृत्तान्ताञ्चात्र वर्णितम् ।
निष्कृतिर्यममार्गस्य धर्मराजस्य वैभवम् ।
प्रेतपीड़ा विनिर्देशः प्रेतचिन्हनिरूपणम् ।
प्रेतानां चरिताख्यानं कारणम्प्रेततां प्रति ।
प्रेतकृत्यविचारश्च सपिण्डीकरणोक्तयः ।
प्रेतत्वमोक्षणाख्यानं दानानि च विमुक्तये ।
आवश्यकोत्तरं दानं प्रेतसौख्यकरं हितम् ।
शारीरकविनिर्देशो यमलोकस्य वर्णनम् ।
प्रेतत्वोद्धारकथनं कर्मकर्तृ विनिर्णयः ।
मृत्योः पूर्वक्रियाख्यानं पश्चात्कर्मनिरूपणम् ।
मध्यं षोडशकं श्राद्धं स्वर्गप्राप्तिक्रियोहनम् ।
सूतकस्याथ संख्यानं नारायणबलिक्रिया ।
वृषोत्सर्गस्य माहात्म्यं निषिद्धपरिवर्जनम् ।
अपमृत्युक्रियोक्तिश्च विपाकः कर्मणां नृणाम् ।
कृत्याकृत्यविचारश्च विष्णुध्यानं विमुक्तये ।
स्वर्गतौ विहिताख्यानं स्वर्गसौख्यनिरूपणम् ।
भूर्लोकवर्णनञ्चैव सप्तधालोक वर्णनम् ।
पञ्चोर्ध्वलोककथनं ब्रह्माण्डस्थिति कीर्त्तनम् ।
ब्रह्माण्डानेकचरितं ब्रह्मजीवनिरूपणम् ।
आत्यन्तिकलयाख्यानं फलस्तुतिनिरूपणम् ।
इत्येतद्गारुडंनाम पुराणंभुक्तिमुक्तिदम् ॥

तत्फलश्रुति :—

कीर्तितं पापशमनं पठतां शृण्वतां नृणाम् ।
लिखित्वैतत्पुराणन्तु विषुवे यः प्रयच्छति ॥
सौवर्ण हंसयुग्माढ्यं विप्राय स दिवं व्रजेत् ।

ब्रह्माण्डपुराणम्

नारदीय पुराणे ४ पा० १०६ अध्याय उक्ता

अस्य विषयाः ।

शृणु वत्स ! प्रवक्ष्यामि ब्रह्माण्डाख्यं पुरातनम् ।
तच्च द्वादशसाहस्रं भाविकल्पकथायुतम् ॥
प्रक्रियाख्योऽनुषङ्गाख्य उपोद्घातस्तृतीयकः ।
चतुर्थ उपसंहारः पादाश्चत्वार एव हि ॥
पूर्वपादद्वयं पूर्वो भागोऽत्र समुदाहृतः ।
तृतीयोमध्यमो भागश्चतुर्थस्तूत्तरोमतः ॥

तत्रपूर्वभागे प्रक्रियापादे :—

"आदौ कृत्यसमुद्देशो नैमिषाख्यानकं ततः ।
हिरण्यगर्भोत्पत्तिश्च लोककल्पनमेव च ॥
एष वै प्रथमःपादो द्वितीयं शृणु नारद ।

पूर्वभागेऽनुषङ्गपादे :—

कल्पमन्वन्तराख्यानं लोकज्ञानं ततः परम् ।
मानस सृष्टिकथनं रुद्रप्रसववर्णनम् ॥

महादेवविभूतिश्च ऋषिसर्गस्ततः परम् ।
अग्नीनां विचयश्चाथ कालसद्भाववर्णनम् ॥
प्रियव्रतान्वयोद्देशः पृथिव्या याम विस्तरः ।
वर्णनं भारतस्यास्य ततोऽन्येषां निरूपणम् ॥
जम्बादिसप्तद्वीपाख्या ततोऽधोलोकवर्णनम् ।
ऊर्ध्वलोकानुकथनं ग्रहचारस्ततः परम् ॥
आदित्यव्यूहकथनं देवग्रहानुकीर्त्तनम् ।
नीलकण्ठाह्वयाख्यानं महादेवस्य वैभवम् ॥
अमावास्यानुकथनं युगतत्त्वनिरूपणम् ।
यज्ञप्रवर्तनञ्चाथ युगयोरन्त्ययोः कृतिः ॥
युगप्रजालक्षणञ्च ऋषिप्रवरवर्णनम् ।
वेदानां व्यसनाख्यानं स्वायम्भुवनिरूपणम् ॥
शेषमन्वन्तराख्यानं पृथिवीदोहनन्ततः ।
चाक्षुषेऽद्यतने सर्गो द्वितीयोऽङ्घ्रि पुरोदले ॥

मध्यभागे उपोद्घात पादे :—

"अथोपोद्घातपादे च सप्तर्षिपरिकीर्त्तनम् ।
राजापत्यन्वयस्तस्माद्देवादीनां समुद्भवः ॥
ततो जयाभिव्याहारौ मरुदुत्पत्तिकीर्त्तनम् ।
काश्यपेयानुकथनं ऋषिवंशनिरूपणम् ॥
पितृकल्पानुकथनं श्राद्धकल्पस्ततः परम् ।
वैवस्वतसमुत्पत्तिस्सृष्टिस्तस्य ततः परम् ॥
मनुपुत्रान्वयश्चातो गान्धर्वश्च निरूपणम् ।

इक्ष्वाकुवंशकथनं वंशोऽत्रेःसुमहात्मनः ॥
अमावसोरान्वयश्च रजेश्चरितमद्भुतम् ।
ययातिचरितञ्चाथ यदुवंशनिरूपणम् ॥
कार्तवीर्यस्यचरितं जामदग्न्यं ततः परम् ।
वृष्णिवंशानुकथनं सगरस्याथ सम्भवः ॥
भार्गवस्यानुचरितं तथार्यकवधाश्रयम् ।
सगरस्याथचरितं भार्गवस्य कथा पुनः ॥
देवासुराहवकथाः कृष्णाविर्भाववर्णनम् ।
इनस्य च स्तवः पुण्यः शुक्रेण परिकीर्तितः ॥
विष्णुमाहात्म्यकथनं बलीवंशनिरूपणम् ।
भविष्यराजचरितं सम्प्राप्तेऽथकलौ युगे ॥
एवमुद्घातपादोऽयं तृतीयो मध्यमे दले ।

उत्तरभागे उपसंहार पाद :—

चतुर्थमुपसंहारं वक्ष्ये खण्डे तथोत्तरे ॥
वैवस्वतान्तराख्यानं विस्तरेण यथातथम् ।
पूर्वमेव समुद्दिष्टं संक्षेपादिह कथ्यते ॥
भविष्याणां मनूनांच चरितं हि ततः परम् ।
कल्पप्रलय निर्देशः कालमानं ततः परम् ॥
लोकाश्चतुर्दश ततः कथिता मानलक्षणैः ।
वर्णनं नरकाणाञ्च विकर्माचरणैस्ततः ॥
मनोमयपुराख्यानं लयः प्राकृतिकस्ततः ।
शैवस्याथ पुरस्यापि वर्णनञ्च ततः परम् ॥

त्रिविधाद् गुणसम्बन्धाज्जन्तूनां कीर्तिता गतिः ।
अनिर्देश्या प्रतर्क्यस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ॥
अन्वय व्यतिरेकाभ्यां वर्णनं हि ततः परम् ।
इत्येष उपसंहारः पादो वृत्तः सचोत्तरः ॥
चतुष्पादं पुराणन्ते ब्रह्माण्डं समुदाहृदम् ।
अष्टादशमनौपम्यं सारात्सारतरं द्विजः ! ॥
ब्रह्मांडञ्चचतुर्लक्षं पुराणत्वेन पठ्यते ।
तदेव व्यस्य गदितमत्राष्टादशधा पृथक् ॥
पाराशर्येण मुनिना सर्वेषामपि मानद ।
वस्तुदृष्ट्वाथ तेनैव मुनीनां भावितात्मनाम् ॥
मत्तः श्रुत्वा पुराणानि लोकेभ्यः प्रचकाशिरे ।
मुनयो धर्मशीलास्ते दीनानुग्रहकारिणः ॥
मया चेदं पुराणन्तु वशिष्ठाय पुरोदितम् ।
तेन शक्तिसुतायोक्तं जातूकार्णाय तेन च ॥
व्यासो लब्ध्वा ततश्चैतत् प्रभञ्जनमुखोद्गतम् ।
प्रमाणीकृत्यलोकेऽस्मिन् प्रावर्त्तयदनुत्तमम् ॥

तत्फलश्रुति :—

य इद कीर्तयेद्वत्स ! शृणोति च समाहितः ।
स विधूयेह पापानि याति लोकमनामयम् ॥
लिखित्वै तत् पुराणन्तु स्वर्णसिंहासनस्थितम् ।
पात्रेणाच्छादितं यस्तु ब्राह्मणाय प्रयच्छति ॥
स याति ब्रह्मणोलोकं नात्र कार्या विचारणा ।

मरीचे ! ऽष्टादशैतानि मया प्रोक्तानि यानि ते ॥
पुराणानि तु संक्षेपाच्छ्रोतव्यानि च विस्तरात् ।
अष्टादश पुराणानि यः शृणोति नरोत्तमः ॥
कथयेद्वा विधानेन नेह भूयः स जायते ।
सूत्रमेतत्पुराणानां यन्मयोक्तं तवाऽधुना ॥
तन्नित्यं शीलनीयं हि पुराणं फलमिच्छता ।
न दाम्भिकाय पापाय देवगुर्वनुसूयवे ।
देयं कदापि साधूनां द्वेषिणे न शठाय च ।
शान्तायारागिचित्ताय शुश्रूषाभिरताय च ॥
निर्मत्सराय शुचये देयं सद्वैष्णवाय च ।

विष्णुभागवतम् ।

तत्प्रतिपाद्यविषयाश्च नारद पु० ९६ अ० उक्ता यथा—

मरीचे ! शृणु वक्ष्यामि वेदव्यासेन यत्कृतम् ।
श्रीमद्भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसंमितम् ॥
तदष्टादशसाहस्रं कीर्त्तितं पापनाशनम् ।
सुरपादपरूपोऽयं स्कन्धैर्द्वादशभिर्युतः ॥
भगवानेव विप्रेन्द्र ! विश्वरूपी समीरितः ।

तस्य प्रथमस्कन्धः :—

तत्र तु प्रथमे स्कन्धे सूतर्षीणां समागमः ।
व्यासस्य चरितं पुण्यं पाण्डवानां तथैव च ॥
पारीक्षितमुपाख्यानमितीदं समुदाहृतम् ।"

द्वितीयस्कन्धे :—

"परीक्षिच्छुकसम्वादे सृतिद्वयनिरूपणम् ।
ब्रह्मनारदसंवादेऽवतारचरितामृतम् ॥
पुराणलक्षणञ्चैव सृष्टिकारणसम्भवः ।
द्वितीयोऽयंसमुदितः स्कन्धो व्यासेन धीमता ॥"

तृतीयस्कन्धे :—

"चरितं विदुरस्याथ मैत्रेयेणास्य सङ्गमः ।
सृष्टिप्रकरणं पश्चाद्ब्रह्मणः परमात्मनः ॥
कापिलं सांख्यमप्यत्र तृतीयोऽयमुदाहृतः ।

चतुर्थस्कन्धे :—

"सत्याश्चरितमादौ तु ध्रुवस्यचरितं ततः ।
पृथोः पुण्यसमाख्यानं ततः प्राचीनबर्हिषः ॥
इत्येष तुर्य्यो गदितो विसर्गे स्कन्ध उत्तमः ।"

पञ्चमस्कन्धे :—

"प्रियव्रतस्य चरितं तद्वंश्यानाञ्च पुण्यदम् ।
ब्रह्माण्डान्तर्गतानाञ्च लोकानां वर्णनन्ततः ॥
नरकस्थितिरित्येव संस्थाने पञ्चमोमतः ।

षष्ठस्कन्धे :—

अजामिलस्य चरितं दक्षसृष्टिनिरूपणम् ।
वृत्राख्यानं ततःपश्चान्मरुतां जन्म पुण्यदम् ॥
षष्ठोऽयमुदितःस्कन्धो व्यासेन परिपोषणे ।

सप्तमस्कन्धे :—

"प्रह्लादचरितंपुण्यं वर्णाश्रमनिरूपणम् ।
सप्तमोगदितो वत्स ! वासनाकर्मकीर्त्तने ॥

अष्टमस्कन्धे :—

"गजेन्द्रमोक्षणाख्यानं मन्वन्तरनिरूपणम् ।
समुद्रमथनञ्चैव बलिवैभवबन्धनम् ॥
मत्स्यावतारचरितमष्टमोऽयं प्रकीर्त्तितः ।

नवमस्कन्धे :—

"सूर्यवंशसमाख्यानं सोमवंशनिरूपणम् ।
वंश्यानुचरिते प्रोक्तो नवमोऽयं महामते ॥

दशमस्कन्धे :—

"कृष्णस्य बालचरितं कौमारञ्च व्रजस्थितिः ।
कैशोरं मथुरास्थानं यौवने द्वारकास्थितिः ॥
भूभारहरणञ्चात्र निरोधे दशमः स्मृतः ।

एकादशस्कन्धे :—

"नारदेन तु संवादो वसुदेवस्य कीर्तितः ।
यदोश्च दत्तात्रेयेण श्रीकृष्णेनोद्धवस्य च ॥
यादवानां मिथोऽन्तश्च मुक्तावेकादशः स्मृतः ।

द्वादशस्कन्धे :—

"भविष्यकलिनिर्देशो मोक्षो राज्ञः परीक्षितः ।
वेदशाखाप्रणयनं मार्कण्डेयतपः स्मृतम् ॥

सौरी विभूतिरुदिता सात्त्वती च ततःपरम् ।
पुराणसंख्याकथनमाश्रये द्वादशो ह्यहम् ॥
इत्येवं कथितं वत्स ! श्रीमद्भागवतं तव ।

तत्फलश्रुतिः :—

"वक्तुः श्रोतुश्चोपदेष्टुरनुमोदितुरेव च ।
साहाय्यकर्तुर्गदितं भक्तिभुक्तिविमुक्तिदम् ॥
प्रौष्ठपद्यां पूर्णिमायां हेमसिंहसमाचितम् ।
देयं भागवतायेदं द्विजाय प्रीतिपूर्वकम् ॥
सम्पूज्य वस्त्रहेमाद्यैर्भगवद्भक्तिमिच्छता ।
सोऽप्यनुक्रमणीमेतां श्रावयेच्छृणुयात्तथा ॥
स पुराणश्रवणजं प्राप्नोति फलमुत्तमम् ।

अष्टादशपुराणानामनुक्रमतोऽ वतरणवर्णनम्वायुपुराणे प्रतिपादितम् :—

सर्वपापहरं पुण्यं पवित्रं च यशस्वि च ।
ब्रह्मा ददौ शास्त्रमिदं पुराणं मातरिश्वने ॥ ५८ ॥
तस्माच्चोशनसा प्राप्तं तस्माच्चापि बृहस्पतिः ।
बृहस्पतिस्तु प्रोवाच सवित्रे तदनन्तरम् ॥ ५९ ॥
सविता मृत्यवे प्राह मृत्युश्चेन्द्राय वै पुनः ।
इन्द्रश्चापि वशिष्ठाय सोऽपि सारस्वताय च ॥ ६० ॥
सारस्वतस्त्रिधाम्ने च त्रिधामा च शरद्वते ।
शरद्वतस्त्रिविष्टाय सोऽन्तरिक्षाय दत्तवान् ॥ ६१ ॥

८—

वर्षिणे चान्तरिक्षो वै सोऽपि त्रय्यारुणाय च।
त्रय्यारुणो धनञ्जये सच प्रादात्कृतञ्जये ॥ ६२ ॥
कृतञ्जयात्तृणंजयो [भरद्वाजाय सोऽप्यथ।
गौतमाय भरद्वाजः सोऽपि निर्यन्तरे पुनः ॥ ६३ ॥
निर्यन्तरस्तु प्रोवाच तथा वाजश्रवाय च।
स ददौ सोममुष्माय स ददौ तृणबिन्दवे ॥ ६४ ॥
तृणबिन्दुस्तु दक्षाय दक्षः प्रोवाच शक्तये।
शक्तेः पराशरश्चापि गर्भस्थः श्रुतवानिदम् ॥ ६५ ॥
पराशराज्जातुकर्णस्तस्माद्द्वैपायनः प्रभुः।
द्वैपायनात्पुनश्चापि]मया प्रोक्तं द्विजोत्तमाः ॥६६॥

शांशपायन उवाच :—

मया वै तत्पुनः प्रोक्तं पुत्रायामितबुद्धये।
इत्येव वाचा ब्रह्मादिगुरुणा समुदाहृताः॥

———

पुराण परिचय (परिशिष्ट)

कतिपय सम्मतयः

एफ० मैक्समूलरः प्रतिपादयति स्वकीय ग्रन्थे

India what can it teach us.

By Rt. Hon.
F. Maxmuller,
(Longmans Green & Co.)
India, 1919.

COLLECTED WORKS

नामके

Page 3

"If I were to look over the whole world to find out the country richly endowed with all the wealth, power and beauty that nature can bestow—in some parts a very paradise on earth—I should point to India. If I were

---

यदि सारे संसार भर में मुझे ऐसे देश को खोजने के लिये कहा जाय जो धन, जन और प्राकृतिक सौन्दर्य साधन सम्पत्ति से परिपूर्ण हो और कुछ अंश में पृथ्वी पर स्वर्ग सदृश हो तो मेरा केन्द्र बिन्दु भारत होगा। यदि मुझे यह पूछा जाय कि विश्व में मानव मस्तिष्क के अधिकाधिक पवित्रतम स्वच्छन्द

asked under what sky the human mind has most freely developed some of its choicest gifts, has most deeply pondered on the greatest problems of life and has found solutions of some of them which will deserve the attention even of those who have studied Plato and Kant I should point to India.

And if I were to ask myself from what literature we here in Europe, we, who have been nurtured almost exclusively on the thoughts of Greeks and Romans and of one Semitic race the jewish, may draw that

---

विकास की सुन्दरतम भेंट कौन से देश को प्राप्त हुई और किस देश के निवासियों ने जीवन की महती समस्याओं पर गम्भीर रूप से विचार किया है और उनका निश्चित समाधान भी पूर्ण रूप से प्राप्त कर लिया जिसके लिये प्लेटो और काण्ट जैसे दार्शनिकों की रचनाओंके प्रेमी भी अपने को अध्ययन करने का अधिकारी मानते हैं तो मेरा सङ्केत भारत भूमि के लिये होगा।

और यदि मुझे फिर एक प्रश्नवाचक चिन्ह द्वारा यह कहा जाय कि यूरोप में हमलोगों ने जिनके आदर्श पूर्णतया ग्रीस और रोमन जाति की विचार धारा पर आश्रित हैं और यहूदी जाति से भी प्रेरणा प्राप्त की हैं ऐसे सभी को किस साहित्य द्वारा

corrective which is most wanted in order to make our inner life more perfect, more comprehensive, more universal, in fact, more lively human—a life not for this life only, but a transfigured and eternal life—again I should point to India.

14

That very Sanskrit the study of which may at first seem so tedious to you and so useless, if only you will carry it on, as you may carry it on here at Cambridge better than anywhere else, open before you large

पूर्णता प्राप्ति की आन्तरिक रूप से पूर्ण बनने की, सर्वांशतः सार्वभौम और विकसनशील बनने की प्रेरणा मिली है। वास्तव में ऐहिक जीवन के सम्बन्ध में ही नहीं बल्कि आमुष्मिक सत्य शाश्वत जीवन के लिये महत्त्व पूर्ण साहित्य से देन मिली तो मेरा सङ्केत फिर भी भारत ही होगा।

१४

यह संस्कृत भाषा का अध्ययन ही है जो पहले आपलोगों को कठिन परिश्रमसाध्य और अनुपयोगी लगता है यदि इसका सतत स्वाध्याय जैसा आपलोग कैम्ब्रिज में करते हैं वैसी ही गति और उत्साह से सदा ही करते रहे तो आपके सामने ऐसी साहित्यक उन्मेष की गवेषणा दृष्टिगोचर होगा जो अभी तक

layers of literature as yet almost unknown and unexplored and allow you an insight into strata of thought deeper than any you have known before and rich in lessons that appeal to the deepest sympathies of the human heart.

"India occupies a place second to no other country."

15

Whatever sphere of the human mind you may select for your special study, whether it be language, or religion, or mythology or philosophy, whether it be laws or customs, primitive

---

अज्ञाय और अनुसन्धान रहित थी और अन्तदर्शन की ऐसी सूक्ष्म क्षमता प्रदान करेगी अब शिक्षाप्रद उपदेशों से हमें उदात्त मानव बनने की बरा बर प्रेरणा मिलती रहेगी, मानव हृदय की गम्भीर सहानुभूतियों को भी पूर्णतया प्रभावित करती है।

सत्यान्वेषण के मार्ग में भारत राष्ट्र का ही सर्व प्रथम प्रमुख स्थान है।

मानव मस्तिष्क के विकास की कोई भी देश को अपने विशेष अध्ययन के लिये हम क्यों न ले भले ही यह भाषा हो, धर्म हो, पौराणिक गाथा हो, दर्शन हो, व्यवहार हो, रीति-नीति हो या आरम्भिक कला या विज्ञान हो हमें उसका स्रोत भारत ही

art or primitive science, everywhere you have to go to India ; whether you like it or not, because some of the most valuable and most instructive materials in the history of man are treasured up in India, and in India only."

August wilhelm fon Schleger :—

It is perhaps the deepest and loftiest thing the world has to show.

"Schopen Hauer. The production of the highest Human Wisdom."

"Almost Super—Human Conception."

"It is the most satisfying and elevating reading (with the exception of the original texts) which is possible in the world ; it has been the solace of my life and will be the solace of my death."

मिलेगा। आप इस में सहमत हों या न हों सबसे अधिक मूल्यवान् और सर्वाधिक शिक्षाप्रद सामग्री जो मानव के इतिहास में उपलब्ध होती है उसकी सञ्चित निधि केवल भारत में ही है अन्यत्र नहीं।

आगष्ट विल्हेल्म फोनश्लेगर कहते हैं—भारत की आध्यात्मिक विशेषता गम्भीर और उदात्त वस्तुतत्त्वों की संसार को देन है।

शोपेन हावर कहता है—भारतीय दर्शन मनुष्य की उन्नतम विकसित बुद्धि का अपूर्व आदर्श है जो कि विचारांश में अतिमानव प्रायः है।

"Now, if Einstein is right, or even partly right no physicists before his time knew quite well what they were talking about. When they used the ideas of distance and time and practically every statement that they made which purported to be accurate was false."

Possible worlds by
J. B. S. Haldane

Science is not yet in contact with ultimate reality.

वह यह भी सम्मति देता है कि उपनिषद् साहित्य का अध्ययन सन्तोष दायक, उन्नायक विचारों से पूर्ण है इसका स्वाध्याय जैसे मुझे जीवन में शान्ति और स्फूर्तिदायक हुआ यह मृत्यु शय्या पर भी वैसे ही शान्तिदायक होगा।

यदि सापेक्षवाद का अनुसन्धान कर्ता आइन्स्टीन ठीक हो या अंशत ठीक हो तो कोई भी विज्ञान नेता इस के पूर्व इस से अनभिज्ञ था कि आजकल वैज्ञानिक लोग क्या क्या नई गवेषणा कर रहे हैं। जब उन्होंने दूरी समय औसतसम्बन्धी प्रत्येक विवरण तैयार किया और जिसे उस समय बिल्कुल ठीक बतलाते थे आज मिथ्या मालूम होता है।

—जी० बी० एस० हाल्डेन

विज्ञान अभी तक पूर्ण सत्य के सम्पर्क में नहीं आया है।

Once more then, if we mean by primitive, people who inhabited this earth as soon as the vanishing of the glacial period make this earth inhabitable, the Vedic poets were certainly not primitive. If we mean by primitive, people who were without a knowledge of fire, who used unpolished flints, and ate raw flesh, the Vedic poets were not primitive. If we mean by primitive, people who did not cultivate soil, had no fixed abodes, no kings, no sacrifices, no laws, again I say, the Vedic poets were not primitive. But if we mean by primitive the people who have been the first of the Aryan race to leave behind literary relics of their existence

---

एक बार फिर यदि हम आरम्भिक से ऐसे लोगोंको समझें जिन्होंने आदि कालमें सृष्टिको निवास योग्य बनाया तो वैदिक ऋषि आरम्भिक नहीं थे। पुनः यदि हमारा अभिप्राय आदि निवासी से ऐसी जातिका हो जिन्हें अग्निका ज्ञान नहीं था जो खरदरे चकमकसे अग्नि जलाते थे और कच्चा मांस खाते थे तो इस अर्थ में वैदिक ऋषि आदिकालीन नहीं थे। पुनः यदि हमारा यह अभिप्राय हो कि वे ऐसे आदिवासी थे जिन्होंने भूमि पर हल नहीं चलाया; न स्थिरनिवासकी योजना की; न उनके राजा थे;न वे यज्ञकरते थे और न उनकेलिये राज्यके नियन्त्रण करनेवाले

on earth, then I say the Vedic poets are primitive, the Vedic language is primitive, the Vedic religion is primitive, and taken as a whole, more primitive than anything else that we are ver likely to recover in the whole history of our race.

The prosperity of a country depends not on the abundance of its revenues, not on the strength of its fortifications not on the beauty of its public buildings ; but it consists in the number of its cultivated citizens, in the men of education, enlightenment and character.

नियम थे तो वैदिक ऋषिप्राचीन नहीं थे। परन्तु यदि हमाराअभिप्राय यह हो कि आदिकालीन वहीहैं, जिन्होंने आर्य जातिके आदि पुरुष होकर अपनी स्थिति में एक ऐसा अखण्डसाहित्य छोड़ा जिसको थाती से सभी गौरव अनुभव करते हैं, तो मैं कहूंगा कि वैदिकऋषि आदि हैं: वेदविद्या आदिकाल की है; वैदिक धर्म आद्य है और वे ऋषि सम्पूर्ण मानव सभ्यसंसार के इतिहास में भी सर्वप्रथम सभ्य होने का गौरव रखते हैं।

किसी देशकी समृद्धि नतो इसके करोंकीप्रभूत संग्रह सम्पत्ति पर आश्रित है; न इसकी सुपुष्ट रक्षा पङ्क्ति पर निर्भर है और न इसकेसार्वजनिक शोभायुक्त स्थानों पर अवलम्बित है। परन्तु इसका आधार तो सुसभ्य, नागरिक और शिक्षित जन जो नैतिक और बौद्धिक विकास में आगे बढ़े हुए हैं और जो उन्नतिशील हैं वे ही देश की समृद्धि के वास्तविक मापदण्ड हैं।

Lecture II.

Warren Hastings thus speaks of the Hindus in general :—

"They are gentle and benevolent, more susceptible of gratitude for kindness shown them, and less prompted to vengeance for wrongs inflicted than any people on the face of the earth, faithful, affectionate, submissive to legal authority.

But it is not Europe alone that has profited by this revival of the study of Sanskrit. India herself has lost the recollection of her past; here literature was sinking in oblivion numerous works of her celebrated writers had perished and others were annually perishing; her ancient language had died away and was

वारेन हैस्टिंग्ज कहता है कि भारतीय भद्र, उदार, कृतज्ञ, और संसार की समस्त जातियों में जो बदला लेने की भावना भरी है उससे ऊपर उठे हुए विश्वासी, प्रेममय, और न्यायके सामने नतमस्तक होनेवाले मनुष्य हैं।

संस्कृत विद्याके पुनरुद्धार एवं पुनरुज्जीवनका केवल यूरोपने ही लाभ नहीं उठाया बल्कि और देशोंने भी विशेषरूपेण पूर्ण उन्नति प्राप्त की है। परन्तु भारत अपने गौरवपूर्ण अतीत के संस्मरणों को स्वयं खो चुका है। इस देश में प्रसिद्ध ग्रन्थ-लेखकों के महत्वपूर्ण ग्रन्थ सदा के लिये विलय हो गये और

cultivated merely by a few of her sons ; and last but least her social fabric and religious belief had come to rest on mediaeval and modern works professedly derived from; and in harmony with her most ancient sacred texts but in truth the composition of an interested degenerated priesthood ; corrupting her faith depraving her morality and sapping the very foundations of her life.

Introduction to Jaiminiya
Nyaya Mala Vistar
Edited by—Theoder Goldstucker
London Edition 1878.

प्रतिवर्ष नष्ट हो रहे हैं। उसकी प्राचीन गौरवमयी भाषा मृत प्रायः हो गई और केवल कुछ थोड़ेसे सरस्वतीके सुपुत्रों द्वारा पढ़ी जाती है। और अन्तमें, उसका सामाजिक ढांचा तथा धार्मिक विश्वास मध्यकालीन एवं वर्तमानकालीन ग्रन्थोंकी रचनापर आधारित है। कहनेको तो उनका स्रोत भी प्राचीन वैदिक साहित्य कहा जाता है परन्तु वास्तवमें यह सर्व निर्माण आधुनिक स्वार्थी पौरोहित्य कला विज्ञों का है इससे उसके निवासियोंका धार्मिक विश्वास विकृत ; उसकी नैतिक पतनकी पराकाष्ठा एवं उसके जीवनकी आधारभूत शिलायें भी निष्प्राण एवं गतिहीन हो गई है।

ध्योडोर गोल्डस्टकर द्वारा सम्पादित जैमिनीयन्यायमाला-
विस्तरकी अंग्रेजी भूमिकासे लन्दन संस्करण १८७८ सन्०

Religious experience is a reality.

Science and theology as art forms:

Reality seems to concern rel'gious beliefs much more than any others.

Page 326. The nature of the physical world : Eddington.

(Cambridge University edition)

Science is not yet in contact with ultimate reality. [Encyclopedia of modern knowledge the world ; whence and how].

Sir James Jeans.

(साइन्स और थ्योलोजीः एज आर्ट फार्मस से)

धार्मिक विश्वासोंका सत्यके साथ अन्य वस्तुओंसे कहीं घनिष्ठतर सम्बन्ध है।

३२६ पृ० (दी नेचर आव् दी फीजिकल वर्ल्ड)
एडिङ्गटन कृत (केम्ब्रिज विश्वविद्यालय संस्करण)
विज्ञान अन्तिम सत्यके सन्निकट नहीं पहुंचा है।
धार्मिक अनुभव वास्तविक तथ्य है।
इन्साइक्लोपिडिया ऑफ माडर्न नालेज।
अभीतक हम वास्तविक तथ्यके सम्पर्कमें नहीं आये है
पदार्थका वस्तुतत्व हमारे मनस्तत्व और बुद्धितत्व के गम्य नहीं है—

दी वर्ल्ड व्हेन्स ऍण्ड हाऊ: सर जेम्स जीन्स

We are not yet in contact with ultimate reality.

Real essence of substance is beyond our knowledge.

When we consider the modern estimate, we may be inclined to sympathise rather with ancient Brahmins who thought that the world had always existed.

Science News :
Penguin Books 10

Bishop Auber said :—

The Hindus are brave, courteous, intelligent, most eager for knowledge and improvement; sober, industrious; dutiful to parents, affectionable to their children; uniformally gentle and

---

जब हम आधुनिक विवरण पर विचार करते हैं तो हमें प्राचीन ब्राह्मणों के विचारों में सत्य दीखता है जो संसार को शाश्वत बतलाते हैं।

पेङ्ग्विन न्यूज पेङ्ग्विन बुक्स १०

विशप ओबर कहते हैं।

भारतीय हिन्दू वीर, विनम्र, बुद्धिमान, विवेकी, ज्ञानकी अमर जिज्ञासा रखनेवाले और विकासशील जाति है जो गौरवपूर्ण परिश्रमशील, माता पिता के प्रति कर्तव्यपरायण और बालकोंको

patient and more easily affected by kindness and attention to their wants and feelings than any people I ever met with.

Let us not forget that just as moral strength is the backbone of British prestige and power, as art is the backbone of life in France, so also religion is the bedrock of India's future prosperity and happiness. Religion plays a signal role in our lives in bringing the three hundred sixty two million people of India with numerous barriers of sects and castes in them together under one banner whether we are rich or poor, whether we are Hindus, Jains or Christians.

स्नेह भरी दृष्टि से देखनेवाले, एक समान उदार दयालु, धीर गम्भीर और सरलता पूर्वक मनाये जाने और सबकी भावनाओं का अधिकाधिक आदर करनेवाले राष्ट्र के व्यक्ति हैं।

हमें यह नहीं भूल जाना चाहिये कि जिस प्रकार ब्रिटिश गौरव और शक्तिका आधार उस राष्ट्र की नौ सेना है और फ्रांस देशवासियोंके जीवन का मेरुदण्ड कलानिर्माणकी शृँखला है इसी प्रकार भारतीय भावी समृद्धि और आनन्द की आधारशिला धर्म है। ३६ करोड़ भारतीयों के विभिन्न जाति, भाषा, धर्म आदि की विभिन्न बाधाओं के रहते हुए भी एक पताका के नीचे लानेवाला तत्व धर्म ही है। फिर भले ही कोई धनी या

We are all in a sense receiving our vital sustenance from the pulse beat of faith in one God.

Members of the Sanskrit Text Society :—
Patron :
His Royal Highness the Prince of Wales.
Vice Patron :
His Majesty the king of Belgians.
The Rt. Hon. the secretary of state for India.
President :
His Royal Highness the
Duc D' Aumala.

निर्धन हो, चाहे कोई हिन्दू, जैन, फारसी या ईसाई हो हम सब, एक शब्द में, अपनी धमनियों की अव्यर्थ जीवनी शक्तिके स्रोत के लिये आत्मामें ईश्वर के प्रति दृढ़ विश्वास को ही मानते हैं।

इङ्गलैण्ड में स्थापित संस्कृत ग्रन्थ प्रकाशन समिति के सदस्यों की नामावलि—
संरक्षक—हिज रायल हाइनेस वेल्स के राजकुमार।
उपसंरक्षक—
हिज मेजेस्टी बेल्जियन्स के राजा व माननीय भारत मंत्री।
सभापति—
हिज रायल हाइनेस ड्यूक ड आमला।

Vice Presidents :

His Excellency Mr. Van De Weyer.

The Right Hon. Lord Dufferin and Clanerboye

Treasurer :

David Salomons Esqr. M. M.

Hony Secy :

Octane Depierre, Esqr.

उपसभापपि—

हिज एक्सेलेन्सी श्री वानडेवेयर, माननीय लार्ड डफरिन और क्लेनर बाय।

कोषाध्यक्ष—डेविड सलोमन्स एम० एम०।

अवैतनिक मंत्री—ओक्टेन डि पियर।

अणुभाष्येऽपि :—

अलौकिको हि वेदार्थो न युक्त्या प्रतिपद्यते ।
तपसा वेद युक्तया तु प्रसादात्परमात्मनः ॥
सन्देहवारकं शास्त्रं बुद्धिदोषात्तदुद्भवः ।
विरुद्धशास्त्रसम्भेदादङ्गैश्चाशक्यनिश्चयः ॥
तस्मात्सूत्रानुसारेण कर्तव्यः सर्वनिर्णयः ।
अन्यथा भ्रश्यते स्वार्थान्मध्यमश्च तथाऽऽदिमः ॥
"श्रुतिस्मृति पुराणानां विरोधो यत्र दृश्यते ।
तत्र श्रौतं प्रमाणन्तु तयोर्द्वैधे स्मृतिर्वरा ॥ ४ ॥"

व्यास स्मृति १ अध्याय

वेदवेदाङ्गशास्त्राणि सेतिहासानि चाभ्यसेत् ।
अध्यापयेच्च तच्छिष्यान् सद्विप्रांश्च द्विजोत्तमः ॥
इतिहासपुराणानां वेदोपनिषदां द्विजः ।
शक्त्या सम्यक्पठेन्नित्यमल्पमप्यासमापनात् ॥ १० ॥

स यज्ञदानतपसामखिलं फलमाप्नुयात् । वेदेभ्योऽन्यत्र सन्तुष्टः स विप्रः शूद्रतामियात् । तस्मादहरहर्वेदं द्विजोऽधीयीत वाग्यतः ।

ब्रह्मपुराणेऽपि

इतिहासपुराणानि यदन्यच्छन्दगोचरम् । स्वतो मुखे ममप्रायादभूच्च स्मृतिगोचरम् । वेदार्थश्च मया सर्वो ज्ञातोऽसौ तत्क्षणेन च । ततः पुरुषसूक्तं तदस्मरं लोकविश्रुतम् । यज्ञोपकरणं सर्वं तदुक्तञ्च त्वकल्पयम् । १६१ अ० २७-२८ श्लो०

ब्राह्मणं च पुरस्कृत्य ब्राह्मणेन च कीर्तितम् ।
पुराणं शृणुयान्नित्यं महापापद्वानलम् ॥
पुराणं सर्वतीर्थेषु तीर्थश्चाधिकमुच्यते ।
यस्यैकपादश्रवणाद्धरिरेव प्रसीदति ।
सर्वेषां जगतामेव हरिरालोकहेतवे ।
तथैवान्तः प्रकाशाय पुराणावयवो हरिः ।
विचरेदिह भूतेषु पुराणं पावनं परम् ।
तस्माद्यदि हरेः प्रीतेरुत्पादे धीयते मतिः ।
श्रोतव्यमनिशं पुम्भिः पुराणं कृष्णरूपिणः ।
विष्णुभक्तेन शान्तेन श्रोतव्यमिति दुर्लभम् ।
पुराणाख्यानममलममलीकरणं परम् ।
यस्मिन्वेदार्थमाहृत्य हरिणा व्यासरूपिणा ।
पुराणं निर्मितं विप्र तस्मात्तत्परमो भवेत् ।
पुराणो निश्चितो धर्मो धर्मश्च केशवः स्वयम् ।
तस्मात्कृती पुराणे हि श्रुते विष्णुर्भवेदिति ।
तथा गङ्गाम्बुसेकेन नाशयेत्किल्बिषं स्वकम् ।
केशवो द्रवरूपेण पापात्तारयते महीम् ।
वैष्णवो विष्णुभजनस्याऽऽकाङ्क्षी यदि वर्तते ।
गङ्गाम्बुसेकममलममलीकरणं चरेत् ।
विष्णुभक्तिप्रदा देवी गङ्गा भुवि च गीयते ।
विष्णुरूपा हि सा गङ्गा लोकनिस्तारकारिणी ।

ब्राह्मणेषु पुराणेषु यज्ञार्थां गोषु पिप्पले ।
नारायणधियापुम्भिर्भक्तिःकार्या ह्यहैतुकी ।

पद्मपुराण आदिखण्डे ६२ अध्याय—५८-७०

योऽधीते श्रुतिमेवाऽऽदौ समं स्यात्तपसा मुने । श्रुतेऽध्यापनात्पुण्यं यदाप्नोति द्विजोत्तमः । तदध्यायाच्च अप्याच्च द्विगुणं फलमश्नुते । जगद्यथा निरालोकं जायते शशिभास्करौ । विना तथा पुराणं हि ध्येयमस्मान्महामुने !। तपमानः सदाज्ञानं यो धारयति शास्त्रतः सम्बोधयति लोकञ्च तस्मात्पूज्यतमो गुरुः । सर्वेषाञ्चैव पात्राणां श्रेष्ठं पात्रं पुराणवित् पतनात्त्रायते यस्मात्तस्मात्पात्रमुदाहृतम् ।

विष्णोरायतने यस्तु कारयेद्धर्मं पुस्तकं देव्याः शम्भोर्गणेशस्य अर्कस्यच तथा पुनः ॥ राजसूयाश्वमेधाभ्यां फलम्प्राप्नोति मानवः। इतिहासपुराणानां पुण्यं पुस्तकवाचनम् सर्वान्कामानवाप्नोति सूर्यलोकम्भिनित्ति सः ।सूर्यलोकञ्चभित्वाऽसौ ब्रह्मलोकञ्च गच्छति। तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कार्यम्पुस्तकवाचनम् । इतिहासपुराणानां विष्णोरायतनेशुभम् । [पद्मपुराण उत्तर खण्ड]

वैष्णवं दक्षिणो बाहुः शैवं वामो महेशितुः ।
उरू भागवतम्प्रोक्तं नाभिः स्यान्नारदीयकम् ।
मार्कण्डेयञ्च दक्षाङ्घ्रिर्वामो ह्याग्नेयमुच्यते ।
भविष्यं दक्षिणो जानुर्विष्णोरेव महात्मनः ।
ब्रह्मवैवर्तसञ्ज्ञन्तु वामजानुरुदाहृतः ।
लैङ्गन्तु गुल्फकं दक्षं वाराहं वामगुल्फकम् ।

स्कान्दं पुराणं लोमानि त्वगस्य वामनं स्मृतम् ।
कौर्मं पृष्ठं समाख्यातं मात्स्यं मेदः प्रकीर्त्यते ।
मज्जा तु गारुडप्रोक्तं ब्रह्माण्डमस्थि गीयते ।
एवमेवाभवद्विष्णुः पुराणावयवो हरिः ।

[पद्मपुराण आदिम खण्ड]

अथ विष्णोः परेशस्य नानाविग्रहधारिणः ।
एकं पुराणफलकं तच्छृणुध्वं द्विजोत्तमाः ।

तत्र ब्रह्मकल्पवृत्तान्तोद्भवं ब्राह्मं हरेर्मस्तकं पद्मककल्पवृत्तान्तोद्भवं पाद्मं हृदयं, वाराहकल्पवृत्तान्तोद्भवं वैष्णवं दक्षिणबाहुः, श्वेतकल्पवृत्तान्तोद्भवं शिवपुराणं वामबाहुः, सारस्वतकल्पवृत्तान्तोद्भवं भागवतं वक्षःस्थलं, बृहत्कल्पवृत्तान्तोद्भवं नारदीयं नाभिः, श्वेतवाराहकल्पवृत्तान्तोद्भवं मार्कण्डेयं दक्षिणाङ्घ्रिः, ईशानकल्पवृत्तान्तोद्भवं आग्नेयं वामांघ्रिः, अघोरकल्पवृत्तान्तोद्भवं भविष्यं दक्षिणजानुः, रथन्तरकल्पवृत्तान्तोद्भवं ब्रह्मवैवर्तं वामजानुः, कल्पान्तवृत्तान्तोद्भवं लैङ्गं दक्षिणगुल्फः, मनुकल्पवृत्तान्तोद्भवं वाराहं वामगुल्फः, तत्पुरुषकल्पवृत्तान्तोद्भवं स्कान्दं हरेः रोमाणि, शिवकल्पानुषङ्गि वामनं शरीरत्वक्, लक्ष्मीकल्पवृत्तान्तोद्भवं कौर्मं पृष्ठं, कल्पादौ सप्तकल्पवृत्तान्तोद्भवं मात्स्यं मेद्रम्, गरुडकल्पवृत्तान्तोद्भवं गारुडं दक्षिणं पादाग्रं, भविष्यकल्पानांवृत्तान्तोद्भवं ब्रह्माण्डं वामपादाग्रं, एवं सत्त्वरजस्तम आधारमकमष्टादश पुराणरूपो हरिः पुराणेषु प्रकाशते। तत्र सात्त्विक पुराणे विष्णो रधिकमाहात्म्यं राजसे प्रकृतिब्रह्मसुर्याणां तामसेऽग्निशिव-

भैरवादीनां माहात्म्यम्। मिश्रे तु पितॄणां माहात्म्यम्। एव-मष्टादशं मुख्यपुराणसंख्यासमूहश्चतुर्लक्ष एव।

(इतिपाद्ममात्स्ययोः)

अथ च अष्टादशभ्यश्च पृथक् पुराणं यत्प्रदृश्यते। विजानीध्वं द्विजश्रेष्ठास्तदेतेभ्यो विनिर्गतम्।

तन्त्रवार्तिके प्रथमाध्यायस्य तृतीय पादे:—

एवेवेतिहासपुराणयोरप्युपदेशवाक्यानां गतिः।
उपाख्यानानि त्वर्थवादेषु व्याख्यातानि।
यत्तु पृथिवीविभागकथनं तद्धर्माधर्मसाधनफलोपभोग-प्रदेशविवेकाय किञ्चिद्दर्शनपूर्वकं किञ्चिद्वेदमूलम्।
वंशानुक्रमणमपि-ब्राह्मणक्षत्रियजातिगोत्रज्ञानार्थं दर्शनस्मरणमूलम्। देशकालपरिमाणमपि लोकज्योतिः-शास्त्रव्यवहारसिद्ध्यर्थं दर्शनगणितसम्प्रदायानुमान-पूर्वकम् भाविकथनमपि त्वनादिकालप्रवृत्तयुगस्वभाव-धर्माधर्मानुष्ठानफलविपाकवैचित्र्यज्ञानद्वारेण वेदमूलम्
अङ्गविद्यानामपिक्रत्वर्थपुरुषार्थप्रतिपादनं लोकवेदपूर्वकत्वेन विवेक्तव्यम्—

इससे स्पष्ट हो गया कि धर्मशास्त्रों के पढ़े बिना विशाल भावना का निर्माण असम्भव है। विशाल भावना के बिना शान्ति, ऐश्वर्य और सुशील की अभिवृद्धि कभी नहीं हुआ करती।

कुछ विद्वानों की यह धारणा है कि पुराणों में अनेक स्थलों पर उत्तरवर्ती आचार्यों ने अपने अपने मतों के स्थापन तथा पुष्टि

के लिये अनेक प्रक्षित पाठ समाविष्ट कर दिये हैं; परन्तु जहाँ तक मैंने इन पुराणोंका पारायण व मनन किया है उससे मेरी तुच्छ बुद्धि इसी निष्कर्ष पर पहुंची है कि इन अष्टादश पुराणों में कहीं भी प्रक्षिप्त पाठ का समावेश नहीं किया है। अन्य श्रीमद्भागवत आदि उपपुराणोंमें चाहे प्रक्षिप्त श्लोक समाविष्ट कर दिये गये हों परन्तु अष्टादश महापुराणों में महर्षिप्रणीत पुरातन पाठ ही ज्यों का त्यों अपरिवर्तित तथा अपरिवर्द्धित रूपमें चला आ रहा है उसमें किसी प्रकार की वृद्धि साम्प्रदायिक आचार्यों के द्वारा नहीं की गई प्रतीत होती है। प्रत्युत वराहपुराण में तो महर्षि-प्रणीत पूरा पाठ भी नहीं उपलब्ध हो रहा है। इनमें आया हुआ एक एक शब्द ध्रुव सत्य तथा सृष्टि कल्याण भावना से ओत-प्रोत है। उसमें किसी प्रकार आशंका व सन्देह का अवकाश नहीं है। ईश्वरीय प्रकृति की मर्यादारूप से इनमें स्थिति है। इनकी जानकारी न होने के कारण ही आज का मानव मनमाने कर्म करके नाना कष्टों का शिकार बना हुआ है, अतः आत्म कल्याणा-भिलाषी प्रत्येक मानव को इनका मनन करना नितान्त आव-श्यक है।

आजकल विशाल भावनायें कितनी संकुचित होती जा रही हैं यह इसी बातसे स्पष्ट है कि बालकों के असीम ज्ञान को थोड़े से समय के लिये दिये गये प्रश्नपत्रों द्वारा ही परीक्षा कर उसकी योग्यता का प्रमाण पत्र दे दिया जाता है। इससे अनुशासनहीनता, प्राचीन गुरुशिष्य-परम्परा का अभाव और

और इतनी विशाल ज्ञान राशि पाने पर भी अज्ञानान्धकारमें आज-कलके नवयुवकों का मस्तिष्क भटकता है कि इन्हें केवल सङ्घर्ष, अशान्ति और कलह की चिनगारी सुलगाने में ही आनन्द आता है।

आज कल हमारे बालकों को जो पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं उनसे विकाश बिलकुल ही रुक जाता है। आज तो कुछ प्रश्नपत्र पढ़ाकर उनके अपेक्षित उत्तरों से सन्तोष माननेवाला अध्यापक सब शिष्य और उनके अभिभावकगण कृतकृत्य हो जाते हैं, सब एकही ध्येय बनाये रहते हैं; उत्तीर्ण होना। क्या बालक के माता पिता; क्या भाई बहिन क्या अन्य शुभचिन्तक एक ही बात कहते हैं कि हमारा बालक उत्तीर्ण हो।

इसका बुरा परिणाम यहां तक देखने में आता है कि नौनिहाल राष्ट्र की भावी उन्नति ये बालक और ये नवयुवक अपने जीवन तक की भी बाजी लगा देते हैं। अर्थात् इस पर भी दुर्भाग्य से उत्तीर्ण होने का सुसमाचार न मिला तो लज्जित होकर वह नवयुवक आत्महत्या तक कर लेते हैं। ऐसे सुन्दर ज्ञान की प्राप्ति के लिये घृणित उपाय काम में लेते हैं जैसे, नकल करना, परीक्षक को अनाचार का शिकार बना उससे अनुचित रीति से अङ्क ले लेना। कहां तक कहें यदि कहीं थोड़ा सा भी प्रश्नपत्र कठिन आ जावे तो परीक्षा भवन में ही हल्ला मचा कर उद्दण्डता से प्रश्नपत्र के विरोध में हड़ताल कर देना अनुशासन तोडना, और यहांतक कि परीक्षा भवन के अध्यक्ष की हत्यातक भी की गई देखी गई हैं। ऐसे राष्ट्र की जड़ को खोखले

बनानेवाले दूषित तत्त्व इस शिक्षा के अनिवार्य अङ्ग बन चुके हैं। बस ऐसे विकास से भगवान ही रक्षा करे। हमें विकास की अवश्य आवश्यकता है परन्तु शक्तिक्षीण करने वाला विकास अनिच्छित है।

ऊपर निवेदन किया है कि सारा यह दोष आजके विद्यार्थी का ही नहीं है इसमें उनकी शिक्षा पद्धति का बाह्य और अन्तः रूप बनाने वाली विश्वविद्यालय जैसी संस्थाओं का भी कम दोष नहीं है। वे सब समय एक ही दृष्टि से काम करती हैं। किसी प्रकार विश्व-विद्यालय के परीक्षार्थी छात्रों की संख्या बढ़े। ये यह कभी नहीं सोचते कि जहां पञ्चवर्षीय-योजना के लिये बड़े भारी रूप में जो नदी बांध योजनायें विद्युत् उत्पादनशक्तिकेन्द्र और अन्नोत्पादनार्थ नहरें बनाई जा रही हैं उनके पीछे सब को चलाने वाले इस बौद्धिक केन्द्र मनुष्यरूपी शक्ति का सञ्चालन करने के लिये हमने क्यों उपेक्षा और अनवधानता कर रक्खी है ? आज तक इस शिक्षाको भारतीय रूपरेखा में ढालने का प्रयत्न हुआ अवश्य लेकिन सब ही नक्कार खाने में तूती की आवाज ही सिद्ध हुई। आज उत्तीर्ण होने के लिये प्रयत्न जोरों से चालू है और संसार यात्रामें प्रवेश करने पर उस कर्तव्याकर्तव्यशून्य व्यक्ति का ज्ञान उसे सदा थपेड़ों से सीधा करता है।

इस प्रकार हमें अपने आपको भावी सन्तान की विकाशशील प्रवृत्ति के लिये सचेष्ट रूपमें प्रयत्न करना चाहिये इसीमें सब का कल्याण है।

१०—

धर्मशास्त्र ग्रन्थों में महर्षियों ने ज्ञान विज्ञान को कूट कूट कर भर दिया है। इन पुण्यश्लोक महर्षियों के लक्ष्य को उन्हीं के समान उदार लोकोपकारितापूर्ण बुद्धिसम्पन्न व्यक्ति ही जानसकते है क्योंकि इनका निर्माण ही तपः पूत महर्षियों की कल्याणमयी प्रवृत्ति एवं सद्विचारपूर्ण भावनाओं से हुआ है।

आधुनिक लोग सत्यमार्ग बताने वाले शास्त्रों के अध्ययन को एक किनारे छोड़ बड़ी२ डिग्रियों के लिये एड़ी चोटी का पसीना एक कर देते हैं। अपनी विद्वत्ता की कसौटी उन्हीं उपाधियों के प्रमाण पत्रों को ही समझते हैं। परन्तु यह सब शास्त्रीय ज्ञान एवं साहित्य को सङ्कुचित करने में ही अधिक सहायक हुआ है और साथ ही उस सुन्दर ज्ञान की खिल्ली उड़ाने में भी। क्योंकि इन गम्भीर परोक्ष अर्थों से पूर्ण शास्त्रों को सङ्कुचित भावोंसे देखने से ही अपना पराया किसी का भी हित साधन नहीं हो सकता है। इसी का परिणाम है सृष्टि की अशान्ति। मुझे तो खेद और दुःख तब होता है जब मैं यह सोचता हूं कि ऐसे महानुभाव श्रुति स्मृति एवं पुराणादि के बिना अपने को सङ्कीर्ण मनोवृत्ति का शिकार बना अपनी उपाधियों से गौरवान्वित होकर हमारी भावी पीढ़ी को किस प्रकार शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आत्मिक एवं सर्वाङ्गीण शिक्षा देकर उन्नत बनाने के लिये शिक्षा के अधिकारी कर्णधारों द्वारा चुने जाते हैं। क्या ये कभी भावी सन्तान को उन्नत शिक्षा दे सकेंगे? यह सब

प्रभु ही साक्षीरूप से जानें। मुझे तो किसी प्रकार भी उन भावी सन्तानों का उद्धार इनसे 'असम्भव' सा ही लगता है।

शास्त्र स्पष्ट कहते हैं कि शास्त्रों के बिना जो भी कार्य करता है वह अपना एवं अपने से सम्बन्धित सभी का अत्यधिक अहित करता है।

श्रुतिहीनाय विप्राय स्मृतिहीने तथैव च। दानम्भोजनमन्यच्च दत्तं कुलविनाशनम्।

अस्तु, सृष्टि में शान्ति स्थापना इनमें निहित भावों को व्यापक दृष्टि से प्रचार करने से ही हो सकती है। इसका एकमात्र उपाय है बहुश्रुतता, श्रुति स्मृति पुराणादि की पूरी सङ्गति बिठाना एवं उदार प्राणिहित की भावना से अर्थ का प्रकाश करना।

बुद्धिवृद्धिकराण्याशु धन्यानि च हितानि च। नित्यं शास्त्राण्यवेक्षेत निगमांश्चैव वैदिकान्॥ यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति। तथा तथा विजानाति विज्ञानञ्चास्य रोचते। मनुस्मृति अ० ४।१९।२०।

शास्त्रों को बुद्धिके द्वारा कसौटी पर कस कर पूर्ण सङ्गत अर्थ निकालना चाहिये जो सर्व प्राणि हित में पूर्ण सहायक हो क्योंकि इनका एक एक शब्द ईश्वराज्ञा है जिसका स्वार्थमय अभिप्राय मानव की अपूर्णता और अवनति का द्योतक और हमारे लिये सदा ही घातक है।

जो लोग इस ज्ञानसे वञ्चित हैं उनकी वाली छिप्रियां

उपाधिमात्र हैं। "ज्ञानं भारः क्रियाम्बिना।" स्वरूपकी उपलब्धि युक्त क्रिया के बिना ज्ञान भार स्वरूप है।

"शास्त्राण्यधीत्यापि भवन्ति मूर्खा यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान्" शास्त्राध्ययन करनेपर भी क्रिया रहित उच्च आशय से जीवनमें शास्त्र के सिद्धान्तों का आचरण न करने से प्राणिमात्र का उपकार न कर सकने के कारण ऐसे व्यक्ति के सब ग्रन्थों का पठन अपूर्ण ही माना जाता है। आज तो जब परीक्षा पिशाचिनी का जोर बढ़ रहा है तो ग्रन्थका उच्च लक्ष्य से आशय बिलकुल समझा ही नहीं जाता और "पुस्तकी भवति पण्डितः" होकर अपने को धन्य समझनेमें ही उनके लक्ष्य की पूर्ति हो जाती है। फलतः शास्त्र जीवन शास्त्रबुद्धि और संस्कृति का रूप सब विकृत हो गया है ऐसे लोगोंको शास्त्र का तत्त्व दुरधिगम है।

गुरु प्रसाद, भगवत्कृपा और शास्त्र बुद्धिसे इनका स्वाध्याय उदार हृदय और लोकोपकारितापूर्ण भावना द्वारा अध्ययन करने से ही शास्त्र जीवनी प्रचलित हो सकती है। तभी प्राणीमात्र का पूर्ण कल्याण है।

इस लिये सभी से मेरी विनम्र प्रार्थना है कि शास्त्रों में जो तत्त्व कूट कूटकर भरा है उसे यथार्थ रूपमें जानने का प्रयत्न हो इसी से शान्ति प्राप्त होकर अमरता, सफलता और स्थायिता मिलती है। अतः विशाल हृदय और उच्च भावना से इनका स्वाध्याय कर प्राणी मात्र के कल्याण में संलग्न रहें। साथही

यह ध्यान रहे बुद्धि के बिना तत्त्व परिणाम और ज्ञान की वृद्धि नहीं होती एवं ज्ञान की प्राप्ति के बिना मोक्ष असम्भव है। संस्कृत का अक्षर ज्ञान मुझे स्वल्प है न तो मैं स्वयं व्याकरण के व्युत्पत्ति लभ्य शब्द-अर्थ का ज्ञाता हूँ, न ही मैंने साहित्य का किसी प्रकार से विशेष अध्ययन किया है परन्तु मेरा मन सदा से ही इधर लगा है। हां, गतदशकों से मैं संस्कृत साहित्य का यत्किञ्चित् आस्वादन पण्डितों की सहायता से कर पाया हूँ। ज्यों ज्यों मेरा प्रवेश होता गया त्यों त्यों ज्ञानवृद्धि के साथ मेरा प्रेम और आकर्षण इस अलौकिक साहित्य के प्रति अधिकाधिक अगाध श्रद्धा के साथ बढ़ता गया। मुझे प्रति दिन अमित धन राशि मिलती जाती है। मेरा समय दूसरे व्यवहार के कार्यों में लगा रहनेपर भी अपना मन अहर्निश इनके स्वाध्याय में प्रवृत्त होकर अमित आनन्द लूटने की अभिलाषा करता है। अवश्य ही जीवन में इनका स्वाध्याय स्पृहणीय है।

इसी अगाध श्रद्धा एवं प्रेम का ही प्रत्यक्ष फल यह पुराण परिचयके रूपमें इन पृष्ठोंमें एकत्रित संग्रह थोड़ा बहुत सेवा में प्रस्तुत है। मैं अपने नित्य स्वाध्यायसे जो कुछ इस महान् अगाध समुद्र में से प्राप्त करता हूँ वह सब यथासमय पत्रों द्वारा निवेदन किया जाता ही है।

आशा है, उदार पाठकगण अभिनव, स्वतन्त्रता के विकसनशील वातावरण में सर्वाधिक शास्त्रमय जीवन बनाकर आदर्श

एवं यथार्थवादी कसौटी पर सिद्धान्तों का निर्धारण कर इन महान् ग्रन्थों में प्रस्तुत ज्ञान का सच्चे अर्थों में प्रचार करेंगे।

इसमें जो कुछ सुन्दर बन सका है वह आप उदार सज्जनोंकी महनीय कृपा का फल है और कोई त्रुटिपूर्ण या असुन्दर वस्तु भूल से रह गई हो उसके लिये मैं करबद्ध क्षमा प्रार्थी हूँ। मैं अहर्निश आप सभी महानुभावों के शुभाशीर्वाद का इच्छुक हूँ जिससे प्रभु कृपा द्वारा शक्ति एवं सत्प्रेरणा से कर्तव्य पालन में लगा रहूँ। अपने विनम्र निवेदन का उपसंहार करते हुए प्रभु से हम सब को सद्बुद्धि प्रदान एवं कर्तव्य पालन क्षमता की सतत प्रार्थना है।

ॐ तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीब्रह्मपुराण में आये हुए विषयों का अनुक्रम

संविभागः पुराणां वा ग्रामाणां वाभवत्तदा ॥
न शस्यानि न गोरक्ष्यं न कृषिर्न वणिक् पथः ।
नैव सत्यानृतं चासीन्न लोभो न च मत्सरः ॥
वैवस्वतेऽन्तरे तस्मिन् साम्प्रतं समुपस्थिते ।
वैन्यात्प्रभृति वै विप्राः सर्वस्यैतस्य सम्भवः ॥
यत्र यत्र समं त्वस्या भूमेरासीत्तदा द्विजाः ।
तत्र तत्र प्रजाः सर्वा विवासं समरोचयन् ॥
आहारः फलमूलानि प्रजानामभवत्तदा ।
कृच्छ्रेण महता युक्त इत्येवमनुशुश्रुम ॥
स कल्पयित्वा वत्सं तु मनुं स्वायम्भुवं प्रभुम् ।
स्वपाणौ पुरुषव्याघ्रो दुदोह पृथिवीं ततः ॥
शस्य जातानि सर्वाणि पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् ।
तेनान्नेन प्रजाः सर्वा वर्तन्तेऽद्यापि सर्वशः ॥

दोहने में वत्स, पात्र, दुग्ध और दोहनेवालों का वर्णन ।

ऋषयश्च तथा देवाः पितरोऽथ सरीसृपाः । १८
दैत्या यक्षाः पुण्यजना गन्धर्वाः पर्वता नगाः ॥
एते पुरा द्विजश्रेष्ठा दुदुहुर्धरणीं किल ।
क्षीरं वत्सश्च पात्रञ्च तेषां दोग्धा पृथक् पृथक् ॥
ऋषीणामभवत्सोमो वत्सो दोग्धा बृहस्पतिः ।
क्षीरं तेषां तपो ब्रह्म पात्रं छन्दांसि भो द्विजाः ॥
देवानां काञ्चनं पात्रं वत्सस्तेषां शतक्रतुः ।
क्षीरमोजस्करञ्चैव दोग्धा च भगवान् रविः ।

पितॄणां राजतं पात्रं यमोवत्सः प्रतापवान् ।
अन्तकश्चाभवद् दोग्धा क्षीरं तेषां सुधा स्मृता ॥
नागानां तक्षकोवत्सः पात्रं चालाबुसंज्ञकम् ।
दोग्धा त्वैरावतो नागस्तेषां क्षीरं विषं स्मृतम् ॥
असुराणां मधुर्दोग्धा क्षीरं मायामयं स्मृतम् ।
विरोचनस्तु वत्सोऽभूदायसं पात्रमेव च ॥
यक्षाणामामपात्रं तु वत्सो वैश्रवणः प्रभुः ।
दोग्धा रजतनाभस्तु क्षीरान्तर्धानमेव च ॥
सुमाली राक्षसेन्द्राणां वत्सं क्षीरञ्च शोणितम् ।
दोग्धा रजत नाभस्तु कपालं पात्रमेव च ॥
गन्धर्वाणां चित्ररथो वत्सः पात्रं च पङ्कजम् ।
दोग्धा च सुरुचिः क्षीरं तेषां गन्धः शुचिः स्मृतः ॥
शैलं पात्रं पर्वतानां क्षीरं रत्नौषधीस्तथा ।
वत्सस्तु हिमवानासीद् दोग्धा मेरुर्महागिरिः ॥
प्लक्षो वत्सस्तु वृक्षाणां दोग्धा शालस्तु पुष्पितः ।
पालाशपात्रं क्षीरञ्च छिन्नदग्धप्ररोहणम् ॥
सेयं धात्री विधात्री च पावनी च वसुन्धरा ।
चराचरस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा योनिरेव च ॥
सर्वकामदुघा दोग्ध्री सर्वशस्यप्ररोहिणी ।
आसीदियं समुद्रान्ता मेदिनी परिविश्रुता ।
मधुकैटभयोः कृत्स्ना मेदसा समभिप्लुता ।
तेनेयं मेदिनी देवी उच्यते ब्रह्मवादिभिः ॥

नः स्वाध्यायवषट्काराः कृतास्तेन महात्मना ॥
शका यवनकाम्बोजाः पारदाश्च द्विजोत्तमाः ।
कोणिसर्पा माहिषका दर्वाश्चोलाः सकेरलाः ॥

राजा सगर का अश्वमेध यज्ञ करना। घोड़े को खोजने के लिये पृथ्वी को खोदते हुये साठ हजार सगर के पुत्रों को कपिल मुनिका शाप। अवशिष्ट चार पुत्रोंको कपिलजी का वरदान। साठ हजार पुत्रों का जन्मकथन।

घृतपूर्णेषु कुम्भेषु तान् गर्भान्निदधे ततः।
धात्रीश्चैकैकशः प्रादात्तावतीः पोषणे नृपः॥
ततो दशसु मासेषु समुत्तस्थुर्यथा क्रमम्।
कुमारास्ते यथाकालं सगरप्रीतिवर्द्धनाः॥
षष्टि पुत्र सहस्राणि तस्यैवमभवन् द्विजाः।

भगीरथ की उत्पत्ति गंगाका भागीरथी नाम प्राप्त करना।

अत्रि ऋषि का तप करना एवं अत्रि के नेत्रों द्वारा दश तरह की सृष्टि का वर्णन। चन्द्र की उत्पत्ति। चन्द्र का बीज और औषधियोंका स्वामी बनना एवं राजसूय यज्ञारंभ। चन्द्र द्वारा बृहस्पतिजी की स्त्री तारा का हरण उसके निमित्त देव दानवों का युद्ध। बृहस्पति का तारा की प्राप्ति। गर्भ त्याग के लिये तारा के प्रति बृहस्पति का क्रोधयुक्त वचन कहना। इषीकास्तम्ब में तारा द्वारा गर्भ त्याग एवं बुधका प्रादुर्भाव।

अक्रूर के पास स्यमन्तक मणि का मिलना।

मुनियों का लोमहर्षण के साथ संवाद। भूगोल का वर्णन। सप्त द्वीप का वर्णन।

एते द्वीपाः समुद्रैस्तु सप्तसप्तभिरावृताः।
लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलैः समम्॥

जम्बू द्वीप का वर्णन एवं मेरु पर्वत का वर्णन। भरतादि-खण्डों का वर्णन।

अनीलोत्तरमम्भोधिं समभ्येति द्विजोत्तमाः।
आनीलनिषधायामौ माल्यवद्गन्धमादनौ॥
तयोर्मध्यगतो मेरुः कर्णिकाकारसंस्थितः।
भारताः केतुमालाश्च भद्राश्वाः कुरवस्तथा॥
पत्राणि लोकशैलाख्य मर्यादा शैलबाह्यतः।
जठरो देवकूटश्च मर्यादापर्वतावुभौ॥
तौ दक्षिणोत्तरायामावानीलनिषधायतौ।
गन्धमादनकैलासौ पूर्वे पश्चात्तु तावुभौ॥
अशीति य ोजनायामावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ।
निषधः पारियात्रश्च मर्यादापर्वतावुभौ॥
तौ दक्षिणोत्तरायामावानीलनिषधायतौ।
मेरोः पश्चिम दिग्भागे यथा पूर्वौ तथा स्थितौ॥

मर्यादा पर्वतों का वर्णन।

पापी पुरुषों के पापों को नाश करने के लिये हरि स्मरण ही प्रायश्चित्त बताया है।

कृते पापेऽनुतापो वै यस्य पुंसः प्रजायते।
प्रायश्चित्तन्तु तस्यैकं हरिसंस्मरणम्परम् ॥
प्रातर्निशि तथा सन्ध्या मध्याह्नादिषु संस्मरन्।
नारायणमवाप्नोति सद्यः पापक्षयान्नरः ॥
विष्णुसंस्मरणात् क्षीणसमस्तक्लेशसञ्चयः।
मुक्तिं प्रयाति भो विप्रा विष्णोस्तस्यानुकीर्तनात् ॥
वासुदेवे मनोयस्य जपहोमार्चनादिषु।
तस्यान्तरायो विप्रेन्द्रा देवेन्द्रत्वादिकं फलम् ॥
क्व नाकपृष्ठगमनं पुनरावृत्तिलक्षणम्।
क्व जपो वासुदेवेति मुक्तिबीजमनुत्तमम् ॥
तस्मादहर्निशं विष्णुं संस्मरन् पुरुषो द्विजः।
न याति नरकं शुद्धः संक्षीणाखिलपातकः ॥
मनः प्रीतिकरो स्वर्गो नरकस्तद्विपर्ययः।
नरकस्वर्गसंज्ञे वै पापपुण्ये द्विजोत्तमाः ॥
वस्त्वेकमेव दुःखाय सुखायेर्ष्योद्भयायच।
कोपायच यतस्तस्माद्वस्तु दुःखात्मकं कुरु ॥
तदेव प्रीतये भूत्वा पुनर्दुःखाय जायते।
तदेव कोपाय यतः प्रसादाय च जायते ॥
तस्माद्दुःखात्मकं नास्ति नच किञ्चित्सुखात्मकम्।
मनसः परिणामोऽयं सुखदुःखादिलक्षणः ॥

"वरं वृणीष्व" (वर मांगो) ऐसा कहा। तब अदिति ने "मेरे पुत्रों को यज्ञभागी बनाओ।" मैं तुम्हारे जन्म लेकर तुम्हारे शत्रुओं का नाश करूँगा ऐसा कहते हुए सूर्य का अलक्षित होना। देवमाता अदिति के गर्भमें सूर्यकी स्थिति। कृच्छ्र एवं चान्द्रायणादि व्रतों से गर्भ धारण करती हुई अदिति को कश्यपजी ने कहा "गर्भाण्डं मारयसि किं" अर्थात् इतने क्लिष्ट व्रतादिकों से गर्भ को क्यों नष्ट करती हो। तदनन्तर पति के वचनों से क्रोधित अदिति का गर्भ त्याग। गर्भाण्ड से प्रकट हुए आदित्य की कलाप (कश्यप) के द्वारा स्तुति। यह मार्तण्ड नामक तुम्हारा पुत्र होगा इस प्रकार आकाशवाणी हुई। आकाशवाणी का वचन सुन कर देवताओं का आगमन। मार्तण्ड की सहायता से देवताओं का दैत्यों के साथ युद्ध। युद्ध में दैत्यों की पराजय। प्रसन्न हुए देवताओं द्वारा सूर्यकी स्तुति। सूर्य का संज्ञा के साथ विवाह। सूर्य की सन्तानों का वर्णन। संज्ञा और छाया का संवाद। संज्ञा का पिता के घर जाना। तदनन्तर छाया की संतानों का वर्णन। छाया का संज्ञा की सन्तानों के साथ विषम भाव—

पदा तर्जयसे यस्मात्पितुर्भार्यां गरीयसीम्।
तस्मात्तवैष चरणः पतिष्यति न संशयः॥
यमस्तु तेन शापेन भृशं पीड़ितमानसः।
मनुना सह धर्मात्मा पित्रे सर्वं न्यवेदयत्॥

नामक पत्नी में तीन कन्याओं की उत्पत्ति एवं उनका नाम-करण। तप करती हुई पार्वती को ब्रह्म का वरदान।

३५ पार्वत्युपाख्यानवर्णनम् २४१

उमा का देवताओं के साथ संवाद। विकृतरूपधारी महादेव का पार्वती के पास जाना। विकृत रूप का वर्णन जैसे —

विकृतं रूपमास्थाय ह्रस्वो बाहुक एव च।
विमग्ननासिको भूत्वा कुब्जः केशान्तपिङ्गलः॥

शिव पार्वती का संवाद।

पार्वतीजी कहती हैं—

भगवन्न स्वतन्त्राहं पिता मे त्वग्रणीर्गृहे।
स प्रभुर्मम दाने वै कन्याहं द्विजपुङ्गव॥
गत्वा याचस्व पितरं मम शैलेन्द्रमव्ययम्।
स चेद्ददाति मां विप्र तुभ्यं तदुचितं मम॥

विकृत रूपी शिव का हिमालय के साथ वार्तालाप। "अयं शिवः" ऐसा जान कर पार्वती का शिवजी को वरण करना।

अशोक वृक्ष के प्रति शिवजी का वरदान। शिवजी का अन्तर्धान होना। ग्राह से ग्रस्त बालक का रोदन एवं पार्वती तथा ग्राह का संवाद। "मेरा तप नष्ट हो गया" यह जान कर पार्वती का पुनः तप करना और पार्वती को शंकर का वरदान।

1147 29.1.55
Rs 6/-

३६ पार्वतीस्वयम्वरवर्णनम् २४६

पार्वती के स्वयम्बर में सम्पूर्ण देवताओंका आना । देवताओं द्वारा पार्वती की प्रशंसा । शिशु रूप से पार्वती की गोद में शंकर का शयन । क्रोधयुक्त इन्द्रादि देवताओं द्वारा शिवजी पर शस्त्र प्रहार । शिवजी ने सम्पूर्ण देवताओं को अपनी माया से स्तम्भित (रोका) किया । सम्पूर्ण देवताओं को छुड़ाने के लिये ब्रह्माजी द्वारा शिवस्तुति ।

प्रधानं पुरुषो यस्त्वं ब्रह्म ध्येयं तदक्षरम् ।
अमृतं परमात्मा च ईश्वरः कारणं महत् ॥
ब्रह्म सृक् प्रकृतेः स्रष्टा सर्वकृत् प्रकृतेः परः ।
इयञ्च प्रकृति र्देवी सदा ते सृष्टि कारणम् ॥
पत्नी रूपं समास्थाय जगत्कारणमागता ।

स्तुति सुन कर शंकर का प्रादुर्भाव । पार्वती के द्वारा शंकर के चरणों में माला का अर्पण । ब्रह्माजी का हिमालय की प्रशंसा करना । शिवजी के विवाह के लिये ब्रह्माके द्वारा नगर का निर्माण । देव-गन्धर्वादिकों का आगमन एवं वसन्तादि षट् (छै) ऋतुओं का आना ।

असितजलदधीरध्वानवित्रस्तहंसा ।
विमलसलिलधारोत्पातनम्रोत्पलाभ्रा ॥
सुरभिकुसुमरेणुक्लृप्तसर्वाङ्गशोभा ।
गिरिदुहितृविवाहे प्रावृडाविर्बभूव ॥
निर्मुक्तासितमेघकञ्चुकपटा पूर्णेन्दुबिम्बानना ।

नारायणपरा पृथ्वी नारायणपरं जलम् ।
नारायणपरोवह्निर्नारायणपरं नभः ॥
नारायणपरो वायुर्नारायणपरं मनः ।
अहंकारश्च बुद्धिश्च उभे नारायणात्मके ॥
जले स्थले च पाताले स्वर्गलोकेऽम्बरे नगे ।
अवष्टभ्य इदं सर्वमास्तेनारायणः प्रभुः ॥
किं चात्र बहुनोक्तेन जगदेतच्चराचरम् ।
ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं सर्वंनारायणात्मकम् ॥
नारायणात्परं किञ्चिन्नेह पश्यामि भो द्विजाः ।
तेन व्याप्तमिदं सर्वं दृश्यादृश्यं चराचरम् ॥
आपो ह्यायतनं विष्णोः स च एवाम्भसांपतिः ।
तस्मादप्सुस्मरेन्नित्यं नारायणमघापहम् ॥
स्नानकाले विशेषेण चोपस्थाय जले शुचिः ।
स्मरेन्नारायणं ध्यायेद्धस्ते काये च विन्यसेत् ॥
आस्तीर्य च कुशान्साग्रांस्तानावाह्य स्वमन्त्रतः ।
प्राचीनाग्रेषु वै देवान्याम्याग्रेषु तथा पितन् ॥

समुद्र स्नान की विधि का वर्णन । जलमें ही स्नान के अङ्ग सन्ध्या आदि नित्य कर्म एवं देवता ऋषि पितृ तर्पण करे ।

शरीरशुद्धि का वर्णन । षोडशोपचार सहित पूजन विधि का वर्णन ।

यथा देहे तथा देवे सर्वतत्त्वानि योजयेत् ।

का कृष्ण की स्तुति करना। कृष्ण की मूर्ति का दर्शन करने से फल प्राप्ति।

कपिलाशतदानेन यत्फलं पुष्करे स्मृतम्।
तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्चस्थं सहलायुधम्॥
सुभद्रां च मुनिश्रेष्ठाः प्राप्नोति शुभकृन्नरः।
भूमिदानेन विधिवद्यत्फलं समुदाहृतम्।
तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्चस्थं लभते नरः॥
यत्फलं चान्नदानेन अग्र्यातिथ्येन कीर्तितम्।
तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्चस्थं लभते नरः॥
यत्फलं तोयदानेन ग्रीष्मे वाऽन्यत्र कीर्तितम्।
तत्फलं कृष्णमालोक्य मञ्चस्थं लभते नरः॥
ततः समस्ततीर्थानां लभेत्स्नानादिकं फलम्।
स्नानशेषेण कृष्णस्य तोयेनाऽऽत्माभिषिच्यते॥
वन्ध्या मृतप्रजा या तु दुर्भगा ग्रहपीडिता।
राक्षसाद्यैर्गृहीता वा तथा रोगैश्च संहताः॥
सद्यस्ताः स्नानशेषेण उदकेनाभिषेचिताः।
प्राप्नुवन्तीप्सितान् कामान्यान्यान्वाञ्छन्ति चेप्सितान्।

गुड़िचा यात्रा का माहात्म्य।
राजा इन्द्रद्युम्न ने भगवान् से प्रार्थना की कि हे भगवन् आपकी यात्रा सात दिन तक मेरे तालाबके पास होनी चाहिए।

में जाना। गणेशजी की आज्ञा से गोरूप धारण करके जया (गणेशजी को बहिन) का गौतमजी के आश्रम में जाना, गौतम के रोकने पर जया का गिरना। गोवध के पाप को दूर करने के लिये गौतमजी को उपाय बतलाना। अपने संकल्प की सिद्धि के लिये "भवतां प्रसादोऽस्तु" इस प्रकार गौतम की प्रार्थना। सम्पूर्ण जनों का अपने २ स्थान में जाना। शंकर को प्रसन्न करने के लिये गौतमजी का कैलास पर्वत पर गमन।

गौतम का उमामहेश्वर की स्तुति करना। गौतमजी को उमामहेश्वर का दर्शन। तदनन्तर गङ्गा प्राप्ति के लिये गौतम की प्रार्थना। गङ्गा की प्रशंसा और गौतमी का लाना।

श्लाघ्यं कृते तपः प्रोक्तं त्रेतायां यज्ञकर्म च।
द्वापरे यज्ञदाने च दानमेव कलौ युगे।

स्वर्ग, मर्त्य और पाताल में विभाजित होकर १५ आकृति से गङ्गा का गमन। गोदावरी तीर्थ की स्नान विधि।

ब्राह्मणान् भोजयित्वा च तेषामाज्ञां प्रगृह्य च।
ब्रह्मचर्येण गच्छन्ति पतितालापवर्जिताः॥

कह कर जनक और याज्ञवल्क्य वरुण के पास गये तदनन्तर वरुण ने कहा—

द्विधा तु संस्थिता मुक्तिः कर्मद्वारेऽप्यकर्मणि ।
वेदे च निश्चितो मार्गः कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ॥
सर्वं च कर्मणा बद्धं पुरुषार्थचतुष्टयम् ।
अकर्मणेवाऽऽप्यत इति मुक्ति मार्गो मृषोच्यते ॥
कर्मणा सर्वधान्यानि सेत्स्यन्ति नृपसत्तम ।
तस्मात्सर्वात्मना कर्म कर्तव्यं वैदिकं नृभिः ।
तेन भुक्तिश्च मुक्तिश्च प्राप्नुवन्तीह मानवाः ॥

गृहस्थ से ही भुक्ति एवं मुक्ति मिलती है ऐसा वरुण का मत दर्शन । जनक और याज्ञवल्क्य ने वरुण से पूछा कि भुक्ति मुक्ति प्रदायक कौन देश, कौन तीर्थ है; इस पर वरुण ने कहा गौतमी सबसे श्रेष्ठ तीर्थ है ऐसा सुन कर दोनों अपने २ स्थान पर चले गये । जनस्थान तीर्थ का प्रयोजन ।

८९ अरुणावरुणासंगमाश्वभानुतीर्थवर्णनम् ५६६

सूर्य पत्नी उषा ने छाया से कहा कि मैं पिता के घर जाती हूँ मेरे लौटने तक बालकों का पालन करो । तदनन्तर छाया का पिता के घर जाना । त्वष्टा का पुनः पति के घर जानेका आदेश । उषा का उत्तर कुरुदेश में तप करने के लिए जाना । छाया की सन्तानों का जन्म कथन । छाया ने यमराज को शाप दिया इसका वर्णन । यमराज ने पिता से कहा कि यह मुझे क्रोध दृष्टि से देखती है अतः मेरी

माता नहीं है। उत्तर कुरु में घोड़ी का रूप धारण कर उषा रहती है ऐसा जान कर घोड़े के रूप को धारण कर सूर्य का वहां जाना। आत्मरक्षा के लिये गौतमी पर बड़वा का जाना उसके बाद सूर्य का जाना। ऋषियों के प्रति सूर्य का शाप कथन। पुनः अश्विनीकुमारों की उत्पत्ति। त्वष्टा ने सूर्य से कहा कि उषा के निमित्त तेज को शमन करो।

गरुड़ से अभयदान प्राप्ति के लिये मणिनाग नामक शेष पुत्र द्वारा शिव की स्तुति। शंकर से वरदान प्राप्त करके मणिनाग का इधर उधर भ्रमण। नन्दिकेश्वर ने शंकर के प्रति कहा—मालूम होता है कि गरुड़ने नागको भक्षण कर लिया है अथवा बांध लिया है इस लिये नहीं आया है। शंकर की आज्ञा से नाग को लाने के लिये नन्दीश्वर विष्णु के पास गया। विष्णु ने गरुड़ से कहा कि नन्दी को सर्प दो तब गरुड़ ने गर्वपूर्वक उत्तर दिया कि मेरे बल से ही दैत्यांको पराजित करते हो तदनन्तर भगवान् ने गरुड़ का गर्व दूर किया। गरुड़ के द्वारा विष्णु की स्तुति। विष्णु की आज्ञा से नाग सहित गरुड़ का शंकर के पास गमन। शिव की आज्ञा से गरुड़ गौतमी पर स्नान करने को गया और उसका शरीर वज्र की तरह हो गया अपि च विष्णु की प्राप्ति हुई।

ने उनसे प्रश्न किया कि पुत्र से क्या होगा। पुत्रवान् पुरुष की प्रशंसा।

नापुत्रस्य परो लोको विद्यते नृपसत्तम।
जाते पुत्रे पिता स्नानं यः करोति जनाधिप॥
दशानामश्वमेधानामभिषेकफलं लभेत्।
आत्मप्रतिष्ठापुत्रात्स्यज्जायते चामरोत्तमः॥
अमृतेनामरा देवाः पुत्रेण ब्राह्मणादयः।
त्रिऋणान्मोचयेत्पुत्रः पितरञ्च पितामहान्॥
पुत्रएव परो लोको धर्मः कामोऽर्थ एव च।
पुत्रो मुक्तिः परञ्ज्योतिस्तारकः सर्वदेहिनाम्।

ऋषियों के प्रति पुत्रोत्पादन विषयक हरिश्चन्द्र का प्रश्न। पुत्र प्राप्ति के लिए वरुणाराधन कथन। वरुण की प्रसन्नता से हरिश्चन्द्र को पुत्र प्राप्ति। वरुण और हरिश्चन्द्र की परस्पर उक्ति-प्रत्युक्ति। विष्णुयजन के लिए रोहित की प्रार्थना। अजीगर्त और रोहित का प्रश्नोत्तर। रोहित का वन में जाना। वरुण के कोप से हरिश्चन्द्र को जलोदर की प्राप्ति। अजीगर्त की रोहित के साथ पुत्र खरीदने के विषय में बातचीत। अजीगर्त के द्वारा पुत्र का विक्रय। रोहित ने अजीगर्त के पुत्र शुनः शेप को हरिश्चन्द्र के लिए दिया। शुनःशेप के यज्ञ में आकाशवाणी से यज्ञ की समाप्ति और विश्वामित्र की शुनःशेप पर कृपा परंच पुत्रत्व स्वीकार कर सब पुत्रों में शुनःशेप को ज्येष्ठ बना दिया।

११० पिप्पलतीर्थवर्णनम्-दधीचेरुपाख्यानम् ६६७

पिप्पल तीर्थ का वर्णन। दधीचि ऋषि एवं लोपामुद्रा का वर्णन। दधीचि ऋषि के आश्रम में सब देवताओंका आगमन। अस्त्रों को रखने के लिये देवताओं का दधीचि से प्रश्न? लोपामुद्रा का दधीचि के साथ वार्तालाप। देवताओं का दधीचि के पास अस्त्रों का रखना।

एतदेव फलं पुंसां जीवतां मुनिसत्तम।
तीर्थाप्लुतिर्भूतदया दर्शनं च भवादृशाम्॥

दैत्यों के डरसे दधीचि द्वारा अस्त्रों के तेज का पान। दैत्यों से देवताओं को भय प्राप्ति। देवताओं का दधीचि के पास अस्त्रों के लिये जाना। देवताओं के लिये दधीचि का अस्थि दान। देवताओं का अस्त्र बनाना। दधीचि ऋषि की पत्नी का आगमन और उसका अग्नि के साथ सम्वाद। तदनन्तर अग्निकृत समाधान, प्रातिथेयी के द्वारा कुक्षिस्थ पुत्र का निकालना। प्रातिथेयी का अग्निप्रवेश, आश्रम में स्थित वृक्षों का विलाप। दधीचि के पुत्र को अमृत प्राप्ति तथा पिप्पलाद नाम की प्राप्ति।

स तेन तृप्तो ववृधे शुक्लपक्षे यथा शशी।
पिप्पलैः पालितो यस्मात् पिप्पलादः स बालकः॥

पिप्पलाद के साथ वृक्षों का सम्वाद और अपने माता पिता का पूर्व वृत्तान्त श्रवण। सोम से पिप्पलाद को विद्या-

विवाह। इन्द्र की मुक्ति के लिये देव और विष्णु का संवाद विष्णु की आज्ञा से महाशनि के पास वरुण का जाना। वरुण के वचन से इन्द्र की मुक्ति। इन्द्र और इन्द्राणी का संवाद।

पुनश्चेदं मया कान्त श्रुतमस्त्यतिशोभनम्।
स्त्रीणां स्वभावं जानन्ति स्त्रिय एव सुराधिप॥
तस्माद्भूमेस्तथा चापां नासाध्यं विद्यते प्रभो।
तपो वा यज्ञकर्मादि ताभ्यामेव यतो भवेत्।
तत्रापि तीर्थभूता तु या भूमिस्तां व्रजेद् भवान्॥
तत्र विष्णुं शिवं पूज्य सर्वान्कामानवाप्स्यसि॥
श्रुतमस्ति पुनश्चेदं स्त्रियो याश्च पतिव्रताः।
ता एव सर्वं जानन्ति धृतं ताभिश्चराचरम्॥
अज्ञात्वैकगुणं कर्म फलं दास्यति कर्मिणः।
ज्ञात्वा शतगुणं तत्स्याद्भार्यया च तदक्षयम्॥
पुंसः सर्वेषु कार्येषु भार्यैवेह सहायिनी।
स्वल्पानामपि कार्याणां न हि सिद्धिस्तया विना॥
एकेन यत्कृतं कर्म तस्मादर्धफलं भवेत्।
जायया तु कृतं नाथ पुष्कलं पुरुषो लभेत्॥
तस्मादेतत्सुविदितमर्धो जाया इति श्रुतेः।

इन्द्राणी के वचन से इन्द्र का गौतमी के प्रति जाना। इन्द्र द्वारा शंकर की स्तुति। शिव और इन्द्र का संवाद। शिव

ने शाकल्यकी स्तुति की। शाकल्यकी आज्ञासे परशु ने सरस्वतीकी स्तुति की और उसको स्वर्ग प्राप्ति।

१६४ चिञ्चिकतीर्थवर्णनम् ६६३

पवमान राजा का चिञ्चिक नामक पक्षी से संवाद। पवमान राजा के प्रति चिञ्चिक पक्षी का पूर्वजन्म वृत्तान्तकथन। ब्रह्महत्या सदृश पापों का वर्णन।

अविज्ञातं चोपविष्टं बिभेमीति च वादिनम्।
तं यदि क्षत्रियो हन्यात्सतु स्यात्ब्रह्मघातकः॥
अधीतं विस्मरति यस्त्वं करोति तथोत्तमम्।
अनादरश्च गुरुषु तमाहुर्ब्रह्मघातकम्॥
प्रत्यक्षे च प्रियं वक्ति परोक्षे परुषाणि च।
अन्यद्धृदि वचस्यन्यत्करोत्यन्यत्सदैव यः॥
गुरूणां शपथं कर्ता द्वेष्टा ब्राह्मणनिन्दकः।
मिथ्याविनीतः पापात्मा स तु स्याद्ब्रह्मघातकः॥
देवं वेदमथाध्यात्मं धर्मब्राह्मणसंगतिम्।
एतान्निन्दति यो द्वेषात्सतु स्याद्ब्रह्मघातकः॥

चिञ्चिक की मुक्ति के लिए राजा का प्रश्न। चिञ्चिक ने राजा से प्रार्थना की कि मुझे मुक्तिके लिए श्वेत पर्वत स्थित भगवान् गदाधर के पास ले चलो। राजाके साथ गंगा, और गदाधर के दर्शन के लिए चिञ्चिक का गमन। चिञ्चिक द्वारा गंगा का स्तवन एवं स्वर्ग प्राप्ति। राजा पवमान का अपने सेवकों के साथ अपने नगर में आना।

दक्षिण मार्ग से जाने वाले प्राणियों के दुःखों का वर्णन। चित्रगुप्त द्वारा पापियों का वर्णन। भयंकर नरकोंका वर्णन। अनेक प्रकार के पापों का वर्णन। पापों के अनुरोध से नरक प्राप्ति कथन।

२१६ नरकगतदुःखनिवारणाय धर्माचरणवर्णनम्। १२६०
धार्मिकाणां सुगतिनिरूपणम्

नरकों के दुःख निवारण के लिये मुनियों द्वारा व्यास के प्रति प्रश्न। व्यासजी द्वारा धर्म के आचरण से सुगति प्राप्ति का वर्णन।

प्राणान्त्यजति यो मर्त्यः स्मरन्विष्णुं सनातनम्।
यानेनार्कप्रकाशेन याति धर्मपुरं नरः॥
सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम्।
अमांसभक्षणे विप्रास्तच्च तच्च न तत्समम्॥
ये तु तं धर्मराजानं नराः पुण्यानुभावतः।
पश्यन्ति सौम्यमनसं पितृभूतमिवाऽऽत्मनः॥
तस्माद्धर्मः सेवितव्यः सदा मुक्तिफलप्रदः।
धर्मादर्थस्तथाकामो मोक्षश्चपरिकीर्त्यते॥
धर्मोमाता पिताभ्राता धर्मोनाथःसुहृत्तथा।
धर्मः स्वामी सखागोप्ता तथा धाता च पोषकः॥
धर्मस्तु सेवितोविप्रास्त्रायते महतोभयात्।
देवत्वं च द्विजत्वं च धर्मात्प्राप्नोत्यसंशयम्॥

ये नरा नरकध्वंसिवासुदेवमनुव्रताः ।
ते स्वप्नेऽपि न पश्यन्ति यमं वा नरकार्णवम् ॥
कर्मणा मनसा वाचा येऽच्युतं शरणंगताः ।
न समर्थो यमस्तेषां ते मुक्तिफलभागिनः ॥

२१७ धर्मश्रैष्ठ्यवर्णनम् । शरीरोत्पत्तिकथनम् । १२६६
पुण्यपापानुरोधेन नानायोनिप्रजननवर्णनम् ।

धर्म की श्रेष्ठता का वर्णन । शरीर की उत्पत्ति का वर्णन । पुण्य एवं पाप के अनुरोध से अनेक योनियों में जनन वर्णन । तदनन्तर पापपुण्य का वर्णन ।

२१८ अन्नदानप्रशंसावर्णनम् १२८१

शुभप्राप्ति विषयक मुनियों का व्यास के प्रति प्रश्न । अन्नकी प्रशंसा । अन्नदान से शुभ प्राप्ति का कथन ।

नरःकृत्वाऽप्यकर्माणि ततो धर्मेण युज्यते ।
सर्वेषामेव दानानामन्नंश्रेष्ठमुदाहृतम् ॥
सर्वमन्नं प्रदातव्यमृजुनाधर्ममिच्छता ।
प्राणाह्यन्नं मनुष्याणां तस्माज्जन्तुःप्रजायते ॥
अन्ने प्रतिष्ठिता लोकास्तस्मादन्नंप्रशस्यते ।
अन्नमेव प्रशंसन्ति देवर्षिपितृमानवाः ॥
अन्नस्यहि प्रदानेन स्वर्गमाप्नोति मानवः ।
न्यायलब्धं प्रदातव्यं द्विजातिभ्योऽन्नमुत्तमम् ॥

वृत्यर्थं धर्महेतोर्वा कामकारात्तथैव च ।
अनृतं ये न भाषन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
श्लक्ष्णां वाणीं स्वच्छवर्णां मधुरां पापवर्जिताम् ।
स्वागतेनाभिभाषन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
परुषं ये न भाषन्ते कटुकं निष्ठुरं तथा ।
न पैशुन्यरताः सन्तस्ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
न कोपाद्व्याहरन्ते ये वाचं हृदयदारिणीम् ।
शान्तिं विन्दन्ति ये क्रुद्धास्ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
अरण्ये विजने न्यस्तं परस्वं दृश्यते यदा ।
मनसाऽपि न गृह्णन्ति ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
तथैव परदारान्ये कामवृत्ता रहोगताः ।
मनसाऽपि न हिंसन्ति ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
अवैरा ये त्वनायासा मैत्रचित्तरताः सदा ।
सर्वभूतदयावन्तस्ते नराः स्वर्गगामिनः ॥

कर्म के फलोदय का फल कथन ।

पापेन कर्मणा देवि युक्तो हिंसादिभिर्यतः ।
अहितः सर्वभूतानां हीनायुरुपजायते ॥
शुभेन कर्मणा देवि प्राणिघातविवर्जितः ।
निक्षिप्तशस्त्रो निर्दण्डो न हिंसन्ति कदाचन ॥
न घातयति नो हन्ति घ्नन्तं नैवानुमोदते ।
सर्वभूतेषु सस्नेहो यथाऽऽत्मनि तथा परे ॥

विष्णु भगवान् के जागरणमें भगवद्भजन का फल। चाण्डाल और राक्षस का संवाद।

धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं यतः।
महता तु प्रयत्नेन शरीरं पालयेद्बुधः॥
जीवधर्मार्थसुखं नरस्तथाप्नोति मोक्षगतिमग्र्याम्।
जीवन्कीर्तिमुपैति च भवति मृतस्य का कथालोके॥

सत्य की प्रशंसा :—

सत्येनार्कः प्रतपति सत्येनाऽऽपो रसात्मिकाः।
ज्वलत्यग्निश्च सत्येन वाति सत्येन मारुतः॥
धर्मार्थकामसंप्राप्ति मोक्षप्राप्तिश्च दुर्लभा।
सत्येन जायते पुंसां तस्मात्सत्यं न संत्यजेत्॥
सत्यं ब्रह्म परंलोके सत्यं यज्ञेषु चोत्तमम्।
सत्यं स्वर्गसमायातं तस्मात्सत्यं न संत्यजेत्॥

जागरण की पुण्य प्राप्ति के लिये राक्षस द्वारा मातङ्ग की प्रार्थना। ब्रह्मराक्षस के पूर्वजन्म का कथन एवं राक्षसत्व की प्राप्ति। चाण्डाल के पूर्वजन्म का कथन। मूर्ख ब्राह्मण और उर्वशी का संवाद। शकटदान का माहात्म्य।

व्यास और मुनियोंके संवादमें विष्णुभक्तिका हेतु कथन। सूर्यादि देवोंकी आराधना कथन। भगवान्की मायाका

शूद्राभा वादिनश्चैव ब्राह्मणाश्चान्त्यवासिनः ॥
दन्ता जिताक्षाश्च मुण्डाः काषायवाससः ।
शूद्रा धर्मं वदिष्यन्ति शाठ्यबुद्ध्योपजीविनः ॥
आयुस्तत्र च मर्त्यानां परं त्रिंशद्भविष्यति ।
दुर्बला विषयग्लाना जराशोकैरभिप्लुताः ॥

न यः समुत्सुकः कश्चिद्ग्रन्थार्थं स्थूलबुद्धिमान् ।
स कथं मन्दविज्ञानो ग्रन्थं वक्ष्यामि निर्णयात् ॥
अज्ञात्वा ग्रन्थतत्त्वानि वादं यः कुरुते नरः ।
लोभाद्वाऽप्यथवा दम्भात्स पापी नरकं व्रजेत् ॥
निर्णयं चापि छिद्रात्मा न तद्वक्ष्यति तत्त्वतः ।
सोऽपीहास्यार्थतत्त्वज्ञो यस्मान्नैवाऽऽत्मवानपि ॥

एकत्व और नानात्व का लक्षण। ज्ञान और विज्ञान से संहित मोक्ष का वर्णन। इस ज्ञान को देने के लिये अधिकारी का निर्णय।

न देयमेतच्च यथाऽनृतात्मने
शठाय क्लीबाय न जिह्मबुद्धये।
न पण्डितज्ञानपरोपतापिने,
देयं तथा शिष्यविबोधनाय॥

जनक के प्रति वशिष्ठजीने कहा—मुझे यह महा ज्ञान ब्रह्माजी से प्राप्त हुआ है। ज्ञान प्राप्ति की परम्परा का कथन।

पुराण को सुनकर प्रसन्न हुए मुनियों द्वारा व्यासजी की प्रशंसा। तदनन्तर सब मुनियों का अपने २ आश्रमों में जाना। ब्रह्मपुराण के श्रवण पठन करनेवालों को फल प्राप्ति का कथन।

धर्म की प्रशंसा।

धर्मेण राज्यं लभते मनुष्यः,
स्वर्गं च धर्मेण नरः प्रयाति।
आयुश्च कीर्तिश्च तपश्च धर्मं,
ध र्मेण मोक्षं लभते मनुष्यः॥

धर्मोऽत्र मातापितरौ नरस्य,

धर्मः सखा चात्र परे च लोके।

त्राता च धर्मस्त्विह मोक्षदश्च,

धर्मादृते नास्ति तु किञ्चिदेव॥

ब्रह्मपुराण की विषय-सूची समाप्त।

अस्माभिः शोधितं सर्वं पुराणं ब्रह्मसंज्ञितम्।
शोधने या हि त्रुटयः क्षन्तव्यास्ता महोदयैः॥

विद्वज्जनचरणयुगलानुरागिणः—

लक्ष्मणदुर्गवास्तव्य प्रह्लादत्त त्रिवेदि

नवलदुर्गाभिजन कजोड़ीलालमिश्र राममाथदाधीचाः।

शुभम्।

ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु



॥ श्री गणेशाय नमः ॥

ब्रह्मपुराणम् ।

प्रथमोऽध्यायः

तत्रादौ नैमिषारण्य वर्णनम्

नारायणं नमस्कृत्य नरञ्चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीञ्चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥

यस्मात् सर्व्वमिदं प्रपञ्चरचितं मायाजगज्जायते,
यस्मिंस्तिष्ठति याति चास्तसमये कल्पानुकल्पे पुनः ।
यं ध्यात्वा मुनयः प्रपञ्चरहितं विन्दन्ति मोक्षं ध्रुवं,
तं वन्दे पुरुषोत्तमाख्यममलं नित्यं विभुं निश्चलम् ॥१॥
यं ध्यायन्ति बुधाः समाधिसमये शुद्धं वियत्सन्निभं,
नित्यानन्दमयं प्रसन्नममलं सर्व्वेश्वरं निर्गुणम् ।
व्यक्ताव्यक्तपरं प्रपञ्चरहितं ध्यानैकगम्यं विभुं,
तं संसारविनाशहेतुमजरं वन्दे हरिं मुक्तिदम् ॥ २ ॥
सुपुण्ये नैमिषारण्ये पवित्रे सुमनोहरे ।
नानामुनिजनाकीर्णे नानापुष्पोपशोभिते ॥ ३ ॥
सरलैः कर्णिकारैश्च पनसैर्धवखादिरैः ।
आम्रजम्बूकपित्थैश्च न्यग्रोधैर्देवदारुभिः ॥ ४ ॥

अश्वत्थैः पारिजातैश्च चन्दनागुरुपाटलैः ।
बकुलैः सप्तपर्णश्च पुन्नागैर्नागकेशरैः ॥ ५ ॥
शालैस्तालैस्तमालैश्च नारिकेलैस्तथार्ज्जुनैः ।
अन्यैश्च बहुभिर्वृक्षैश्चम्पकाद्यैश्च शोभिते ॥ ६ ॥
नानापक्षिगणाकीर्णे नानामृगगणैर्युते ।
नानाजलाशयैः पुण्यैर्दीर्घिकाद्यैरलङ्कृते ॥ ७ ॥
ब्राह्मणैःक्षत्रियैर्वैश्यैःशूद्रैश्चान्यैश्च जातिभिः ।
वानप्रस्थैर्गृहस्थैश्च यतिभिर्ब्रह्मचारिभिः ॥ ८ ॥
सम्पन्नैर्गोकुलैश्चैव सर्वत्र समलङ्कृते ।
यवगोधूमचणकैर्माषमुद्गतिलेक्षुभिः ॥ ९ ॥
चीनकाद्यैस्तथा मेध्यैःशस्यैश्चान्यैश्च शोभिते ।
तत्र दीप्ते हुतवहे हूयमाने महामखे ॥ १० ॥
यजतां नैमिषेयाणां सत्रे द्वादशवार्षिके ।
आजग्मुस्तत्र मुनयस्तथाऽन्येऽपि द्विजातयः ॥ ११ ॥
तानागतान् द्विजांस्ते तु पूजां चक्रुर्यथोचिताम् ।
तेषु तत्रोपविष्टेषु ऋत्विग्भिः सहितेषु च ॥ १२ ॥
तत्राजगाम सूतस्तुमतिमाँल्लोमहर्षणः ।
तं दृष्ट्वा ते मुनिवराः पूजां चक्रुर्मुदान्विताः ॥ १३ ॥
सोऽपि तान् प्रतिपूज्यैव संविवेश वरासने ।
कथां चक्रुस्तदान्योन्यं सूतेन सहिता द्विजाः ॥१४॥
कथान्ते व्यासशिष्यं ते पप्रच्छुः संशयं मुदा ।
ऋत्विग्भिः सहिताः सर्व्वे सदस्यैः सह दीक्षिताः ॥ १५ ॥

मुनय ऊचुः ।

पुराणागमशास्त्राणि सेतिहासानि सत्तम । १
जानासि देवदैत्यानां चरितं जन्म कर्म्म च ॥ १६ ॥
न तेऽस्त्यविदितं किञ्चिद्वेदे शास्त्रे च भारते ।
पुराणे मोक्ष शास्त्रे च सर्व्वज्ञोऽसि महामते ॥ १७ ॥
यथापूर्व्वमिदं सर्व्वमुत्पन्नं सचराचरम् ।
ससुरासुरगन्धर्व्वं सयक्षोरगराक्षसम् ॥ १८ ॥
श्रोतुमिच्छामहे सूत ब्रूहि सर्व्वं यथा जगत् ।
बभूव भूयश्च यथा महाभाग भविष्यति ॥ १९ ॥
यतश्चैव जगत् सूत यतश्चैव चराचरम् ।
लीनमासीत्तथा यत्र लयमेष्यति यत्र च ॥ २० ॥

लोमहर्षण उवाच ।

अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने ।
सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्व्वजिष्णवे ॥ २१ ॥
नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च ।
वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकर्म्मणे ॥ २२ ॥
एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः ।
अव्यक्ताव्यक्तभूताय विष्णवे मुक्तिहेतवे ॥ २३ ॥
स्वर्गस्थितिविनाशाय जगतो योऽजरामरः ।
मूलभूतो नमस्तस्मै विष्णवे परमात्मने ॥ २४ ॥
आधारभूतं विश्वस्याप्यणीयांसमणीयसाम् ।
प्रणम्य सर्व्वभूतस्थमच्युतं पुरुषोत्तमम् ॥ २५ ॥

ज्ञानस्वरूपमत्यन्तं निर्म्मलं परमार्थतः ।
तमेवार्थस्वरूपेण भ्रान्तिदर्शनतः स्थितम् ॥ २६ ॥
विष्णुं ग्रसिष्णुं विश्वस्य स्थितौ स्वर्गे तथा प्रभुम् ।
सर्व्वज्ञं जगतामीशमजमक्षयमव्ययम् ॥ २७ ॥
आद्यं सुसूक्ष्मं विश्वेशं ब्रह्मादीन् प्रणिपत्य च ।
इतिहासपुराणज्ञं वेदवेदाङ्गपारगम् ॥ २८ ॥
सर्व्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञं पराशरसुतं प्रभुम् ।
गुरुं प्रणम्य वक्ष्यामि पुराणं वेदसम्मितम् ॥ २९ ॥
कथयामि यथापूर्व्वं दक्षाद्यैर्मुनिसत्तमैः ।
पृष्टः प्रोवाच भगवानब्जयोनिः पितामहः ॥ ३० ॥
शृणुध्वं सम्प्रवक्ष्यामि कथां पापप्रणाशिनीम् ।
कथ्यमानां मया चित्रां बह्वर्थां श्रुतिविस्तराम् ॥ ३१ ॥
यस्त्विमां धारयेन्नित्यं शृणुयाद्वाप्यभीक्ष्णशः ।
स्ववंशधारणं कृत्वा स्वर्गलोके महीयते ॥ ३२ ॥
अव्यक्तं कारणं यत्तन्नित्यं सदसदात्मकम् ।
प्रधानं पुरुषस्तस्मान्निर्म्ममे विश्वमीश्वरः ॥ ३३ ॥
तं बुध्यध्वं मुनिश्रेष्ठा ब्रह्माणममितौजसम् ।
स्रष्टारं सर्व्वभूतानां नारायणपरायणम् ॥ ३४ ॥
अहङ्कारस्तु महतस्तस्माद्भूतानि जज्ञिरे ।
भूतभेदाश्च भूतेभ्य इति सर्गः सनातनः ॥ ३५ ॥
विस्तरावयवं चैव यथाप्रज्ञं यथाश्रुति ।
कीर्त्यमानं शृणुध्वं वः सर्व्वेषां कीर्त्तिवर्द्धनम् ॥ ३६ ॥

कीर्त्तितं स्थिरकीर्त्तीनां सर्व्वेषां पुण्यवर्द्धनम् ।
ततः स्वयम्भूर्भगवान् सिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः ॥ ३७ ॥
अप एव ससर्ज्जादौ तासु वीर्य्यमथासृजत् ।
आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ॥ ३८ ॥
अयनं तस्य ताः पूर्व्वं तेन नारायणः स्मृतः ।
हिरण्यवर्णमभवत्तदन्तमुदकेशयम् ॥ ३९ ॥
तत्र जज्ञे स्वयं ब्रह्मा स्वयम्भूरिति नः श्रुतम् ।
हिरण्यवर्णो भगवानुषित्वा परिवत्सरम् ॥ ४० ॥
तदन्तमकरोद्द्वैधं दिवं भुवमथापि च ।
तयोः शकलयोर्म्मध्य आकाशमकरोत्प्रभुः ॥ ४१ ॥
अप्सु पारिप्लवां पृथ्वीं दिशश्च दशधा दधे ।
तत्र कालं मनो वाचं कामं क्रोधमथो रतिम् ॥ ४२ ॥
ससर्ज सृष्टिं तद्रूपां स्रष्टुमिच्छन्प्रजापतीन् ।
मरीचिमत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥ ४३ ॥
वसिष्ठं च महातेजाः सोऽसृजत्सप्त मानसान् ।
सप्त ब्राह्मण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः ॥ ४४ ॥
नारायणात्मकानां तु सप्तानां ब्रह्मजन्मनाम् ।
ततोऽसृजत् पुरा ब्रह्मा रुद्रं रोषात्मसम्भवम् ॥ ४५ ॥
सनत्कुमारं च विभुं पूर्व्वेषामपि पूर्व्वजम् ।
सप्तस्वेता अजायन्त प्रजा रुद्राश्च भो द्विजाः ॥ ४६ ॥
स्कन्दः सनत्कुमारश्च तेजः संक्षिप्य तिष्ठतः ।
तेषां सप्त महावंशा दिव्या देवगणान्विताः ॥ ४७ ॥

क्रियावन्तः प्रजावन्तो महर्षिभिरलङ्कृताः ।
विद्युतोऽशनिमेघांश्च रोहितेन्द्रधनूंषि च ॥ ४८ ॥
वयांसि च ससर्जादौ पर्जन्यञ्च ससर्ज ह ।
ऋचो यजूंषि सामानि निर्ममे यज्ञसिद्धये ॥ ४९ ॥
साध्यानजनयद्देवानित्येवमनुसञ्जगुः ।
उच्चावचानि भूतानि गात्रेभ्यस्तस्य जज्ञिरे ॥ ५० ॥
आपवस्य प्रजासर्गं सृजतो हि प्रजापतेः ।
सृज्यमानाः प्रजा नैव विवर्द्धन्ते यदा तदा ॥ ५१ ॥
द्विधा कृत्वात्मनो देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत् ।
अर्द्धेन नारी तस्यां तु सोऽसृजद्द्विविधाः प्रजाः ॥ ५२ ॥
दिवञ्च पृथिवीं चैव महिम्ना व्याप्य तिष्ठति ।
विराजमसृजद्विष्णुः सोऽसृजत् पुरुषं विराट् ॥ ५३ ॥
पुरुषं तं मनुं विद्यात्तस्य मन्वन्तरं स्मृतम् ।
द्वितीयं मानसस्यैतन्मनोरन्तरमुच्यते ॥ ५४ ॥
स वैराजः प्रजासर्गं ससर्ज पुरुषः प्रभुः ।
नारायणविसर्गस्य प्रजास्तस्याप्ययोनिजाः ॥ ५५ ॥
आयुष्मान् कीर्तिमान् पूर्णप्रज्ञावांश्च भवेन्नरः ।
आदिसर्गं विदित्वेमं यथेष्टां चाप्नुयाद्गतिम् ॥ ५६ ॥

इति श्रीब्रह्म महापुराणे आदिसर्गवर्णनं
प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥



द्वितीयोऽध्यायः ।

तत्रादौ स्वयम्भुव मनुवंश वर्णनम्

लोमहर्षण उवाच ।

स सृष्ट्वा तु प्रजास्त्वेवमापवो वै प्रजापतिः ।
लेभे वै पुरुषः पत्नीं शतरूपामयोनिजाम् ॥ १ ॥
आपवस्य महिम्ना तु दिवमावृत्य तिष्ठतः ।
धर्मेणैव मुनिश्रेष्ठाः शतरूपा व्यजायत ॥ २ ॥
सा तु वर्षायुतं तप्त्वा तपः परमदुश्चरम् ।
भर्त्तारं दीप्ततपसं पुरुषं प्रत्यपद्यत ॥ ३ ॥
स वै स्वायम्भुवो विप्राः पुरुषो मनुरुच्यते ।
तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोच्यते ॥ ४ ॥
वैराजात् पुरुषाद्वीरं शतरूपा व्यजायत ।
प्रियव्रतोत्तानपादौ वीरात् काम्या व्यजायत ॥ ५ ॥
काम्या नाम सुता श्रेष्ठा कर्द्दमस्य प्रजापतेः ।
काम्यापुत्रास्तु चत्वारः सम्राट् कुक्षिर्विराट्प्रभुः ॥ ६ ॥
उत्तानपादं जग्राह पुत्रमत्रिः प्रजापतिः ।
उत्तानपादाच्चतुरः सूनृता सुषुवे सुतान ॥ ७ ॥
धर्म्मस्य कन्या सुश्रोणी सूनृता नाम विश्रुता ।
उत्पन्ना वाजिमेधेन ध्रुवस्य जननी शुभा ॥ ८ ॥
ध्रुवञ्च कीर्त्तिमन्तञ्च आयुष्मन्तं वसुं तथा ।
उत्तानपादोऽजनयत् सूनृतायां प्रजापतिः ॥ ६ ॥

ध्रुवो वर्षसहस्राणि त्रीणि दिव्यानि भो द्विजाः ।
तपस्तेपे महाभागः प्रार्थयन् सुमहद्यशः ॥ १० ॥
तस्मै ब्रह्मा ददौ प्रीतः स्थानमात्मसमं प्रभुः ।
अचलञ्चैव पुरतः सप्तर्षीणां प्रजापतिः ॥ ११ ॥
तस्याभिमानमृद्धिञ्च महिमानं निरीक्ष्य च ।
देवासुराणामाचार्य्यः श्लोकं प्रागुशना जगौ ॥ १२ ॥
अहोऽस्य तपसा वीर्य्यमहो श्रुतमहोऽद्भुतम् ।
यमद्य पुरतः कृत्वा ध्रुवं सप्तर्षयः स्थिताः ॥ १३ ॥
तस्माच्छिलष्टिं च भव्यं च ध्रुवाच्छम्भुर्व्यजायत ।
श्लिष्टेराधत्त सुच्छाया पञ्च पुत्रानकल्मषान् ॥ १४ ॥
रिपुं रिपुञ्जयं वीरं वृकलं वृकतेजसम् ।
रिपोराधत्त बृहती चक्षुषं सर्व्वतेजसम् ॥ १५ ॥
अजीजनत् पुष्करिण्यां वैरण्यां चाक्षुषं मनुम् ।
प्रजापतेरात्मजायां वीरणस्य महात्मनः ॥ १६ ॥
मनोरजायन्त दश नड्वलायां महौजसः ।
कन्यायां मुनिशार्दूला वैराजस्य प्रजापतेः ॥ १७ ॥
कुत्सः पुरुः शतद्युम्नस्तपस्वी सत्यवाक्कविः ।
अग्निष्टुदतिरात्रश्च सुद्युम्नश्चेति ते नव ॥ १८ ॥
अभिमन्युश्च दशमो नड्वलायां महौजसः ।
पुरोरजनयत् पुत्रान् षडाग्नेयी महाप्रभान् ॥ १९ ॥
अङ्गं सुमनसं ख्यातिं क्रतुमङ्गिरसं गयम् ।
अङ्गात् सुनीथापत्यं वै वेनमेकं व्यजायत ॥ २० ॥

अपचारेण वेनस्य प्रकोपः सुमहानभूत् ।
प्रजार्थमृषयो यस्य ममन्थुर्दक्षिणं करम् ॥ २१ ॥
वेनस्य मथिते पाणौ स बभूव महान्नृपः ।
तं दृष्ट्वा मुनयः प्राहुरेष वै मुदिताः प्रजाः ॥ २२ ॥
करिष्यति महातेजा यशश्च प्राप्स्यते महत् ।
स धन्वी कवची जातो जलज्ज्वलनसन्निभः ॥ २३ ॥
पृथुर्वैन्यस्तथा चेमां ररक्ष क्षत्रपूर्वजः ।
राजसूयाभिषिक्तानामाद्यः स वसुधाधिपः ॥ २४ ॥
तस्माच्चैव समुत्पन्नौ निपुणौ सूतमागधौ ।
तेनेयं गौर्म्मुनिश्रेष्ठा दुग्धा शस्यानि भूभृता ॥ २५ ॥
प्रजानां वृत्तिकामेन देवैः सर्षिगणैः सह ।
पितृभिर्दानवैश्चैव गन्धर्वैरप्सरोगणैः ॥ २६ ॥
सर्पैः पुण्यजनैश्चैव वीरुद्भिः पर्व्वतैस्तथा ।
तेषु तेषु च च पात्रेषु दुह्यमाना वसुन्धरा ॥ २७ ॥
प्रादाद्यथेप्सितं क्षीरं तेन प्राणानधारयन् ।
पृथोस्तु पुत्रौ धर्म्मज्ञौ जज्ञातेऽन्तर्धिपातिनौ ॥ २८ ॥
शिखण्डिनी हविर्धानमन्तर्धानाद्व्यजायत ।
हविर्धानात् षडाग्नेयी धिषणाजनयत् सुतान् ॥ २९ ॥
प्राचीनवर्हिषंशुक्लं गयं कृष्णं प्रजाजिनौ ।
प्राचीनवर्हिर्भगवान्महानासीत्प्रजापतिः ॥ ३० ॥
हविर्धानान्मुनिश्रेष्ठा येन संवर्द्धिताः प्रजाः ।

प्राचीनाग्राः कुशास्तस्य पृथिव्यां द्विजसत्तमाः ।*
प्राचीनबर्हिर्भगवान् पृथिवीतलचारिणीः ॥ ३१ ॥
समुद्रतनयायां तु कृतदारोऽभवत् प्रभुः ।
महतस्तपसः पारे सवर्णायां प्रजापतिः ॥ ३२ ॥
सवर्णाधत्त सामुद्री दश प्राचीनबर्हिषः ।
सर्व्वान् प्राचेतसो नाम धनुर्व्वेदस्य पारगान् ॥ ३३ ॥
अपृथग्धर्म्मचरणास्तेऽतप्यन्त महत्तपः ।
दश वर्षसहस्राणि समुद्रसलिलेशयाः ॥ ३४ ॥
तपश्चरत्सु पृथिवीं प्रचेतःसु महीरुहाः ।
अरक्ष्यमाणामावव्रुर्बभूवाथ प्रजाक्षयः ॥ ३५ ॥
नाशकन्मारुतो वातुं वृतं खमभवद्द्रुमैः ।
दश वर्षसहस्राणि न शेकुश्चेष्टितुं प्रजाः ॥ ३६ ॥
तदुपश्रुत्य तपसा युक्ताः सर्व्वे प्रचेतसः ।
मुखेभ्यो वायुमग्निं च ससृजुर्जातमन्यवः ॥ ३७ ॥
उन्मूलानथ वृक्षांस्तु कृत्वा वायुरशोषयत् ।
तानग्निरदहद्घोर एवमासीद्द्रुमक्षयः ॥ ३८ ॥
द्रुमक्षयमथो बुद्ध्वा किञ्चिच्छिष्टेषु शाखिषु ।
उपगम्याब्रवीदेतांस्तदा सोमः प्रजापतीन् ॥ ३९ ॥
कोपं यच्छत राजानः सर्व्वे प्राचीनबर्हिषः ।
वृक्षशून्या कृता पृथ्वी शाम्येतामग्निमारुतौ ॥ ४० ॥

---

* इदमर्धं क्वचिन्न लक्ष्यते ।

रत्नभूता च कन्येयं वृक्षाणां वरवर्णिनी।
भविष्यं जानता तात धृता गर्भेण वै मया ॥ ४१ ॥

मारिषा नाम नाम्नैषा वृक्षाणामिति निर्म्मिता।
भार्य्या वोऽस्तु महाभागाः सोमवंशविवर्द्धिनी ॥ ४२ ॥

युष्माकं तेजसोऽर्द्धेन मम चार्द्धेन तेजसः।
अस्यामुत्पत्स्यते विद्वान् दक्षो नाम प्रजापतिः ॥ ४३ ॥

स इमां दग्धभूयिष्ठां युष्मत्तेजोमयेन वै।
अग्निनाग्निसमो भूयः प्रजाः संवर्द्धयिष्यति ॥ ४४ ॥

ततः सोमस्य वचनाज्जगृहुस्ते प्रचेतसः।
संहृत्य कोपं वृक्षेभ्यः पत्नीं धर्म्मेण मारिषाम् ॥ ४५ ॥

दशभ्यस्त प्रचेतोभ्यो मारिषायां प्रजापतिः।
दक्षो जज्ञे महातेजाः सोमस्यांशेन भो द्विजाः ॥ ४६ ॥

अचरांश्च चरांश्चैव द्विपदोऽथ चतुष्पदः।
स सृष्ट्वा मनसा दक्षः पश्चादसृजत स्त्रियः ॥ ४७ ॥

ददौ दश स धर्म्माय कश्यपाय त्रयोदश।
शिष्टाः सोमाय राज्ञे च नक्षत्राख्या ददौ प्रभुः ॥ ४८ ॥

तासु देवाः खगा गावो नागा दितिजदानवाः।
गन्धर्व्वाप्सरसश्चैव जज्ञिरेऽन्याश्च जातयः ॥ ४९ ॥

ततः प्रभृति विप्रेन्द्राः प्रजा मैथुनसंभवाः।
सङ्कल्पाद्दर्शनात्स्पर्शात्पूर्व्वेषां प्रोच्यते प्रजाः ॥ ५० ॥

मुनय ऊचुः ।

देवानां दानवानाञ्च गन्धर्वोरगरक्षसाम् ।
सम्भवस्तु श्रुतोऽस्माभिर्दक्षस्य च महात्मनः ॥ ५१ ॥
अङ्गुष्ठाद्ब्रह्मणो जज्ञे दक्षः किल शुभव्रतः ।
वामाङ्गुष्ठात्तथा चैवं तस्य पत्नी व्यजायत ॥ ५२ ॥
कथं प्राचेतसत्वं स पुनर्लेभे महातपाः ।
एत न्नः संशयं सूत व्याख्यातुं त्वमिहार्हसि ॥
दौहित्रश्चैव सोमस्य कथं श्वशुरतां गतः ॥ ५३ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

उत्पत्तिश्च निरोधश्च नित्यं भूतेषु भोद्विजाः ।
ऋषयोऽत्र न मुह्यन्ति विद्यावन्तश्च ये जनाः ॥ ५४ ॥
युगे युगे भवन्त्येते पुनर्दक्षादयो नृपाः ।
पुनश्चैव निरुध्यन्ते विद्वांस्तत्र न मुह्यति ॥ ५५ ॥
ज्यैष्ठं कानिष्ठ्यमप्येषांपूर्वंनासीद्द्विजोत्तमाः ।
तप एव गरीयोऽभूत्प्रभावश्चैव कारणम् ॥ ५६ ॥
इमां विसृष्टिं दक्षस्य यो विद्यात् सचराचराम् ।
प्रजावानायुरुत्तीर्णः स्वर्गलोके महीयते ॥ ५७ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे सृष्टिकथनं नाम
द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

— —

तृतीयोऽध्यायः ।

देवदानवोत्पत्ति वर्णनम्

मुनय उचुः ।

देवानां दानवानां च गन्धर्व्वोरगरक्षसाम् ।
उत्पत्तिं विस्तरेणैव लोमहर्षण कीर्त्तय ॥ १ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

प्रजाः सृजति व्यादिष्टः पूर्वं दक्षः स्वयम्भुवा ।
यथा ससर्ज भूतानि तथा शृणुत भो द्विजाः ॥ २ ॥
मानसान्येव भूतानि पूर्व्वमेवासृजत् प्रभुः ।
ऋषीन्देवान्सगन्धर्व्वानसुरान्यक्षराक्षसान् ॥ ३ ॥
यदास्य मानसी विप्रा न व्यवर्द्धत वै प्रजाः ।
तदा सञ्चिन्त्य धर्म्मात्मा प्रजाहेतोः प्रजापतिः ॥ ४ ॥
स मैथुनेन धर्म्मेण सिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः ।
असिक्नीमावहत् पत्नीं वीरणस्य प्रजापतेः ॥ ५ ॥
सुतां सुतपसा युक्तां महतीं लोकधारिणीम् ।
अथ पुत्रसहस्राणि वैरण्यां पञ्च वीर्य्यवान् ॥ ६ ॥
असिक्न्यां जनयामास दक्ष एव प्रजापतिः ।
तांस्तु दृष्ट्वा महाभागान्संविवर्द्धयिषून् प्रजाः ॥ ७ ॥
देवर्षिः प्रियसंवादो नारदः प्राब्रवीदिदम् ।
नाशाय वचनं तेषां शापायैवात्मनस्तथा ॥ ८ ॥
यं कश्यपः सुतवरं परमेष्ठी व्यजीजनत् ।
दक्षस्य वै दुहितरि दक्षशापभयान्मुनिः ॥ ९ ॥

पूर्व्वं स हि समुत्पन्नो नारदः परमेष्ठिनः ।
असिक्न्यामथ वैरण्यां भूयो देवर्षिसत्तमः ॥ १० ॥
तं भूयो जनयामास पितेव मुनिपुङ्गवम् ।
तेन दक्षस्य वै पुत्रा हर्यश्वा इति विश्रुताः ॥ ११ ॥
निर्म्मथ्य नाशिताः सर्व्वे विधिना च न संशयः ।
तस्योद्यतस्तदा दक्षो नाशायामितविक्रमः ॥ १२ ॥
ब्रह्मर्षीन् पुरतः कृत्वा याचितः परमेष्ठिना ।
ततोऽभिसन्धिश्चक्रे वै दक्षस्य परमेष्ठिना ॥ १३ ॥
कन्यायां नारदो मह्यं तव पुत्रो भवेदिति ।
ततो दक्षः सुतां प्रादात् प्रियां वै परमेष्ठिने
स तस्यां नारदो जज्ञे भूयः शापभयादृषिः ॥ १४ ॥

मुनय उचुः ।

कथं प्रणाशिताः पुत्रा नारदेन महर्षिणा ।
प्रजापतेः सूतवर्य्य श्रोतुमिच्छाम तत्त्वतः ॥ १५ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

दक्षस्य पुत्रा हर्य्यश्वा विवर्द्धयिषवः प्रजाः ।
समागता महावीर्य्या नारदस्तानुवाच ह ॥ १६ ॥

नारद उवाच ।

बालिशा बत यूयं वै नास्या जानीत वै भुवः ।
प्रमाणं स्रष्टकामा वै प्रजाः प्राचेतसात्मजाः ॥ १७ ॥
अन्तरूर्ध्वमधश्चैव कथं सृजथ वै प्रजाः ।
ते तु तद्वचनं श्रुत्वा प्रयाताः सर्व्वतो दिशः ॥ १८ ॥

अद्यापि न निवर्त्तन्ते समुद्रेभ्य इवापगाः ।
हर्यश्वेष्वथ नष्टेषु दक्षः प्राचेतसः पुनः ॥ १९ ॥
वैरण्यामथ पुत्राणां सहस्रमसृजत्प्रभुः ।
विवर्द्धयिषवस्ते तु शबलाश्वास्तथा प्रजाः ॥ २० ॥
पूर्व्वोक्तं वचनं ते तु नारदेन प्रचोदिताः ।
अन्योन्यमूचुस्ते सर्व्वे सम्यगाह महानृषिः ॥ २१ ॥
भ्रातृणां पदवीं ज्ञातुं गन्तव्यं नात्र संशयः ।
ज्ञात्वा प्रमाणं पृथ्व्याश्च सुखं स्रक्ष्यामहे प्रजाः ॥ २२ ॥
तेऽपि तेनैव मार्गेण प्रयाताः सर्व्वतो दिशम् ।
अद्यापि न निवर्त्तन्ते समुद्रेभ्य इवापगाः ॥ २३ ॥
तदा प्रभृति वै भ्राता भ्रातुरन्वेषणे द्विजाः ।
प्रयातो नश्यति क्षिप्रं तन्न कार्य्यं विपश्चिता ॥ २४ ॥
तांश्चैव नष्टान् विज्ञाय पुत्रान् दक्षः प्रजापतिः ।
षष्टिं ततोऽसृजत् कन्या वैरण्यामिति नः श्रुतम् ॥ २५ ॥
तास्तदा प्रतिजग्राह भार्य्यार्थं कश्यपः प्रभुः ।
सोमो धर्म्मश्च भो विप्रास्तथैवान्ये महर्षयः ॥ २६ ॥
ददौ स दश धर्म्माय कश्यपाय त्रयोदश ।
सप्तविंशतिः सोमाय चतस्रोऽरिष्टनेमिने ॥ २७ ॥
द्वे चैव बहुपुत्राय द्वे चैवाङ्गिरसे तथा ।
द्वे कृशाश्वाय विदुषे तासां नामानि मे शृणु ॥ २८ ॥
अरुन्धती वसुर्यामी लम्बा भानुर्मरुत्वती ।
सङ्कल्पा च मुहूर्त्ता च साध्या विश्वा च भो द्विजाः ॥ २९ ॥

धर्म्मपत्न्यो दश त्वेतास्तास्वपत्यानि बोधत ।
विश्वेदेवास्तु विश्वायाः साध्या साध्यान् व्यजायत ॥ ३० ॥
मरुत्वत्यां मरुत्वन्तो वसोस्तु वसवः सुताः ।
भानोस्तु भानवः पुत्रा मुहूर्त्तास्तु मुहूर्त्तजाः ॥ ३१ ॥
लम्बायाश्चैव घोषोऽथ नागवीथी च यामिजा ।
पृथिवीविषयं सर्व्वमरुन्धत्यां व्यजायत ॥ ३२ ॥
सङ्कल्पायास्तु विश्वात्मा जज्ञे सङ्कल्प एव हि ।
नागवीथ्याञ्च यामिन्यां वृषलश्च व्यजायत ॥ ३३ ॥
परा याः सोमपत्नीश्च दक्षः प्राचेतसो ददौ ।
सर्व्वा नक्षत्रनाम्न्यस्ता ज्योतिषे परिकीर्त्तिताः ॥ ३४ ॥
ये त्वन्ये ख्यातिमन्तो वै देवा ज्योतिष्पुरोगमाः ।
वसवोऽष्टौ समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि विस्तरम् ॥ ३५ ॥
आपो ध्रुवश्च सोमश्च धवश्चैवानिलोऽनलः ।
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवो नामभिः स्मृताः ॥ ३६ ॥
आपस्य पुत्रो वैतण्डः श्रमः श्रान्तो मुनिस्तथा ।
ध्रुवस्य पुत्रो भगवान् कालो लोकप्रकालनः ॥ ३७ ॥
सोमस्य भगवान् वर्च्चा वर्च्चस्वी येन जायते ।
धवस्य पुत्रो द्रविणो हुतहव्यवहस्तथा ॥ ३८ ॥
मनोहरायाः शिशिरः प्राणोऽथ रमणस्तथा ।
अनिलस्य शिवा भार्य्या तस्याः पुत्रो मनोजवः ।
अविज्ञातगतिश्चैव द्वौ पुत्रावनिलस्य च ॥ ३९ ॥

अग्निपुत्रः कुमारस्तु शरस्तम्बे श्रिया वृतः ।
तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजः ॥ ४० ॥
अपत्यं कृत्तिकानां तु कार्त्तिकेय इति स्मृतः ।
प्रत्यूषस्य विदुः पुत्रमृषिं नाम्नाथ देवलम् ॥ ४१ ॥
द्वौ पुत्रौ देवलस्यापि क्षमावन्तौ मनीषिणौ ।
बृहस्पतेस्तु भगिनी वरस्त्री ब्रह्मवादिनी ॥ ४२ ॥
योगसिद्धा जगत् कृत्स्नमसक्ता विचचार ह ।
प्रभासस्य तु सा भार्य्या वसूनामष्टमस्य तु ॥ ४३ ॥
विश्वकर्म्मा महाभागो यस्यां जज्ञे प्रजापतिः ।
कर्त्ता शिल्पसहस्राणां त्रिदशानाञ्च वार्द्धकिः ॥ ४४ ॥
भूषणानाञ्च सर्व्वेषां कर्त्ता शिल्पवतां वरः ।
यः सर्व्वेषां विमानानि दैवतानां चकार ह ॥ ४५ ॥
मानुषाश्चोपजीवन्ति यस्य शिल्पं महात्मनः ।
सुरभी कश्यपाद्रुद्रानेकादश विनिर्म्ममे ॥ ४६ ॥
महादेवप्रसादेन तपसा भाविता सती ।
अजैकपादहिर्बुध्न्यस्त्वष्टा रुद्रश्च वीर्य्यवान् ॥ ४७ ॥
हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्चापराजितः ।
वृषाकपिश्च शम्भुश्च कपर्द्दी रैवतस्तथा ॥ ४८ ॥
मृगव्याधश्च शर्व्वश्च कपाली च द्विजोत्तमाः ।
एकादशैते विख्याता रुद्रास्त्रिभुवनेश्वराः ॥ ४९ ॥
शतं त्वेवं समाख्यातं रुद्राणाममितौजसाम् ।
पुराणे मुनिशार्दूला यैर्व्याप्तं सचराचरम् ॥ ५० ॥

दारान् शृणुध्वं विप्रेन्द्राः कश्यपस्य प्रजापतेः ।
अदितिर्दितिर्दनुश्चैव अरिष्टा सुरसा खसा ॥ ५१ ॥
सुरभिर्विनता चैव ताम्रा क्रोधवशा इला ।
कद्रुर्मुनिश्च भो विप्रास्तास्वपत्यानि बोधत ॥ ५२ ॥
पूर्व्वमन्वतरे श्रेष्ठाद्वादशासन् सुरोत्तमाः ।
तुषिता नाम तेऽन्योन्यमूचुर्वैवस्वतेऽन्तरे ॥ ५३ ॥
उपस्थितेऽतियशसश्चाक्षुषस्यान्तरे मनोः
हितार्थं सर्व्वलोकानां समागम्य परस्परम् ॥ ५४ ॥
आगच्छत द्रुतं देवा अदितिं सम्प्रविश्य वै ।
मन्वन्तरे प्रसूयामस्तन्नः श्रेयो भविष्यति ॥ ५५ ॥
एवमुक्त्वा तु ते सर्व्वे चाक्षुषस्यान्तरे मनोः
मारीचात् कश्यपाज्जातास्त्वदित्या दक्षकन्यया ॥ ५६ ॥
तत्र विष्णुश्च शक्रश्च जज्ञाते पुनरेव हि ।
अर्य्यमा चैव धाता च त्वष्टा पूषा तथैव च ॥ ५७ ॥
विवस्वान् सविता चैव मित्रो वरुण एव च ।
अंशो भगश्चातितेजा आदित्या द्वादश स्मृताः ॥ ५८ ॥
चाक्षुषस्यान्तरे पूर्व्वमासंस्ते तुषिताः सुराः ।
वैवस्वतेऽन्तरे ते वा आदित्या द्वादश स्मृताः *
सप्तविंशति ताः प्रोक्ताः सोमपत्न्यो महाव्रताः
तासामपत्यान्यभवन् दीप्तान्यमिततेजसः ॥ ५९ ॥

---

* क्वचिदयं श्लोकोनास्ति ।

अरिष्टनेमिपत्नीनामपत्यानीह षोडश ।
बहुपुत्रस्य विदुषश्चतस्रो विद्युतः स्मृताः ॥ ६० ॥
चाक्षुषस्यान्तरे पूर्व्वे ऋचो ब्रह्मर्षिसत्कृताः ।
कृशाश्वस्य च देवर्षेर्देवप्रहरणाः स्मृताः ॥ ६१ ॥
एते युगसहस्रान्ते जायन्ते पुनरेव हि ।
सर्व्वे देवगणाश्चात्र त्रयस्त्रिंशत्तु कामजाः ॥ ६२ ॥
तेषामपि च भो विप्रा निरोधोत्पत्तिरुच्यते
यथा सूर्य्यस्य गगन उदयास्तमयाविह ॥ ६३ ॥
एवं देवनिकायास्ते सम्भवन्ति युगे युगे ।
दित्याः पुत्रद्वयं जज्ञे कश्यपादिति नः श्रुतम् ॥ ६४ ॥
हिरण्यकशिपुश्चैव हिरण्याक्षश्च वीर्य्यवान् ।
सिंहिकाचाभवत् कन्या विप्रचित्तेःपरिग्रहः ॥ ६५ ॥
सैंहिकेया इति ख्याता तस्याः पुत्रा महाबलाः ।
हिरण्यकशिपोः पुत्राश्चत्वारः प्रथितौजसः ॥ ६६ ॥
ह्रादश्च अनुह्रादश्च प्रह्लादश्चैव वीर्य्यवान् ।
संह्रादश्च चतुर्थोऽभूद्ध्रादपुत्रो ह्रदस्तथा ॥ ६७ ॥
ह्रदस्य पुत्रौ द्वौ वीरौ शिवः कालस्तथैव च ।
विरोचनस्तु प्राह्लादिर्बलिर्जज्ञे विरोचनात् ॥ ६८ ॥
बलेः पुत्रशतं त्वासीद्बाणज्येष्ठं तपोधनाः ।
धृतराष्ट्रश्च सूर्यश्चचन्द्रमाश्चन्द्रतापनः ॥ ६९ ॥
कुम्भनाभो गर्द्दभाक्षः कुक्षिरित्येवमादयः ।
बाणस्तेषामतिबलो ज्येष्ठः पशुपतेः प्रियः ॥ ७० ॥

पुरा कल्पे तु बाणेन प्रसाद्योमापतिं प्रभुम् ।
पार्श्वतो विहरिष्यामि इत्येवं याचितो वरः ॥ ७१ ॥
हिरण्याक्षसुताश्चैव विद्वांसश्च महाबलाः ।
उर्ज्जरः शकुनिश्चैव भूतसन्तापनस्तथा ॥ ७२ ॥
महानाभश्च विक्रान्तः कालनाभस्तथैव च ।
अभवन् दनुपुत्राश्च शतं तीव्रपराक्रमाः ॥ ७३ ॥
तपस्विनो महावीर्य्याः प्राधान्येन ब्रवीमि तान् ।
द्विमूर्द्धा शङ्कुकर्णश्च तथा हयशिरा विभुः ॥ ७४ ॥
अयोमुखः शम्बरश्च कपिलो वामनस्तथा ।
मारीचिर्मघवांश्चैव इल्वलः खसृमस्तथा ॥ ७५ ॥
विक्षोभणश्च केतुश्च केतुवीर्य्यशतह्रदौ ।
इन्द्रजित्सर्व्वजिच्चैव वज्रनाभस्तथैव च ॥ ७६ ॥
एकचक्रो महाबाहुस्तारकश्च महाबलः ।
वैश्वानरः पुलोमा च विद्रावणमहाशिराः ॥ ७७ ॥
स्वर्भानुर्वृषपर्व्वा च विप्रचित्तिश्च वीर्य्यवान् ।
सर्व्वे एते दनोः पुत्राः कश्यपादभिजज्ञिरे ॥ ७८ ॥
विप्रचित्तिप्रधानास्ते दानवाः सुमहाबलाः ।
एतेषां पुत्रपौत्रन्तु न तच्छक्यं द्विजोत्तमाः ॥ ७९ ॥
प्रसंख्यातुं बहुत्वाच्च पुत्रपौत्रमनन्तकम् ।
स्वर्भानोस्तु प्रभा कन्या पुलोम्नस्तु शची सुता ॥ ८० ॥
उपदानवी हयशिराः शर्मिष्ठा वार्षपर्व्वणी ।
पुलोमा कालिका चैव वैश्वानरसुते उभे ।
बह्वपत्ये महापत्ये मारीचेस्तु परिग्रहः ॥ ८१ ॥

तयोः पुत्रसहस्राणि षष्टिर्दानवनन्दनाः ।
चतुर्दशशतानन्यान् हिरण्यपुरवासिनः ।
मारीचिर्जनयामास महता तपसान्वितः ॥ ८२ ॥
पौलोमाः कालकेयाश्च दानवास्ते महाबलाः ।
अवध्या देवतानां हि हिरण्यपुरवासिनः ॥ ८३ ॥
पितामहप्रसादेन ये हताः सव्यसाचिना ।
ततोऽपरे महावीर्य्या दानवास्त्वतिदारुणाः ॥ ८४ ॥
सिंहिकायामथोत्पन्ना विप्रचित्तेः सुतास्तथा ।
दैत्यदानवसंयोगाज्जातास्तीव्रपराक्रमाः ॥ ८५ ॥
सैंहिकेया इति ख्यातास्त्रयोदश महाबलाः ।
वंशः शल्यश्च बलिनौ नलश्चैव तथा बलः ॥ ८६ ॥
वातापिर्नमुचिश्चैव इल्वलः खसृमस्तथा ।
अञ्जिको नरकश्चैव कालनाभस्तथैव च ॥ ८७ ॥
सरमाणस्तथा चैव स्वरकल्पश्च वीर्य्यवान् ८८ ॥
मुकश्चैव तुहुण्डश्च ह्रदपुत्रौ बभूवतुः ।
मारीचः सुन्दपुत्रश्च प्रस्तुतायां व्यजायत ॥ ८९ ॥ (१)
एते वै दानवाः श्रेष्ठा दनोर्वंशविवर्द्धनाः ।
तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च शतशोऽथ सहस्रशः ॥ ९० ॥
संह्रादस्य तु दैत्यस्य निवातकवचाः कुले ।
समुत्पन्नाः सुमहता तपसा भावितात्मनः ॥ ९१ ॥

---

१ क्वचिदयं न लक्ष्यते ।

त्रिकाः कोट्यः सुतास्तेषांमनिवत्यां निवासिनः
अवध्यास्तेऽपि देवानामर्ज्जुनेन निपातिताः ।
षट्सुताः सुमहाभागास्ताम्रायाः परिकीर्त्तिताः ॥ ६२ ॥
क्रौञ्ची श्येनी च भासी च सुग्रीवो शुचिगृध्रिका ।
क्रौञ्ची तु जनयामास उलूकप्रत्यलूककान् ॥ ६३ ॥
श्येनी श्येनांस्तथा भासी भासान्गृध्रांश्च गृध्र्यपि ।
शुचिरौदकान्पक्षिगणान्सुग्रीवी तु द्विजोत्तमाः ॥ ६४ ॥
अश्वानुष्ट्रान् गर्द्दभांश्च ताम्रावंशः प्रकीर्त्तितः ।
विनतायास्तु द्वौ पुत्रौ विख्यातौ गरुडारुणौ ॥ ६५ ॥
गरुडः पततां श्रेष्ठो दारुणः स्वेन कर्म्मणा ।
सुरसायाः सहस्रन्तु सर्पाणाममितौजसाम् ॥ ६६ ॥
अनेकशिरसां विप्राः खचराणां महात्मनाम् ।
काद्रवेयास्तु बलिनः सहस्रममितौजसः ॥ ६७ ॥
सुपर्णवशगा नागा जज्ञिरे नैकमस्तकाः ।
येषां प्रधानाः सततं शेषवासुकितक्षकाः ॥ ॥ ६८ ॥
ऐरावतो महापद्मः कम्बलाश्वतरावुभौ ।
एलापत्रश्च शङ्खश्च कर्कोटकधनञ्जयौ ॥ ६९ ॥
महानीलमहाकर्णौ धृतराष्ट्रबलाहकौ ।
कुहरः पुष्पदंष्ट्रश्च दुर्म्मुखः सुमुखस्तथा ॥ १०० ॥
शङ्खश्च शङ्खपालश्च कपिलो वामनस्तथा ।
नहुषः शङ्खरोमा च मणिरित्येवमादयः ॥ १०१ ॥

तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च शतशोऽथ सहस्रशः ।
चतुर्दशसहस्राणि क्रूराणामनिलाशिनाम् ॥ १०२ ॥
गणं क्रोधवशं विप्रास्तस्य सर्व्वे च दंष्ट्रिणः
स्थलजाः पक्षिणोऽजाश्च धरायाः प्रसवाः स्मृताः ॥ १०३ ॥
गास्तु वै जनयामास सुरभिमहिषीस्तथा ।
इरा वृक्षलता वल्लीस्तृनजातीश्च सर्व्वशः ॥ १०४ ॥
खसा तु यक्षरक्षांसि मुनिरप्सरसस्तथा ।
अरिष्टा तु महासिद्धा गंधर्व्वानमितौजसः ॥ १०५ ॥
एते कश्यपदायादाः कीर्त्तिताः स्थाणुजङ्गमाः ।
येषां पुत्राश्च पौत्राश्च शतशोऽथ सहस्रशः ॥ १०६ ॥
एष मन्वन्तरे विप्राः सर्गः स्वारोचिषे स्मृतः ।
वैवस्वतेऽतिमहति वारुणे वितते क्रतौ ॥ १०७ ॥
जुह्वानस्य ब्रह्मणो वै प्रजासर्ग इहोच्यते ।
पूर्व्वं यत्र समुत्पन्नान्ब्रह्मर्षीन्सप्त मानसान् ॥ १०८ ॥
पुत्रत्वे कल्पयामास स्वयमेव पितामहः ।
ततो विरोधे देवानां दानवानां च भो द्विजाः ॥ १०९ ॥
दितिर्विनष्टपुत्रा वै तोषयामास कश्यपम् ।
कश्यपस्तु प्रसन्नात्मा सम्यगाराधितस्तया ॥ ११० ॥
वरेण छन्दयामास सा च वव्रे वरं तदा ।
पुत्रमिन्द्रवधार्थाय समर्थममितौजसम् ॥ १११ ॥
स च तस्मै वरं प्रादात् प्रार्थितः सुमहातपाः ।
दत्वा च वरमत्युग्रो मारीचः समभाषत ॥ ११२ ॥

इन्द्रं पुत्रो निहन्ता ते गर्भं वै शरदां शतम् ।
यदि धारयसे शौचतत्परा व्रतमास्थिता ॥ ११३ ॥
तथेत्यभिहितो भर्त्ता तया देव्या महातपाः ।
धारयामास गर्भं तु शुचिः सा मुनिसत्तमाः ॥ ११४ ॥
ततोऽभ्युपागमद्दित्यां गर्भमाधाय कश्यपः ।
रोधयन् वै गणं श्रेष्ठं देवानाममितौजसम् ॥ ११५ ॥
तेजः संहृत्य दुर्धर्षमवध्यममरैरपि ।
जगाम पर्व्वतायैव तपसे संशितव्रता ॥ ११६ ॥
तस्याश्चैवान्तरप्रेप्सुरभवत् पाकशासनः ।
जाते वर्षशते चास्या ददर्शान्तरमच्युतः ॥ ११७ ॥
अकृत्वा पादयोः शौचं दितिः शयनमाविशत् ।
निद्रां चाहारयामास तस्यां कुक्षिं प्रविश्य सः ॥ ११८ ॥
वज्रपाणिस्ततो गर्भं सप्तधा तं न्यकृन्तयत् ।
स पाट्यमानो गर्भोऽथ वज्रेण प्ररुरोद ह ॥ ११९ ॥
मा रोदीरिति तं शक्रः पुनःपुनरथाब्रवीत् ।
सोऽभवत् सप्तधा गर्भस्तमिन्द्रो रुषितः पुनः ॥ १२० ॥
एकैकं सप्तधा चक्रे वज्रेणैवारिकर्षणः ।
मरुतो नाम ते देवा बभूवु द्विजसत्तमाः ॥ १२१ ॥
यथोक्तं वै मघवता तथैव मरुतोऽभवन् ।
देवाश्चैकोनपञ्चाशत्सहाया वज्रपाणिनः ॥ १२२ ॥
तेषामेवं प्रवृत्तानां भूतानां द्विजसत्तमाः ।
रोचयन् वै गणश्रेष्ठान् देवानाममितौजसाम् ॥ १२३ ॥

निकायेषु निकायेषु हरिः प्रादात् प्रजापतीन्।
क्रमशस्तानि राज्यानि पृथुपूर्व्वाणि भो द्विजाः ॥ १२४ ॥
स हरिः पुरुषो वीरः कृष्णो जिष्णुः प्रजापतिः
पर्जन्यस्तपनोऽनन्तस्तस्य सर्व्वमिदं जगत् ॥ १२५ ॥
भूतसर्गमिमं सम्यग्जानतो द्विजसत्तमाः।
नावृत्तिभयमस्तीह परलोकभयं कुतः ॥ १२६ ॥
इति श्रीब्राह्मे महापुराणे देवसुराणामुत्-
पत्तिकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थोऽध्यायः।

पृथुमारभ्य सर्वदेवदानवादीनां राज्याभिषेक वर्णनम्

लोमहर्षण उवाच।

अभिषिच्याधिराजेन्द्रं पृथुं वैन्यं पितामहः।
ततः क्रमेण राज्यानि व्यादेष्टुमुपचक्रमे ॥ १ ॥
द्विजानां वीरुधां चैव नक्षत्रग्रहयोस्तथा।
यज्ञानां तपसां चैव सोमं राज्येऽभ्यषेचयत् ॥ २ ॥
अपां तु वरुणंराज्ये राज्ञां वैश्रवणं पतिम्।
आदित्यानां तथा विष्णुं वसूनामथ पावकम् ॥ ३ ॥

प्रजापतीनां दक्षं तु मरुतामथ वासवम् ।
दैत्यानां दानवानां वै प्रह्लादममितौजसम् ॥ ४ ॥
वैवस्वतं पितृणाञ्च यमं राज्येऽभ्यषेचयत् ।
यक्षाणां राक्षसाणाञ्च पार्थिवाणां तथैव च ॥ ५ ॥
सर्व्वभूतपिशाचानां गिरीशं शूलपाणिनम् ।
शैलानां हिमवन्तञ्च नदीनामथ सागरम् ॥ ६ ॥
गंधर्व्वाणामधिपतिं चक्रे चित्ररथं प्रभुम् ।
नागानां वासुकिं चक्रे सर्पाणामथ तक्षकम् ॥ ७ ॥
वारणानां तु राजानमैरावतमथादिशत् ।
उच्चैःश्रवसमश्वानां गरुडञ्चैव पक्षिणाम् ॥ ८ ॥
मृगाणामथ शार्द्दूलं गोवृषन्तु गवां पतिम् ।
वनस्पतीनां राजानं प्लक्षमेवाभ्यषेचयत् ॥ ९ ॥
एवं विभाज्य राज्यानि क्रमेणैव पितामहः ।
दिशां पालानथ ततः स्थापयामास स प्रभुः ॥ १० ॥
पूर्व्वस्यां दिशि पुत्रं तु वैराजस्य प्रजापतेः ।
दिशः पालं सुधन्वानं राजानं सोऽभ्यषेचयत् ॥ ११ ॥
दक्षिणस्यां दिशि तथा कर्द्दमस्य प्रजापतेः ।
पुत्रं शङ्खपदं नाम राजानं सोऽभ्यषेचयत् ॥ १२ ॥
पश्चिमस्यां दिशि तथा रजसः पुत्रमच्युतम् ।
केतुमन्तं महात्मानं राजानं सोऽभ्यषेचयत् ॥ १३ ॥
तथा हिरण्यरोमाणं पर्ज्जन्यस्य प्रजापतेः ।
उदीच्यां दिशि दुर्द्धर्षं राजानं सोऽभ्यषेचयत् ॥ १४ ॥

तैरियं पृथिवी सर्व्वा सप्तद्वीपा सपत्तना ।
यथाप्रदेशमद्यापि धर्म्मेण प्रतिपाल्यते ॥ १५ ॥
राजसूयाभिषिक्तस्तु पृथुरेतैर्नराधिपैः ।
वेददृष्टेन विधिना राजा राज्ये नराधिपः ॥ १६ ॥
ततो मन्वन्तरेऽतीते चाक्षुषेऽमिततेजसि ।
वैवस्वताय मनवे पृथिव्यां राज्यमादिशत् ॥ १७ ॥
तस्य विस्तरमाख्यास्ये मनोर्वैवस्वतस्य ह ।
भवतां चानुकूल्याय यदि श्रोतुमिहेच्छथ ।
महदेतदधिष्ठानं पुराणे तदधिष्ठितम् ॥ १८ ॥

मुनय ऊचुः ।

विस्तरेण पृथोर्जन्म लोमहर्षण कीर्त्तय ।
यथा महात्मना तेन दुग्धा वेयं वसुन्धरा ॥ १९ ॥
यथा वापि नृभिर्दुग्धा यथा देवैर्महर्षिभिः ।
यथा दैत्यैश्च नागैश्च यथा यक्षैर्यथा द्रुमैः ॥ २० ॥
यथा शैलैः पिशाचैश्च गंधर्व्वैश्च द्विजोत्तमैः ।
राक्षसैश्च महासत्त्वैर्यथा दुग्धा वसुन्धरा ॥ २१ ॥
तेषां पात्रविशेषांश्च वक्तुमर्हसि सुव्रत ।
वत्सक्षीरविशेषांश्च दोग्धारं चानुपूर्व्वशः ॥ २२ ॥
यस्माच्च कारणात् पाणिर्वेनस्य मथितः पुरा ।
क्रुद्धैर्महर्षिभिस्तात कारणं तच्च कीर्त्तय ॥ २३ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

शृणुध्वं कीर्त्तयिष्यामि पृथोर्वैन्यस्य विस्तरम् ।
एकाग्राः प्रयताश्चैव पुण्यार्था वै द्विजर्षभाः ॥ २४ ॥

नाशुचेः क्षुद्रमनसो नाशिष्यस्याव्रतस्य च ।
कीर्त्तयेयमिदं विप्राः कृतघ्नायाहिताय च ॥ २५ ॥
स्वर्ग्यं यशस्यमायुष्यं धन्यं वेदैश्च सम्मितम् ।
रहस्यमृषिभिः प्रोक्तं शृणुध्वं वै यथातथम् ॥ २६ ॥
यश्चेमं कीर्त्तयेन्नित्यं पृथोर्वैन्यस्य विस्तरम् ।
ब्राह्मणेभ्यो नमस्कृत्य न स शोचेत् कृताकृतम् ॥ २७ ॥
आसीद्धर्मस्य संगोप्ता पूर्वमत्रिसमः प्रभुः ।
अत्रिवंशे समुत्पन्नस्तङ्गो नाम प्रजापतिः ॥ २८ ॥
तस्य पुत्रोऽभवद्वेनो नात्यर्थं धर्म्मकोविदः ।
जातो मृत्युसुतायां वै सुनीथायां प्रजापतिः ॥ २९ ॥
स मातामहदोषेण तेन कालात्मजात्मजः ।
स्वधर्मं पृष्ठतः कृत्वा कामलोभेष्ववर्त्तत ॥ ३० ॥
मर्य्यादां भेदयामास धर्म्मोपेतां स पार्थिवः
वेदधर्म्मानतिक्रम्य सोऽधर्म्मनिरतोऽभवत् ॥ ३१ ॥
निःस्वाध्यायवषट्काराः प्रजास्तस्मिन् प्रजापतौ ।
प्रवृत्तं न पपुः सोमं हुतं यज्ञेषु देवताः ॥ ३२ ॥
न यष्टव्यं न होतव्यमिति तस्य प्रजापतेः ।
आसीत् प्रतिज्ञा क्रूरेयं विनाशे प्रत्युपस्थिते ॥ ३३ ॥
अहमिज्यश्च यष्टा च यज्ञश्चेति भृगूद्वह ।
मयि यज्ञो विधातव्यो मयि होतव्यमित्यपि ॥ ३४ ॥
तमतिक्रान्तमर्य्यादमाददानमसाम्प्रतम् ।
ऊचुर्महर्षयः सर्व्वे मरीचिप्रमुखास्तदा ॥ ३५ ॥

वयं दीक्षां प्रवेक्ष्यामः संवत्सरगणान् बहून् ।
अधर्म्मं कुरु मा वेन एष धर्म्मः सनातनः ॥ ३६ ॥
निधनेऽत्रेः प्रसूतस्त्वं प्रजापतिरसंशयम् ।
प्रजाश्च पालयिष्येऽहमितीह समयः कृतः ॥ ३७ ॥
तांस्तथा ब्रुवतः सर्व्वान्महर्षीनब्रवीत्तदा ।
वेनः प्रहस्य दुर्ब्बुद्धिरिममर्थमनर्थवित् ॥ ३८ ॥

वेन उवाच ।

स्रष्टा धर्म्मस्य कश्चान्यः श्रोतव्यं कस्य वा मया ।
श्रुतवीर्य्यतपःसत्यै मया वा कः समो भुवि ॥ ३९ ॥
प्रभवं सर्व्वभूतानां धर्म्माणां च विशेषतः ।
सम्मूढा न विदुर्नूनं भवन्तो मां विचेतसः ॥ ४० ॥
इच्छन् दहेयं पृथिवीं प्लावयेयं जलैस्तथा ।
द्यां वै भुवं च रुन्धेयं नात्र कार्य्या विचारणा ॥ ४१ ॥
यदा न शक्यते मोहादवलेपाच्च पार्थिवः ।
अपनेतुं तदा वेनस्ततः क्रुद्धा महर्षयः ॥ ४२ ॥
तं निगृह्य महात्मानो विस्फुरन्तं महाबलम् ।
ततोऽस्य सव्यमूरुं ते ममन्थुर्जातमन्यवः ॥ ४३ ॥
तस्मिन्निर्मथ्यमाने वै राज्ञ ऊरौ तु जज्ञिवान् ।
ह्रस्वोऽतिमात्रः पुरुषः कृष्णश्चेति बभूव ह ॥ ४४ ॥
स भीतः प्राञ्जलिर्भूत्वा तस्थिवान् द्विजसत्तमाः ।
तमत्रिर्विह्वलं दृष्ट्वा निषीदेत्यब्रवीत्तदा ॥ ४५ ॥

निषादवंशकर्त्तासौ बभूव वदतांवराः ।
धीवरानसृजच्चापि वेनकल्मषसम्भवान् ॥ ४६ ॥
ये चान्ये विंध्यनिलयास्तथा पर्व्वतसंश्रयाः ।
अधर्म्मरुचयो विप्रास्ते ते वै वेनकल्मषाः ॥ ४७ ॥
ततः पुनर्महात्मानः पाणिं वेनस्य दक्षिणम् ।
अरणीमिव संरब्धा ममन्थुर्जातमन्यवः ॥ ४८ ॥
पृथुस्तस्मात् समुत्पन्नः कराउज्वलनसन्निभः ।
दीप्यमानः स्ववपुषा साक्षादग्निरिव ज्वलन् ॥ ४६ ॥
अथ सोऽजगवं नाम धनुर्गृह्य महारवम् ।
शरांश्च दिव्यान् रक्षार्थं कवचं च महाप्रभम् ॥ ५० ॥
तस्मिन् जातेऽथ भूतानि सम्प्रहृष्टानि सर्व्वशः ।
समापेतुर्महाभागा वेनस्तु त्रिदिवं ययौ ॥ ५१ ॥
समुत्पन्नेन भो विप्राः सत्पुत्रेण महात्मना ।
त्रातः स पुरुषव्याघ्रः पुन्नाम्नो नरकात्तदा ॥ ५२ ॥
तं समुद्राश्च नद्यश्च रत्नान्यादाय सर्व्वशः ।
तोयानि चाभिषेकार्थं सर्व्व एवोपतस्थिरे ॥ ५३ ॥
पितामहश्च भगवान् देवैराङ्गिरसैः सह ।
स्थावराणि च भूतानि जङ्गमानि च सर्व्वशः ॥ ५४ ॥
समागम्य तदा वैन्यमभ्यषिञ्चन्नराधिपम् ।
महता राजराजेन प्रजास्तेनानुरञ्जिताः ॥ ५५ ॥
सोऽभिषिक्तो महातेजा विधिवद्धर्म्मकोविदैः
आधिराज्ये तदा राज्ञां पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् ॥ ५६ ॥

पित्रापरञ्जितास्तस्य प्रजास्तेनानुरञ्जिताः ।
अनुरागात्ततस्तस्य नाम राजाभ्यजायत ॥ ५७ ॥
आपस्तस्तम्भिरे तस्य समुद्रमभियास्यतः ।
पर्व्वताश्च ददुर्म्मार्गं ध्वजभङ्गश्च नाभवत् ॥ ५८ ॥
अकृष्टपच्या पृथिवी सिध्यन्त्यन्नानि चिन्तनात् ।
सर्व्वकामदुघा गावः पुटके पुटकेमधु ॥ ५६ ॥
एतस्मिन्नेव काले तु यज्ञे पैतामहे शुभे ।
सूतः सूत्यां समुत्पन्नः सौत्येऽहनि महामतिः ॥ ६० ॥
तस्मिन्नेव महायज्ञे यज्ञे प्राज्ञोऽथ मागधः ।
पृथोः स्तवार्थं तौ तत्र समाहूतौ महर्षिभिः ॥ ६१ ॥
तावूचुर्ऋषयः सर्व्वे स्तूयतामेष पार्थिवः ।
कर्म्मैतदनुरूपं वां पात्रं चायं नराधिपः ॥ ६२ ॥
तावूचतुस्तदा सर्व्वांस्तानृषीन् सूतमागधौ ।
आवां देवानृषींश्चैव प्रीणयावः स्वकर्म्मभिः ॥ ६३ ॥
न चास्य विद्मो वै कर्म्म नाम वा लक्षणं यशः ।
स्तोत्रं येनास्य कुर्य्याव राज्ञस्तेजस्विनो द्विजाः ॥ ६४ ॥
ऋषिभिस्तौ नियुक्तौ तु भविष्यैः स्तूयतामिति
यानि कर्म्माणि कृतवान् पृथुः पश्चान्महाबलः ॥ ६५ ॥
ततः प्रभृति वै लोके स्तवेषु मुनिसत्तमाः ।
आशीर्वादाः प्रयुज्यन्ते सूतमागधबन्दिभिः ॥ ६६
तयो स्तवान्ते सुप्रीतः पृथुः प्रादात्प्रजेश्वरः
अनूपदेशं सूताय मगधं मागधाय च ॥ ६७ ॥

तं दृष्ट्वा परमप्रीताः प्रजाः प्रोचुर्मनीषिणः ।
वृत्तीनामेष वो दाता भविष्यति नराधिपः ॥ ६८ ॥
ततो वैन्यं महात्मानं प्रजाः समभिदुद्रुवुः ।
त्वं नो वृत्तिं विधत्स्वेति महर्षिवचनात्तदा ॥ ६९ ॥
सोऽभिद्रुतः प्रजाभिस्तु प्रजाहितचिकीर्षया ।
धनुर्गृह्य पृषत्कांश्च पृथिवीमाद्रवद्बली ॥ ७० ॥
ततो वैन्यभयत्रस्ता गौर्भूत्वा प्राद्रवन्मही ।
तां पृथुर्धनुरादाय द्रवन्तीमन्वधावत ॥ ७१ ॥
सा लोकान् ब्रह्मलोकादीन् गत्वा वैन्यभयात्तदा
प्रददर्शाग्रतो वैन्यं प्रगृहीतशरासनम् ॥ ७२ ॥
ज्वलद्भिर्निशितैर्बाणैर्दीप्ततेजसमन्ततः ।
महायोगं महात्मानं दुर्द्धर्षममरैरपि ॥ ७३ ॥
अलभन्ती तु सा त्राणं वैन्यमेवान्वपद्यत ।
कृताञ्जलिपुटा भूत्वा पूज्या लोकैस्त्रिभिस्तदा ॥ ७४ ॥
उवाच वैन्यं नाधर्म्मं स्त्रीवधे परिपश्यसि ।
कथं धारयिता चासि प्रजा राजन् विना मया ॥ ७५ ॥
मयि लोकाः स्थिता राजन्मयेदं धार्य्यते जगत् ।
मद्विनाशे विनश्येयुः प्रजाः पार्थिव विद्धि तत् ॥ ७६ ॥
न मामर्हसि हन्तुं वै श्रेयश्चेत्त्वं चिकीर्षसि ।
प्रजानां पृथिवीपाल शृणु चेदं वचो मम ॥ ७७ ॥
उपायतः समारब्धा सर्व्वे सिध्यन्त्युपक्रमाः ।
उपायं पश्य येन त्वं धारयेथाः प्रजामिमाम् ॥ ७८ ॥

हत्वापि मां न शक्तस्त्वं प्रजानां पोषणे नृप ।
अनुकूला भविष्यामि यच्छ कोपं महामते ॥ ७९ ॥
अवध्यां च स्त्रियं प्राहुस्तिर्य्यग्योनिगतेष्वपि ।
यद्येवं पृथिवीपाल न धर्म्मं त्यक्तुमर्हसि ॥ ८० ॥
एवं बहुविधं वाक्यं श्रुत्वा राजा महामनाः ।
कोपं निगृह्य धर्म्मात्मा वसुधामिदमब्रवीत् ॥ ८१ ॥

पृथुरुवाच ।

एकस्यार्थे तु यो हन्यादात्मनो वा परस्य वा ।
बहून् वा प्राणिनोऽनन्तं भवेत्तस्येह पातकम् ॥ ८२ ॥
सुखमेधन्ति बहवो यस्मिंस्तु निहतेऽशुभे ।
तस्मिन् हते नास्ति भद्रे पातकं चोपपातकम् ॥ ८३ ॥
सोऽहं प्रजानिमित्तं त्वां हनिष्यामि वसुन्धरे
यदि मे वचनान्नाद्य करिष्यसि जगद्धितम् ॥ ८४ ॥
त्वां निहत्याद्य बाणेन मच्छासनपराङ्मुखीम् ।
आत्मानं प्रथयित्वाहं प्रजा धारयिता स्वयम् ॥ ८५ ॥
सा त्वं शासनमास्थाय मम धर्म्मभृतां वरे ।
सञ्जीवय प्रजाः सर्व्वाः समर्था ह्यसि धारणे ॥ ८६ ॥
दुहितृत्वं च मे गच्छ तत एनमहं शरम् ।
नियच्छेयं त्वद्वधार्थमुद्यन्तं घोरदर्शनम् ॥ ८७ ॥

वसुधोवाच ।

सर्व्वमेतदहं वीर विधास्यामि न संशयः ।
वत्सं तु मम सम्पश्य क्षरेयं येन वत्सला ॥ ८८ ॥

समाश्रु कुरु सर्व्वत्र मां त्वं धर्म्मभृतां वर ।
तथा विस्यन्दमानं मे क्षीरं सर्व्वत्र भावयेत् ॥ ८६ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

तत उत्सारयामास शैलान् शतसहस्रशः ।
धनुष्कोट्या तदा वैन्यस्तेन शैला विवर्द्धिताः ॥ ९० ॥
न हि पूर्व्वविसर्गे वै विषमे पृथिवीतले ।
संविभागः पुराणां वा ग्रामाणां वाभवत्तदा ॥ ९१ ॥
न शस्यानि न गोरक्ष्यं न कृषिर्न वणिक्पथः ।
नैव सत्यानृतं चासीन्न लोभो न च मत्सरः ॥ ९२ ॥
वैवस्वतेऽन्तरे तस्मिन् साम्प्रतं समुपस्थिते ।
वैन्यात्प्रभृति वै विप्राः सर्व्वस्यैतस्य सम्भवः ॥ ९३ ॥
यत्र यत्र समं त्वस्या भूमेरासीत्तदा द्विजाः ।
तत्र तत्र प्रजाः सर्व्वा निवासं समरोचयन् ॥ ९४ ॥
आहारः फलमूलानि प्रजानामभवत्तदा ।
कृच्छ्रेण महता युक्त इत्येवमनुशुश्रुम ॥ ९५ ॥
स कल्पयित्वा वत्सं तु मनुं स्वायम्भुवं प्रभुम् ।
स्वपाणौ पुरुषव्याघ्रो दुदोह पृथिवीं ततः ॥ ९६ ॥
शस्यजातानि सर्व्वाणि पृथुर्व्वैन्यः प्रतापवान् ।
तेनान्नेन प्रजाः सर्व्वा वर्त्तन्तेऽद्यापि सर्व्वशः ॥ ९७ ॥
ऋषयश्च तदा देवाः पितरोऽथ सरीसृपाः ।
दैत्या यक्षाः पुण्यजना गन्धर्व्वाः पर्व्वता नगाः ॥ ९८ ॥

एते पुरा द्विजश्रेष्ठा दुदुहुर्धरणीं किल ।
क्षीरं वत्सञ्च पात्रं च तेषां दोग्धा पृथक्पृथक् ॥ ९९ ॥
ऋषीणामभवत्सोमो वत्सो दोग्धा बृहस्पतिः ।
क्षीरं तेषां तपो ब्रह्म पात्रं छन्दांसि भो द्विजाः ॥ १००
देवानां काञ्चनं पात्रं वत्सस्तेषां शतक्रतुः ।
क्षीरमोजस्करं चैव दोग्धा च भगवान्रविः ॥ १०१ ॥
पितॄणां राजतं पात्रं यमो वत्सः प्रतापवान् ।
अन्तकश्चाभवद्दोग्धा क्षीरं तेषां सुधा स्मृता ॥ १०२ ॥
नागानां तक्षको वत्सः पात्रं चालाबुसंज्ञकम् ।
दोग्धा त्वैरावतो नागस्तेषां क्षीरं विषं स्मृतम् ॥ १०३ ॥
असुराणां मधुर्दोग्धा क्षीरं मायामयं स्मृतम् ।
विरोचनस्तु वत्सोऽभूदायसं पात्रमेव च ॥ १०४ ॥
यक्षाणामामपात्रं तु वत्सो वैश्रवणः प्रभुः ।
दोग्धा रजतनाभस्तु क्षीरान्तर्धानमेव च ॥ १०५ ॥
सुमाली राक्षसेन्द्राणांवत्सं क्षीरञ्च शोणितम् ।
दोग्धा रजतनाभस्तु कपालं पात्रमेव च ॥ १०६ ॥
गन्धर्वाणां चित्ररथो वत्सः पात्रं च पङ्कजम् ।
दोग्धा च सुरुचिः क्षीरं तेषां गन्धः शुचिः स्मृतः ॥ १०७ ॥
शैलं पात्रं पर्वतानां क्षीरं रत्नौषधीस्तथा ।
वत्सस्तु हिमवानासीद्दोग्धा मेरुर्महागिरिः ॥ १०८ ॥
प्लक्षो वत्सस्तु वृक्षाणां दोग्धा शालस्तु पुष्पितः ।
पालाशपात्रं क्षीरञ्च छिन्नदग्धप्ररोहणम् ॥ १०९ ॥

सेयं धात्री विधात्री च पावनी च वसुन्धरा ।
चराचरस्य सर्व्वस्य प्रतिष्ठा योनिरेव च ॥ ११० ॥
सर्व्वकामदुधा दोग्ध्री सर्व्वशस्यप्ररोहणी ।
आसीदियं समुद्रान्ता मेदिनी परिविश्रुता ॥ १११ ॥
मधुकैटभयोः कृत्स्ना मेदसा समभिप्लुता ।
तेनेयं मेदिनी देवी उच्यते ब्रह्मवादिभिः ॥ ११२ ॥
ततोऽभ्युपगमाद्राज्ञः पृथोर्वैन्यस्य भो द्विजाः ।
दुहितृत्वमनुप्राप्ता देवी पृथ्वीति चोच्यते ॥ ११३ ॥
पृथुना प्रविभक्ता च शोधिता च वसुन्धरा ।
शस्याकरवती स्फीता पुरपत्तनशालिनी ॥ ११४ ॥
एवम्प्रभावो वैन्यः स राजासीद्राजसत्तमः ।
नमस्यश्चैव पूज्यश्च भूतग्रामैर्न संशयः ॥ ११५ ॥
ब्राह्मणैश्च महाभागैर्वेदवेदाङ्गपारगैः ।
पृथुरेव नमस्कार्य्यो ब्रह्मयोनिः सनातनः ॥ ११६ ॥
पार्थिवैश्च महाभागैः पार्थिवत्वमिहेच्छुभिः ।
आदिराजो नमस्कार्य्यः पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् ॥ ११७ ॥
योधैरपि च विक्रान्तैः प्राप्तुकामैर्जयं युधि ।
आदिराजो नमस्कार्य्यो योधानां प्रथमो नृपः ॥ ११८ ॥
यो हि योद्धा रणं याति कीर्त्तयित्वा पृथुं नृपम् ।
स घोररूपात्संग्रामात्क्षेमी भवति कीर्त्तिमान् ॥ ११९ ॥
वैश्यैरपि च वित्ताढ्यैर्वैश्यवृत्तिविधायिभिः ।
पृथुरेव नमस्कार्य्यो वृत्तिदाता महायशाः ॥ १२० ॥

तथैव शूद्रैः शुचिभिस्त्रिवर्णपरिचारिभिः ।
पृथुरेव नमस्कार्य्यः श्रेयः परमिहेप्सुभिः ॥ १२१ ॥
एते वत्सविशेषाश्च दोग्धारः क्षीरमेव च ।
पात्राणि च मयोक्तानि किं भूयो वर्णयामि वः ॥ १२२ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे पृथोर्जन्ममाहात्म्यकथनं
नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पञ्चमोऽध्यायः

मन्वन्तर वर्णनम्

ऋषय ऊचुः ।

मन्वन्तराणि सर्व्वाणि विस्तरेण महामते ।
तेषां पूर्व्वविसृष्टिं च लोमहर्षण कीर्त्तय ॥ १ ॥
यावन्तो मनवश्चैव यावन्तं कालमेव च ।
मन्वन्तराणि भो सूत श्रोतुमिच्छाम तत्वतः ॥ २ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

न शक्यो विस्तरो विप्रा वक्तुं वर्षशतैरपि ।
मन्वन्तराणां सर्व्वेषां संक्षेपाच्छृणुत द्विजाः ॥ ३ ॥
स्वायम्भुवो मनुः पूर्व्वं मनुः स्वारोचिषस्तथा ।
उत्तमस्तामसश्चैव रैवतश्चाक्षुषस्तथा ॥ ४ ॥

वैवस्वतश्च भो विप्राः साम्प्रतं मनुरुच्यते ।
सावर्णिश्च मनुस्तद्वद्रैभ्यो रौच्यस्तथैव च ॥ ५ ॥
तथैव मेरुसावर्ण्यश्चत्वारो मनवः स्मृताः ।
अतीता वर्त्तमानाश्च तथैवानागता द्विजाः ॥ ६ ॥
कीर्त्तिता मनवस्तुभ्यं मयैवैते यथाश्रुताः ।
ऋषींस्त्वेषां प्रवक्ष्यामि पुत्रान्देवगणांस्तथा ॥ ७ ॥
मरीचिरत्रिर्भगवानङ्गिराः पुलहः क्रतुः ।
पुलस्त्यश्च वशिष्ठश्च सप्तैते ब्रह्मणः सुताः ॥ ८ ॥
उत्तरस्यां दिशि तथा द्विजाः सप्तर्षयस्तथा ।
आग्निध्रश्चाग्निबाहुश्च मेध्यो मेधातिथिर्वसुः ॥ ९ ॥
ज्योतिष्मान्द्युतिमान्हव्यः सबलः पुत्रसंज्ञकः ।
मनोः स्वायंभुवस्यैते दश पुत्रा महौजसः ॥ १० ॥
एतद्वै प्रथमं विप्रा मन्वन्तरमुदाहृतम् ।
उर्व्वो वसिष्ठपुत्रश्च स्तम्बः कश्यप एव च ॥ ११ ॥
प्राणो बृहस्पतिश्चैव दत्तोऽत्रिश्च्यवनस्तथा ।
एते महर्षयो विप्रा वायुप्रोक्ता महाव्रताः ॥ १२ ॥
देवाश्च तुषिता नाम स्मृताः स्वारोचिषेऽन्तरे ।
हविघ्नः सुकृतिर्ज्योतिरापोमूर्त्तिरपि स्मृतः ॥ १३ ॥
प्रतीतश्च नभस्यश्च नभ ऊर्जस्तथैव च ।
स्वारोचिषस्य पुत्रास्ते मनोर्विप्रा महात्मनः ॥ १४ ॥
कीर्त्तिताः पृथिवीपाला महावीर्य्यपराक्रमाः ।
द्वितीयमेतत्कथितं विप्रा मन्वन्तरं मया ॥ १५ ॥

इदं तृतीयं वक्ष्यामि तद्बुध्यध्वं द्विजोत्तमाः ।
वसिष्ठपुत्राः सप्तासन् वासिष्ठा इति विश्रुताः ॥ १६ ॥
हिरण्यगर्भस्य सुता ऊर्जा जाताः सुतेजसः ।
ऋषयोऽत्र मया प्रोक्ताः कीर्त्यमानान्निबोधत ॥ १७ ॥
उत्तमेयान्मुनिश्रेष्ठा दश पुत्रान्मनोरिमान् ।
इष ऊर्जस्तनूर्जस्तु मधुर्माधव एव च ॥ १८ ॥
शुचिः शुक्रः सहश्चैव नभस्यो नभ एव च ।
भानवस्तत्र देवाश्च मन्वन्तरमुदाहृतम् ॥ १९ ॥
मन्वन्तरं चतुर्थं वः कथयिष्यामि साम्प्रतम् ।
काव्यः पृथुस्तथैवाग्निर्जह्नुर्धाता द्विजोत्तमाः ॥ २० ॥
कपीवानकपीवांश्च तत्र सप्तर्षयो द्विजाः ।
पुराणे कीर्त्तिताविप्राःपुत्राःपौत्राश्चभोद्विजाः ॥ २१ ॥
तथा देवगणाश्चैव तामसस्यान्तरे मनोः ।
द्युतिस्तपस्यः सुतपास्तपोभूतः सनातनः ॥ २२ ॥
तपोरतिरकल्माषस्तन्वी धन्वी परन्तपः ।
तामसस्य मनोरेते दश पुत्राः प्रकीर्त्तिताः ॥ २३ ॥
वायुप्रोक्ता मुनिश्रेष्ठाश्चतुर्थं चैतदन्तरम् ।
देवबाहुर्यदुध्रश्च मुनिर्वेदशिरास्तथा ॥ २४ ॥
हिरण्यरोमा पर्ज्जन्य ऊर्द्ध्वबाहुश्च सोमजः ।
सत्यनेत्रस्तथात्रेय एते सप्तर्षयोऽपरे ॥ २५ ॥
देवाश्चाभूतरजसस्तथा प्रकृतयः स्मृताः ।
पारिप्लवश्च रैभ्यश्च मनोरन्तरमुच्यते ॥ २६ ॥

अथ पुत्रानिमांस्तस्य बुध्यध्वं गदतो मम।
धृतिमानव्ययो युक्तस्तत्त्वदर्शी निरुत्सुकः ॥ २७ ॥
आरण्यश्च प्रकाशश्च निर्मोहः सत्यवाक्कृती।
रैवतस्य मनोः पुत्राः पञ्चमं चैतदन्तरम् ॥ २८ ॥
षष्ठं तु सम्प्रवक्ष्यामि तद्बुध्यध्वं द्विजोत्तमाः।
भृगुर्नभो विवस्वांश्च सुधामा विरजास्तथा ॥ २९ ॥
अतिनामा सहिष्णुश्च सप्तैते च महर्षयः।
चाक्षुषस्यान्तरे विप्रा मनोर्देवास्त्विमे स्मृताः ॥ ३० ॥
अप्रसूताश्च ऋषयः * पृथक्त्वेन दिवौकसः।
लेखाश्च नामतो विप्राः पञ्च देवगणाः स्मृताः ॥ ३१ ॥
ऋषेरङ्गिरसः पुत्रा महात्मानो महौजसः।
नाड्वलेया मुनिश्रेष्ठा दश पुत्रास्तु विश्रुताः ॥ ३२ ॥
रुरुप्रभृतयो विप्राश्चाक्षुषस्यान्तरे मनोः।
षष्ठं मन्वन्तरं प्रोक्तं सप्तमं तु निबोधत ॥ ३३ ॥
अत्रिर्वसिष्ठो भगवान् कश्यपश्च महानृषिः।
गौतमोऽथ भरद्वाजो विश्वामित्रस्तथैव च ॥ ३४ ॥
तथैव पुत्रो भगवानृचीकस्य महात्मनः।
सप्तमो जमदग्निश्च ऋषयः साम्प्रतं दिवि ॥ ३५ ॥
साध्या रुद्राश्च विश्वे च वसवो मरुतस्तथा।
आदित्याश्चाश्विनौ चापि देवौ वैवस्वतौ स्मृतौ ॥ ३६ ॥

---

* "आबाल प्रथिता ह्येते वै" क्वचिदेवं पाठः।

मनोर्व्वैवस्वतस्यैते वर्त्तन्ते साम्प्रतेऽन्तरे ।
इक्ष्वाकुप्रमुखाश्चैव दश पुत्रा महात्मनः ॥ ३७ ॥
एतेषां कीर्त्तितानान्तु महर्षीणां महौजसाम् ।
तेषांपुत्राश्च पौत्राश्च दिक्षु सर्व्वासु भो द्विजाः ॥ ३८ ॥
मन्वन्तरेषु सर्व्वेषु प्रागासन् सप्त सप्तकाः ।
लोके धर्म्मव्यवस्थार्थं लोकसंरक्षणाय च ॥ ३९ ॥
मन्वन्तरे व्यतिक्रान्ते चत्वारः सप्तका गणाः ।
कृत्वा कर्म्म दिवं यान्ति ब्रह्मलोकमनामयम् ॥ ४० ॥
ततोऽन्ये तपसां युक्ताः स्थानं तत्पूरयन्त्युत ।
अतीता वर्त्तमानाश्च क्रमेणैतेन भो द्विजाः ॥ ४१ ॥
अनागताश्च सप्तैते स्मृता दिवि महर्षयः ।
मनोरन्तरमासाद्य सावर्णस्येह भो द्विजाः ॥ ४२ ॥
रामो व्यासस्तथात्रेयो दीप्तिमन्तो बहुश्रुताः ।
भारद्वाजस्तथा द्रौणिरश्वथामा महाद्युतिः ॥ ४३ ॥
गौतमश्चाजरश्चैव शरद्वान्नाम गौतमः ।
कौशिको गालवश्चैव और्व्व काश्यप एव च ॥ ४४ ॥
एते सप्त महात्मानो भविष्या मुनिसत्तमाः ।
वेरी चैवाध्वरीवांश्च शमनो धृतिमान् वसुः ॥ ४५ ॥
अरिष्टश्चाप्यधृष्टश्च वाजी सुमतिरेव च ।
सावर्णस्य मनोः पुत्रा भविष्या मुनिसत्तमाः ॥ ४६ ॥
एतेषां कल्यमुत्थाय कीर्त्तनात् सुखमेधते ।
यशश्चाप्नोति सुमहदायुष्मांश्च भवेन्नरः ॥ ४७ ॥

एतान्युक्तानि भो विप्राः सप्तसप्त च तत्त्वतः ।
मन्वन्तराणि संक्षेपाच्छृणुतानागतान्यपि ॥ ४८ ॥
सावर्णा मनवो विप्राः पञ्च तांश्च निबोधत ।
एको वैवस्वतस्तेषां चत्वारस्तु प्रजापतेः ॥ ४९ ॥
परमेष्ठिसुता विप्रा मेरुसावर्ण्यतां गताः ।
दक्षस्यैते हि दौहित्राः प्रियायास्तनया नृपाः ॥ ५० ॥
महता तपसा युक्त्वा मेरुपृष्ठे महौजसः ।
रुचेः प्रजापतेःपुत्रो रौच्यो नाम मनुःस्मृतः ॥ ५१ ॥
भूत्यां चोत्पादितो देव्यां भौत्यो नाम रुचेः सुतः ।
अनागताश्च सप्तैते कल्पेऽस्मिन्मनवः स्मृताः ॥ ५२ ॥
तैरियं पृथिवी सर्व्वा सप्तद्वीपा सपत्तना ।
पूर्णं युगसहस्रन्तु परिपाल्या द्विजोत्तमाः ॥ ५३ ॥
प्रजापति (ते) श्च तपसा संहारं तेषु नित्यशः ।
युगानि सप्ततिस्तानि साग्राणि कथितानि च ॥ ५४ ॥
कृतत्रेतादियुक्तानि मनोरन्तरमुच्यते ।
चतुर्दशैते मनवः कथिताः कीर्त्तिवर्द्धनाः ॥ ५५ ॥
वेदेषु सपुराणेषु सर्व्वेषु प्रभविष्णवः ।
प्रजानां पतयो विप्रा धन्यमेषां प्रकीर्त्तनम् ॥ ५६ ॥
मन्वन्तरेषु संहाराः संहारान्तेषु सम्भवाः ।
न शक्यतेऽन्तस्तेषां वै वक्तुं वर्षशतैरपि ॥ ५७ ॥
विसर्गस्य प्रजानां वै संहारस्य च भो द्विजाः ।
मन्वन्तरेषु संहाराः श्रूयन्ते द्विजसत्तमाः ॥ ५८ ॥

सशेषास्तत्र तिष्ठन्ति देवाः सप्तर्षिभिः सह ।
तपसा ब्रह्मचर्य्येण श्रुतेन च समन्विताः ॥ ५६ ॥
पूर्णे युगसहस्रे तु कल्पो निःशेष उच्यते ।
तत्र भूतानि सर्व्वाणि दग्धान्यादित्यरश्मिभिः ॥ ६० ॥
ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा सहादित्यगणैर्द्विजाः ।
प्रविशन्ति सुरश्रेष्ठं हरिंनारायणं प्रभुम् ॥ ६१ ॥
स्रष्टारं सर्व्वभूतानां कल्पान्तेषु पुनःपुनः ।
अव्यक्तं शाश्वतो देवस्तस्य सर्व्वमिदं जगत् ॥
अत्र वः कीर्त्तयिष्यामि मनोर्वैवस्वतस्य वै ।
विसर्गं मुनिशार्दूलाः साम्प्रतन्तु महाद्युतेः ॥ ६३ ॥
अत्र वंश प्रसङ्गेन कथ्यमानं पुरातनम् ।
यत्रोत्पन्नो महात्मा स हरिर्वृष्णिकुले प्रभुः ॥ ६४ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे मन्वन्तरकीर्त्तनं नाम
पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठोऽध्यायः ।

आदित्योत्पत्ति कथनम्

लोमहर्षण उवाच ।

विवस्वान् कश्यपाज्जज्ञे दाक्षायण्यां द्विजोत्तमाः ।
तस्य भार्य्याभवत्संज्ञा त्वाष्ट्री देवी विवस्वतः ॥ १ ॥
सुरेणुरिति विख्याता त्रिषु लोकेषु भाविनी ।
सावै भार्य्या भगवतो मार्त्तण्डस्य महात्मनः ॥ २ ॥
भर्त्तृरूपेण नातुष्यद्रूपयौवनशालिनी ।
संज्ञा नाम सुतपसा सुदीप्तेन समन्विता ॥ ३ ॥
आदित्यस्य हि तद्रूपं मण्डलस्य सुतेजसा ।
गात्रेषु परिदग्धं वै नातिकान्तमिवाभवत् ॥ ४ ॥
न खल्वयं मृतोऽण्डस्थ इति स्नेहादभाषत ।
अजानन् कश्यपस्तस्मान्मार्त्तण्ड इति चोच्यते ॥ ५ ॥
तेजस्त्वभ्यधिकं तस्य नित्यमेव विवश्वतः ।
येनातितापयामास त्रीं ल्लोकान् कश्यपात्मजः ॥ ६ ॥
त्रीण्यपत्यानि भो विप्राः संज्ञायांतपतां वरः
आदित्यो जनयामास कन्यां द्वौ च प्रजापती ॥ ७ ॥
मनुर्वैवस्वतः पूर्वं श्राद्धदेवः प्रजापतिः ।
यमश्च यमुना चैव यमजौ सम्बभूवतुः ॥ ८ ॥

श्यामवर्णन्तु तद्रूपं संज्ञा दृष्ट्वा विवस्वतः।
असहन्ती तु स्वां छायां सवर्णां निर्म्ममे ततः॥ ९॥
मायामयी तु सा संज्ञा तस्यां छायासमुत्थिताम्।
प्राञ्जलिः प्रणता भूत्वा छाया संज्ञां द्विजोत्तमाः॥ १०॥
उवाच किं मया कार्य्यं कथयस्व शुचिस्मिते।
स्थितास्मि तव निर्देशे शाधि मां वरवर्णिनि॥ ११॥

संज्ञोवाच।

अहं यास्यामि भद्रं ते स्वमेव भवनं पितुः।
त्वयैव भवने मह्यं वस्तव्यं निर्विशङ्कया॥ १२॥
इमौ च बालकौ मह्यं कन्या चेयं सुमध्यमा।
सम्भाव्यास्ते न चाख्येयमिदं भगवते क्वचित्॥ १३॥

सवर्णोवाच।

आ कचग्रहणाद्देवि आ शापान्नैव कर्हिचित्।
आख्यास्यामि नमस्तुभ्यं गच्छ देवि यथासुखम्॥ १४॥

लोमहर्षण उवाच।

समादिश्य सवर्णान्तान्तथेत्युक्ता तया च सा।
त्वष्टुः समीपमगमद्व्रीडितेव तपस्विनी॥ १५॥
पितुः समीपगा सा तु पित्रा निर्भर्त्सिता शुभा।
भर्त्तुः समीपं गच्छेति नियुक्ता च पुनःपुनः॥ १६॥
आगच्छद्वडवा भूत्वाच्छाद्यरूपमनिन्दिता।
कुरूनथोत्तरान् गत्वा तृणान्यथ चचार ह॥ १७॥

द्वितीयायान्तु संज्ञायां संज्ञेयमिति चिन्तयन्।
आदित्यो जनयामास पुत्रमात्मसमं तदा ॥ १८ ॥
पूर्व्वजस्य मनोर्विप्राः सदृशोऽयमिति प्रभुः।
मनुरेवाभवन्नाम्ना सावर्ण इति चोच्यते ॥ १९ ॥
द्वितीयो यः सुतस्तस्याः स विज्ञेयः शनैश्चरः।
संज्ञा तु पृथिवी विप्राः स्वस्य पुत्रस्य वै तदा ॥ २० ॥
चकाराभ्यधिकं स्नेहं न तथा पूर्व्वजेषु वै।
मनुस्तस्या अक्षम यमस्तस्या न चक्षमे ॥ २१ ॥
स वै रोषाच्च बाल्याच्च भाविनोऽर्थस्य वानघ।
पदा सन्तर्ज्जयामास संज्ञां वैवस्वतो यमः ॥ २२ ॥
तं शशाप ततः क्रोधात् सावर्णजननी तदा।
चरणः पततामेष तवेति भृशदुःखिता ॥ २३ ॥
यमस्तु तत् पितुः सर्व्वं प्राञ्जलिः प्रत्यवेदयत्।
भृशं शापभयोद्विग्नः संज्ञावाक्यैर्विशङ्कितः ॥ २४ ॥
शापोऽयं विनिवर्त्तेत प्रोवाच पितरं द्विजाः।
मात्रा स्नेहेन सर्व्वेषु वर्त्तितव्यं सुतेषु वै ॥ २५ ॥
सेयमस्मानपास्येह विवस्वन् सम्बुभूषति।
तस्यां मयोद्यतः पादो न तु देहे निपातितः ॥ २६ ॥
बाल्याद्वा यदि वा लौल्यान्मोहात्तत्क्षन्तुमर्हसि।
शप्तोऽहमस्मि लोकेश जनन्या तपतांवर।
तव प्रसादाच्चरणो न पतेन्मम गोपते ॥ २७ ॥

विवस्वानुवाच

असंशयं पुत्र महद्भविष्यत्यत्र कारणम्।
येन त्वामाविशेत् क्रोधो धर्म्मज्ञं सत्यवादिनम् ॥ २८ ॥
न शक्यमेतन्मिथ्या तु कर्त्तुं मातृवचस्तव।
कृमयो मांसमादाय यास्यन्त्यवनिमेव च ॥ २९ ॥
कृतमेवं वचस्तथ्यं मातुस्तव भविष्यति।
शापस्य परिहारेण त्वं च त्रातो भविष्यसि ॥ ३० ॥
आदित्यश्चाब्रवीत् संज्ञां किमर्थं तनयेषु वै।
तुल्येष्वभ्यधिकः स्नेह एकस्मिन् क्रियते त्वया ॥ ३१ ॥
सा तत् परिहरन्ती तु नाचचक्षे विवस्वते।
स चात्मानं समाधाय योगात्तथ्यमपश्यत ॥ ३२ ॥
तां शप्तुकामो भगवान्नाशपन्मुनिसत्तमाः।
मूर्द्धजेषु निजग्राह स तु तां मुनिसत्तमाः ॥ ३३ ॥
ततः सर्व्वं यथावृत्तमाचचक्षे विवस्वते।
विवस्वानथ तच्छ्रुत्वा क्रुद्धस्त्वष्टारमभ्यगात् ॥ ३४ ॥
दृष्ट्वा तु तं यथान्यायमर्च्चयित्वा विभावसुम्।
निर्द्दग्धुकामं रोषेण सान्त्वयामास वै तदा ॥ ३५ ॥

त्वष्टोवाच।

तवातितेजसाविष्टमिदं रूपं न शोभते।
असहन्ती च संज्ञा सा वने चरति शाड्वले ॥ ३६ ॥
द्रष्टा हि तां भवानद्य स्वां भार्य्यां शुभचारिणीम्।
श्लाघ्यां योगबलोपेतां योगमास्थाय गोपते ॥ ३७ ॥

अनुकूलं तु ते देव यदि स्यान्मम सम्मतम् ।
रूपं निर्वर्त्तयाम्यद्य तव कान्तमरिन्दम ॥ ३८ ॥
ततोऽभ्युपागमस्त्वष्टा मार्त्तण्डस्य विवस्वतः ।
भ्रमिमारोप्य तत्तेजः सान्त्वयामास भो द्विजाः ॥ ३९ ॥
ततो निर्भासितं रूपं तेजसा संहतेन वै ।
कान्तात् कान्ततरं द्रष्टुमधिकं शुशुभे तदा ॥ ४० ॥
ददर्श योगमास्थाय स्वां भार्य्यां वड़वां ततः ।
अधृष्यां सर्व्वभूतानां तेजसा नियमेन च ॥ ४१ ॥
वड़वावपुषा विप्राश्चरन्तीमकुतोभयाम् ।
सोऽश्वरूपेण भगवांस्तां मुखे समभावयत् ॥ ४२ ॥
मैथुनाय विचेष्टन्तीं परपुंसोऽवशङ्कया ।
सा तन्निरवमच्छुक्रं नासिकाभ्यां विवस्वतः ॥ ४३ ॥
देवौ तस्यामजायेतामश्विनौ भिषजां वरौ ।
नासत्यश्चैव दस्रश्च स्मृतौ द्वावश्विनाविति ॥ ४४ ॥
मार्त्तण्डस्यात्मजावेतावष्टमस्य प्रजापतेः ।
तां तु रूपेण कान्तेन दर्शयामास भास्करः ॥ ४५ ॥
सा तु दृष्ट्वैव भर्त्तारं तुतोष मुनिसत्तमाः ।
यमस्तु कर्म्मणा तेन भृशं पीड़ितमानसः ॥ ४६ ॥
धर्म्मेण रञ्जयामास धर्म्मराज इमाः प्रजाः ।
स लेभे कर्म्मणा तेन शुभेन परमद्युतिः ॥ ४७ ॥
पितृणामाधिपत्यं च लोकपालत्वमेव च ।
मनुः प्रजापतिस्त्वासीत्सावर्णिः स तपोधनाः ॥ ४८ ॥

भाव्यः समागते तस्मिन्मनुः सावर्णिकेऽन्तरे।
मेरुपृष्ठे तपो नित्यमद्यापि स चरत्युत ॥ ४९ ॥
भ्राता शनैश्चरस्तस्य ग्रहत्वं स तु लब्धवान्।
त्वष्टा तु तेजसा तेन विष्णोश्चक्रमकल्पयत् ॥ ५० ॥
तदप्रतिहतं युद्धे दानवान्तचिकीर्षया।
यवीयसो तु साप्यासीद्यामी कन्या यशस्विनी ॥ ५१ ॥
अभवच्च सरिच्छ्रेष्ठा यमुना लोकपावनी।
मनुरित्युच्यते लोके सावर्ण इति चोच्यते ॥ ५२ ॥
द्वितीयो यः सुतस्तस्य मनोर्भ्राता शनैश्चरः।
ग्रहत्वं स च लेभे वै सर्व्वलोकाभिपूजितः ॥ ५३ ॥
य इदं जन्म देवानां शृणुयान्नरसत्तमः।
आपदं प्राप्य मुच्येत प्राप्नुयाच्च महद्यशः ॥ ५४ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे आदित्योत्पत्तिकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तमोऽध्यायः।

सूर्यवंश वर्णनम्।

लोमहर्षण उवाच।

मनोर्वैवस्वतस्यासन् पुत्रा वै नव तत्समाः।
इक्ष्वाकुश्चैव नाभागो धृष्टः शर्यातिरेव च ॥ १ ॥

नरिष्यन्तश्च षष्ठो वै प्रांशु रिष्टश्च सप्तमः ।
करूषश्च पृषध्रश्च नवैते मुनिसत्तमाः ॥ २ ॥
अकरोत् पुत्रकामस्तु मनुरिष्टिं प्रजापतिः ।
मित्रावरुणयोर्विप्राः पूर्व्वमेव महामतिः ॥ ३ ॥
अनुत्पन्नेषु बहुषु पुत्रेष्वेतेषु भो द्विजाः ।
तस्यां च वर्त्तमानायामिष्ट्यां च द्विजसत्तमाः ॥ ४ ॥
मित्रावरुणयोरंशे मनुराहुतिमावहत् ।
तत्र दिव्याम्बरधरा दिव्याभरणभूषिता ॥ ५ ॥
दिव्यसहनना चैव इला जज्ञ इति श्रुतिः ।
तामिलेत्येव होवाच मनुर्दण्डधरस्तदा ॥ ६ ॥
अनुगच्छस्व मां भद्रे तमिला प्रत्युवाच ह ।
धर्म्मयुक्तमिदं वाक्यं पुत्रकामं प्रजापतिम् ॥ ७ ॥

इलोवाच ।

मित्रावरुणयोरंशे जातास्मि वदतांवर ।
तयोः सकाशं यास्यामि न मां धर्म्महतां कुरु ॥ ८ ॥
सेवमुक्त्वा मनुं देवं मित्रावरुणयोरिला ।
गत्वान्तिकं वरारोहा प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ ९ ॥

इलोवाच ।

अंशेऽस्मि युवयोर्जाता देवौ किं करवाणि वाम् ।
मनुना चाहमुक्ता वा अनुगच्छस्व मामिति ॥ १० ॥
तौ तथावादिनीं साध्वीमिलां धर्म्मपरायणाम् ।
मित्रश्च वरुणश्चोभावूचतुस्तां द्विजोत्तमाः ॥ ११ ॥

मित्रावरुणावूचतुः ।

अनेन तव धर्म्मेण प्रश्रयेण दमेन च ।
सत्येन चैव सुश्रोणि प्रीतौ स्वो वरवर्णिनि ॥ १२ ॥
आवयोस्त्वं महाभागे ख्यातिं कन्येति यास्यसि ।
मनोर्व्वंशकरः पुत्रस्त्वमेव च भविष्यसि ॥ १३ ॥
सुद्युम्न इति विख्यातस्त्रिषु लोकेषु शोभने ।
जगत्प्रियो धर्म्मशीलो मनोर्व्वंशविवर्द्धनः ॥ १४ ॥
निवृत्ता सा तु तच्छ्रुत्वा गच्छन्ती पितुरन्तिकात् ॥ १५ ॥
बुधेनान्तरमासाद्य मैथुनायोपमन्त्रिता ।
सोमपुत्राद्बुधाद्विप्रास्तस्यां जज्ञे पुरूरवाः ॥ १६ ॥
जनयित्वा ततः सा तमिला सुद्युम्नतां गता ।
सुद्युम्नस्य तु दायादास्त्रयः परमधार्म्मिकाः ॥ १७ ॥
उत्कलश्च गयश्चैव विनताश्वश्च भो द्विजाः ।
उत्कलस्योत्कला विप्रा विनताश्वस्य पश्चिमाः ॥ १८ ॥
दिक् पूर्व्वा मुनिशार्दूला गयस्य तु गया स्मृता ।
प्रविष्टेषु तु मनौ विप्रा दिवाकरमरिन्दमम् ॥ १९ ॥
दशधा तत्पुनः क्षत्रमकरोत् पृथिवीमिमाम् ।
इक्ष्वाकुर्ज्येष्ठदायादो मध्यदेशमवाप्तवान् ॥ २० ॥
कन्याभावात्तु सुद्युम्नो नैतद्राज्यमवाप्तवान् ।
वसिष्ठवचनात्त्वासीत् प्रतिष्ठाने महात्मनः ॥ २१ ॥
प्रतिष्ठा धर्म्मराजस्य सुद्युम्नस्य द्विजोत्तमाः ।
तत्पुरूरवसे प्रादाद्राज्यं प्राप्य महायशाः ॥ २२ ॥

मानवेयो मुनिश्रेष्ठाः स्त्रीपुंसोल क्षणैर्युतः ।
धृतवांस्तामिलेत्येवं सुद्युम्नेति च विश्रुतः ॥ २३ ॥
नरिष्यन्ताः शकाः पुत्रा नाभागस्य तु भो द्विजाः ।
अम्बरीषोऽभवत् पुत्रः पार्थिवर्षभसत्तमः ॥ २४ ॥
धृष्टस्य धार्ष्टिकं क्षत्रं रणदृप्तं बभूव ह ।
करूषस्य च कारूषाः क्षत्रिया युद्धदुर्म्मदाः ॥ २५ ॥
नाभागधृष्टपुत्राश्च क्षत्रिया वैश्यतां गताः ।
प्रांशोरेकोऽभवत्पुत्रः प्रजापतिरिति स्मृतः ॥ २६ ॥
नरिष्यन्तस्य दायादो राजा दन्तधरो यमः ।
शर्यातेर्मिथुनं त्वासीदानर्त्तो नाम विश्रुतः ॥ २७ ॥
पुत्रः कन्या सुकन्या च या पत्नी च्यवनस्य ह ।
आनर्त्तस्य तु दायादो रैवो नाम महाद्युतिः ॥ २८ ॥
आनर्त्तविषयश्चैव पुरी चास्य कुशस्थली ।
रैवस्य रैवतः पुत्रः ककुद्मी नाम धार्म्मिकः ॥ २९ ॥
ज्येष्ठः पुत्रः स तस्यासीद्राज्यं प्राप्य कुशस्थलीम् ।
स कन्यासहितः श्रुत्वा गान्धर्वं ब्रह्मणोऽन्तिके ॥ ३० ॥
मुहूर्त्तभूतं देवस्य तस्थौ बहुयुगं द्विजाः ।
आजगाम स चैवाथ स्वां पुरीं यादवैर्वृताम् ॥ ३१ ॥
कृतां द्वारवतीं नाम बहुद्वारां मनोरमाम् ।
भोजवृष्ण्यन्धकैर्गुप्तां वसुदेवपुरोगमैः ॥ ३२ ॥
तत्रैव रैवतो ज्ञात्वा यथातत्त्वं द्विजोत्तमाः ।
कन्यां तां बलदेवाय सुभद्रां नाम रैवतीम् ॥ ३३ ॥

दत्वा जगाम शिखरं मेरोस्तपसि संस्थितः ।
रेमे रामोऽपि धर्म्मात्मा रैवत्या सहितः सुखी ॥ ३४ ॥

मुनय ऊचुः ।

कथं बहुयुगे काले समतीते महामते ।
न जरा रैवतीं प्राप्ता रैवतं च ककुद्मिनम् ॥ ३५ ॥
मेरुं गतस्य वा तस्य शर्यातेः सन्ततिः कथम् ।
स्थिता पृथिव्यामद्यापि श्रोतुमिच्छाम तत्वतः ॥ ३६ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

न जरा क्षुत्पिपासा वा न मृत्युर्मुनिसत्तमाः ।
ऋतुचक्रं प्रभवति ब्रह्मलोके सदानघाः ।
ककुद्मिनः स्वर्लोकं तु रैवतस्य गतस्य ह ॥ ३७ ॥
हृता पुण्यजनैर्विप्रा राक्षसैः सा कुशस्थली ।
तस्य भ्रातृशतं त्वासीद्धार्म्मिकस्य महात्मनः ॥ ३८ ॥
तद्वध्यमानं रक्षोभिर्दिशः प्राक्रामदच्युताः ।
विद्रुतस्य च विप्रेन्द्रास्तस्य भ्रातृशतस्य वै ॥ ३९ ॥
अन्ववायस्तु सुमहांस्तत्र तत्र द्विजोत्तमाः ।
तेषां ह्येते मुनिश्रेष्ठाः शर्याता इति विश्रुताः ॥ ४० ॥
क्षत्रिया गुणसम्पन्ना दिक्षु सर्व्वासु विश्रुताः ।
सर्व्वशः सर्व्वगहनं प्रविष्टास्ते महौजसः ॥ ४१ ॥
नाभागरिष्टपुत्रौ द्वौ वैश्यौ ब्राह्मणतां गतौ ।
करूषस्य तु कारूषाः क्षत्रिया युद्धदुर्म्मदाः ॥ ४२ ॥

पृषध्रो हिंसयित्वा तु गुरोर्गां द्विजसत्तमाः ।
शापाच्छूद्रत्वमापन्नो नवैते परिकीर्त्तिताः ॥ ४३ ॥
वैवस्वतस्य तनया मुनेर्वै मुनिसत्तमाः ।
क्षुवतस्तु मनोर्विप्रा इक्ष्वाकुरभवत् सुतः ॥ ४४ ॥
तस्य पुत्रशतं त्वासीदिक्ष्वाकोर्भूरिदक्षिणम् ।
तेषां विकुक्षिर्ज्येष्ठस्तु विकुक्षित्वादयोधताम् ॥ ४५ ॥
प्राप्तः परमधर्मज्ञः सोऽयोध्याधिपतिः प्रभुः ।
शकुनिप्रमुखास्तस्य पुत्राः पञ्चशतं स्मृताः ॥ ४६ ॥
उत्तरापथदेशस्य रक्षितारो महाबलाः ।
चत्वारिंशद्दशाष्टौ च दक्षिणस्यां तथा दिशि ॥ ४७ ॥
वशातिप्रमुखाश्चान्ये रक्षितारो द्विजोत्तमाः ।
इक्ष्वाकुस्तु विकुक्षिं वा अष्टकायामथादिशत् ॥ ४८ ॥
मांसमानय श्राद्धार्थं मृगान् हत्वा महाबलः ।
श्राद्धकर्म्मणि चोद्दिष्टे अकृते श्राद्धकर्म्मणि ॥ ४९ ॥
भक्षयित्वा शशं विप्रा शशादो मृगयां गतः ।
इक्ष्वाकुणा परित्यक्तो वसिष्ठवचनात् प्रभुः ॥ ५० ॥
इक्ष्वाकौ संस्थिते विप्राः शशादस्तु नृपोऽभवत् ।
शशादस्य तु दायादः ककुत्स्थो नाम वीर्य्यवान् ॥ ५१ ॥
अनेनास्तु ककुत्स्थस्य पृथुश्चानेनसः स्मृतः ।
विष्टराश्वः पृथोः पुत्रस्तस्मादार्द्रस्त्वजायत ॥ ५२ ॥
आर्द्रस्य युवनाश्वस्तु श्रावस्तस्तत्सुतो द्विजाः ।
जज्ञे श्रावस्तको राजा श्रावस्ती येन निर्म्मिता ॥ ५३ ॥

श्रावस्तस्य तु दायादो बृहदश्वो महीपतिः ।
कुवलाश्वः सुतस्तस्य राजा परमधार्म्मिकः ॥ ५४ ॥
यः स धुन्धुवधाद्राजा धुन्धुमारत्वमागतः ॥ ५५ ॥

मुनय ऊचुः ।

धुन्धोर्व्वधं महाप्राज्ञ श्रोतुमिच्छाम तत्वतः ।
यद्वधात्कुवलाश्वोऽसौ धुन्धुमारत्वमागतः ॥ ५६ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

कुवलाश्वस्य पुत्राणां शतमुत्तमधन्विनाम् ।
सर्व्वे विद्यासु निष्णाता बलवन्तो दुरासदाः ॥ ५७ ॥
बभूवुर्धार्म्मिकाः सर्व्वे यज्वानो भूरिदक्षिणाः ।
कुवलाश्वं पिता राज्ये बृहदश्वो न्ययोजयत् ॥ ५८ ॥
पुत्रसंक्रामितश्रीस्तु वनं राजा विवेश ह ।
तमुत्तङ्कोऽथ विप्रर्षिः प्रयान्तं प्रत्यधारयत् ॥ ५९ ॥

उत्तङ्क उवाच ।

भवता रक्षणं कार्य्यं तच्च कर्त्तुं त्वमर्हसि ।
निरुद्विग्नस्तपश्चर्तुं न हि शक्नोमि पार्थिव ॥ ६० ॥
ममाश्रमसमीपे वै समेषु मरुधन्वसु ।
समुद्रो बालुकापूर्ण उद्दालक इति स्मृतः ॥ ६१ ॥
देवतानामवध्यश्च महाकायो महाबलः ।
अन्तर्भूमिगतस्तत्र बालुकान्तर्हितो महान् ॥ ६२ ॥
राक्षसस्य मधोः पुत्रो धुन्धुर्नाम महासुरः ।
शेते लोकविनाशाय तप आस्थाय दारुणम् ॥ ६३ ॥

संवत्सरस्य पर्य्यन्ते स निश्वासं विमुञ्चति ।
यदा तदा मही तत्र चलति स्म नराधिप ॥ ६४ ॥
तस्य निःश्वासवातेन रज उद्धूयते महत् ।
आदित्यपथमावृत्य सप्ताहं भूमिकम्पनम् ॥ ६५ ॥
सविस्फुलिङ्गं साङ्गारं सधूममतिदारुणम् ।
तेन तात न शक्नोमि तस्मिन् स्थातुं स्व आश्रमे ॥ ६६ ॥
तं मारय महाकायं लोकानां हितकाम्यया ।
लोकाः स्वस्था भवन्त्यद्य तस्मिन् विनिहते त्वया ॥ ६७ ॥
त्वं हि तस्य वधायैकः समर्थः पृथिवीपते ।
विष्णुना च वरो दत्तो मह्यं पूर्व्वयुगे नृप ॥ ६८ ॥
यस्तं महासुरं रौद्रं हनिष्यति महाबलम् ।
तस्य त्वं वरदानेन तेजश्चाप्यायपयिष्यसि ॥ ६९ ॥
न हि धुन्धुर्महातेजास्तेजसाल्पेन शक्यते ।
निर्द्दग्धुं पृथिवीपाल चिरं युगशतैरपि ॥ ७० ॥
वीर्य्यञ्च सुमहत्तस्य देवैरपि दुरासदम् ।
स एवमुक्तो राजर्षिरुत्तङ्केन महात्मना ।
कुवलाश्वं सुतं प्रादात्तस्मै धुन्धुनिबर्हणे ॥ ७१ ॥

बृहदश्व उवाच ।

भगवन्न्यस्तशस्त्रोऽहमयं तु तनयो मम ।
भविष्यति द्विजश्रेष्ठ धुन्धुमारो न संशयः ॥ ७२ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

स तं व्यादिश्य तनयं राजर्षिर्धुन्धुमारणे ।
जगाम पर्व्वतायैव नृपतिः संशितव्रतः ॥ ७३ ॥

कुवलाश्वस्तु पुत्राणां शतेन सह भो द्विजाः ।
प्रायादुत्तङ्कसहितो धुन्धोस्तस्य निबर्हणे ॥ ७४ ॥
समाविशत्तदा विष्णुस्तेजसा भगवान् प्रभुः ।
उत्तङ्कस्य नियोगाद्वै लोकानां हितकाम्यया ॥ ७५ ॥
तस्मिन् प्रयाते दुर्द्धर्षे दिवि शब्दो महानभूत् ।
एष श्रीमानवध्योऽद्य धुन्धुमारो भविष्यति ॥ ७६ ॥
दिव्यैर्गन्धैश्च माल्यैश्च तं देवाः समवाकिरन् ।
देवदुन्दुभयश्चैव प्रणेदुर्द्विजसत्तमाः ॥ ७७ ॥
स गत्वा जयतां श्रेष्ठस्तनयैः सह वीर्य्यवान् ।
समुद्रं खानयामास वालुकान्तरमव्ययम् ॥ ७८ ॥
तस्य पुत्रैः खनद्भिश्च वालुकान्तर्हितस्तदा ।
धुन्धुरासादितो विप्रा दिशमावृत्य पश्चिमाम् ॥ ७९ ॥
मुखजेनाग्निना क्रोधाल्लोकानुद्वर्तयन्निव ।
वारि सुस्राव वेगेन महोदधिरिवोदये ॥ ८० ॥
सोमस्य मुनिशार्दूला वरोर्म्मिकलिलो महान् ।
तस्य पुत्रशतं दग्धं त्रिभिरूनन्तु रक्षसा ॥ ८१ ॥
ततः स राजा द्युतिमान् राक्षसं तं महाबलम् ।
आससाद महातेजा धुन्धुं धुन्धुविनाशनः ॥ ८२ ॥
तस्य वारिमयं वेगमापीय स नराधिपः ।
योगी योगेन वह्निञ्च शमयामास वारिणा ॥ ८३ ॥
निहत्य तं महाकायं बलेनोदकराक्षसम् ।
उत्तङ्कं दर्शयामास कृतकर्म्मा नराधिपः ॥ ८४ ॥

उत्तङ्कस्य वरं प्रादात्तस्मै राज्ञे महात्मने ।
ददौ तस्याक्षयं वित्तं शत्रुभिश्चापराजितम् ॥ ८५ ॥
धर्म्मे रतिञ्च सततं स्वर्गे वासं तथाक्षयम् ।
पुत्राणां चाक्षयाँल्लोकान् स्वर्गे ये रक्षसा हताः ॥ ८६ ॥
तस्य पुत्रास्त्रयः शिष्टा दृढाश्वो ज्येष्ठ उच्यते ।
चन्द्राश्वकपिलाश्वौ तु कनीयांसौ कुमारकौ ॥ ८७ ॥
धौन्धुमारेर्दृढाश्वस्य हर्य्यश्वश्चात्मजः स्मृतः ।
हर्य्यश्वस्य निकुम्भोऽभून् क्षत्रधर्म्मरतः सदा ॥ ८८ ॥
संहताश्वो निकुम्भस्य सुतो रणविशारदः ।
अकृशाश्वकृशाश्वौ तु संहताश्वसुतौ द्विजाः ॥ ८९ ॥
तस्य हैमवती कन्या स तां मत्वा दृषद्वती ।
विख्याता त्रिषु लोकेषु पुत्रश्चास्याः प्रसेनजित् ॥ ९० ॥
लेभे प्रसेनजिद्भार्य्यां गौरीं नाम पतिव्रताम् ।
अभिशप्ता तु सा भर्त्रा नदी वै बाहुदाभवत् ॥ ९१ ॥
तस्य पुत्रो महानासीद्युवनाश्वो नराधिपः ।
मान्धाता युवनाश्वस्य त्रिलोकविजयी सुतः ॥ ९२ ॥
तस्य चैत्ररथी भार्य्या शशबिन्दोः सुताभवत् ।
साध्वी बिन्दुमती नाम रूपेणासदृशी भुवि ॥ ९३ ॥
पतिव्रता च ज्येष्ठा च भ्रातॄणामयुतस्य वै ।
तस्यामुत्पादयामास मान्धाता द्वौ सुतौ द्विजाः ॥ ९४ ॥
पुरुकुत्सञ्च धर्म्मज्ञं मुचुकुन्दञ्च पार्थिवम् ।
पुरुकुत्ससुतस्त्वासीत्त्रसदस्युर्महीपतिः ॥ ९५ ॥

नर्म्मदायामथोत्पन्नः सम्भूतस्तस्य चात्मजः ।
सम्भूतस्य तु दायादस्त्रिधन्वा रिपुमर्द्दनः ॥ ६६ ॥
राज्ञस्त्रिधन्वनस्त्वासीद्विद्वांस्त्रय्यारुणः प्रभुः ।
तस्य सत्यव्रतो नाम कुमारोऽभून्महाबलः ॥ ६७ ॥
परिग्रहणमन्त्राणां विघ्नं चक्रे सुदुर्म्मतिः ।
येन भार्य्या कृतोद्वाहा हृता चैव परस्य ह ॥ ६८ ॥
बाल्यात् कामाच्च मोहाच्च साहसाच्चापलेन च ।
जहार कन्यां कामार्त्तः कस्यचित् पुरवासिनः ॥ ६६ ॥
अधर्म्मशङ्कुना तेन तं स त्रय्यारुणोऽत्यजत् ।
अपध्वंसेति बहुशो वदन् क्रोधसमन्वितः ॥ १०० ॥
सोऽब्रवीत् पितरं त्यक्तं क्व गच्छामीति वै मुहुः ।
पिता च तमथोवाच श्वपाकैः सह वर्त्तय ॥ १०१ ॥
नाहं पुत्रेण पुत्रार्थी त्वयाद्य कुलपांसन ।
इत्युक्तः स निराक्रामन्नगराद्वचनात् पितुः ॥ १०२ ॥
न च तं वारयामास वसिष्ठो भगवानृषिः ।
स तु सत्यव्रतो विप्राः श्वपाकावसथान्तिके ॥ १०३ ॥
पित्रा त्यक्तोऽवसद्वीरः पिताप्यस्य वनं ययौ ।
ततस्तस्मिंस्तु विषये नावर्षत् पाकशासनः ॥ १०४ ॥
समा द्वादश भो विप्रास्तेनाधर्म्मेण वै तदा ।
दारांस्तु तस्य विषये विश्वामित्रो महातपाः ॥ १०५ ॥
संन्यस्य सागरास्ते तु चकार विपुलं तपः ।
तस्य पत्नी गले बद्ध्वा मध्यमं पुत्रमौरसम् ॥ १०६ ॥

शेषस्य भरणार्थाय व्यक्रीणाद्गोशतेन वै ।
तं च बद्धं गले दृष्ट्वा विक्रयार्थं नृपात्मजः ॥ १०७ ॥
महर्षिपुत्रं धर्म्मात्मा मोक्षयामास भो द्विजाः ।
सत्यव्रतो महाबाहुर्भरणं तस्य चाकरोत् ॥ १०८ ॥
विश्वामित्रस्य तुष्ट्यर्थमनुकम्पार्थमेव च ।
सोऽभवद्गालवो नाम गले बन्धान्महातपाः ॥ १०९ ॥
महर्षिः कौशिको धीमांस्तेन वीरेण मोक्षितः ।

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे सूर्य्यवंशनिरुपणं नाम
सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

— —

अष्टमोऽध्यायः ।

सूर्यवंश वर्णनम् ।

लोमहर्षण उवाच ।

सत्यव्रतस्तु भक्त्या च कृपया च प्रतिज्ञया ।
विश्वामित्रकलत्रं तु बभार विनये स्थितः ॥ १ ॥
हत्वा मृगान् वराहांश्च महिषांश्च वनेचरान् ।
विश्वामित्राश्रमाभ्यासे मांसं वृक्षे बबन्ध च ॥ २ ॥
उपांशुव्रतमास्थाय दीक्षां द्वादशवार्षिकीम् ।
पितुर्नियोगादवसत्तस्मिन् वनगते नृपे ॥ ३ ॥

अयोध्यां चैव राज्यं च तथैवान्तःपुरं मुनिः
याज्योपाध्यायसंयोगाद्वसिष्ठः पर्य्यरक्षत ॥ ४ ॥
सत्यव्रतस्तु बाल्याच्च भाविनोऽर्थस्य वै बलात् ।
वसिष्ठेऽभ्यधिकं मन्युं धारयामास नित्यशः ॥ ५ ॥
पित्रा हि तं तदा राष्ट्रात्त्यज्यमानं प्रियं सुतम् ।
निवारयामास मुनिर्बहुना कारणेन च ॥ ६ ॥
पाणिग्रहणमन्त्राणां निष्ठा स्यात् सप्तमे पदे ॥ ७ ॥
न च सत्यव्रतस्तस्माद्धृतवान् सप्तमे पदे ॥
जानन् धर्म्मं वसिष्ठस्तु न मां त्रातीति भो द्विजाः ।
सत्यव्रतस्तदा रोषं वसिष्ठे मनसाकरोत् ॥ ८ ॥
गुणबुद्ध्या तु भगवान् वसिष्ठः कृतवांस्तथा ।
न च सत्यव्रतस्तस्य तमुपांशुमबुध्यत ॥ ९ ॥
तस्मिन्नपरितोषश्च पितुरासीन्महात्मनः ।
तेन द्वादश वर्षाणि नावर्षत् पाकशासनः ॥ १० ॥
तेन त्विदानीं विहितां दीक्षां तां दुर्वहां भुवि ।
कुलस्य निष्कृतिर्विप्राः कृता सा वै भवेदिति ११ ॥
न तं वसिष्ठो भगवान् पित्रा त्यक्तं न्यवारयत् ।
अभिषेक्ष्याम्यहं पुत्रमस्येत्येवंमतिर्मुनिः ॥ १२ ॥
स तु द्वादश वर्षाणि तां दीक्षामवहद्बली ।
अविद्यमाने मांसे तु वसिष्ठस्य महात्मनः ॥ १३ ॥
सर्व्वकामदुघां दोग्ध्रीं स ददर्श नृपात्मजः ।
तां वै क्रोधाच्च मोहाच्च श्रमाच्चैव क्षुधान्वितः ॥ १४ ॥

यवनाः पारदाश्चैव काम्बोजाः पह्लवास्तथा।
एते ह्यपि गणाः पञ्च हैहयार्थे पराक्रमम् ॥ ३६ ॥
हृतराज्यस्तदा राजा स वै बाहुर्वनं ययौ।
पत्न्या चानुगतो दुःखी तत्र प्राणानवासृजत् ॥ ३७ ॥
पत्नी तु यादवी तस्य सगर्भा पृष्ठतोऽन्वगात्।
सपत्न्या च गरस्तस्यै दत्तः पूर्वं किलानघाः ॥ ३८ ॥
सा तु भर्तुश्चितां कृत्वा वने तामभ्यरोहत।
ऊर्वस्तां भार्गवो विप्रः कारुण्यात् समवारयत् ॥ ३९ ॥
तस्याश्रमे च गर्भः स गरेणैव सहाच्युतः।
व्यजायत महाबाहुः सगरो नाम पार्थिवः ॥ ४० ॥
ऊर्वस्तु जातकर्मादींस्तस्य कृत्वा महात्मनः।
अध्याप्य वेदशास्त्राणि ततोऽस्त्रं प्रत्यपादयत् ॥ ४१ ॥
आग्नेयं तु महाभागो अमरैरपि दुःसहम्।
स तेनास्त्रबलेनाजौ बलेन च समन्वितः ॥ ४२ ॥
हैहयान् विजघानाशु क्रुद्धो रुद्रः पशूनिव।
आजहार च लोकेषु कीर्त्तिं कीर्त्तिमतां वरः ॥ ४३
ततः शकांश्च यवनान् काम्बोजान् पारदांस्तथा।
पह्लवांश्चैव निःशेषान् कर्त्तुं व्यवसितो नृपः ॥ ४४ ॥
ते बध्यमाना वीरेण सगरेण महात्मना।
वसिष्ठं शरणं गत्वा प्रणिपेतुर्मनीषिणम् ॥ ४५ ॥
वसिष्ठस्त्वथ तान् दृष्ट्वा समयेन महाद्युतिः।
सगरं वारयामास तेषां दत्त्वाभयं तदा ॥ ४६ ॥

सगरः स्वां प्रतिज्ञां तु गुरोर्वाक्यं निशम्य च ।
धर्म्मं जघान तेषां वै वेशानन्यांश्चकार ह ॥ ४७ ॥
अर्द्धं शकानां शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत् ।
यवनानां शिर सर्व्वं काम्बोजानां तथैव च ॥ ४८ ॥
पारदा मुक्तकेशाश्च पह्नवाः श्मश्रुधारिणः ।
निःस्वाध्यायवषट्काराः कृतास्तेन महात्मना ॥ ४९ ॥
शका यवनकाम्बोजाः पारदाश्च द्विजोत्तमाः ।
कोणिसर्पा माहिषका दर्व्वाश्चोलाः सकेरलाः ॥ ५० ॥
सर्व्वे ते क्षत्रिया विप्रा धर्म्मस्तेषां निराकृतः
वसिष्ठवचनाद्राज्ञा सगरेण महात्मना ॥ ५१ ॥
स धर्म्मविजयी राजा विजित्येमां वसुन्धराम् ।
अश्वं प्रचारयामास वाजिमेधाय दीक्षितः ॥ ५२ ॥
तस्य चारयतः सोऽश्वः समुद्रे पूर्व्वदक्षिणे ।
वेलासमीपेऽपहृतो भूमिं चैव प्रवेशितः ॥ ५३ ॥
स तं देशं तदा पुत्रैः खानयामास पार्थिवः ।
आसेदुस्तु तदा तत्र खन्यमाने महार्णवे ॥ ५४ ॥
तमादिपुरुषं देवं हरिं कृष्णं प्रजापतिम् ।
विष्णुं कपिलरूपेण स्वपन्तं पुरुषं तदा ॥ ५५ ॥
तस्य चक्षुःसमुत्थेन तेजसा प्रतिबुध्यतः ।
दग्धाः सर्व्वे मुनिश्रेष्ठाश्चत्वारस्त्ववशेषिताः ॥ ५६ ॥
बर्हिकेतुः सुकेतुश्च तथा धर्म्मरथो नृपः ।
शूरः पञ्चनदश्चैव तस्य वंशकरा नृपाः ॥ ५७ ॥

प्रादाच्च तस्मै भगवान् हरिर्नारायणो वरम् ।
अक्षयं वंशमिक्ष्वाकोः कीर्त्तिं चाप्यनिवर्त्तिनीम् ॥ ५८ ॥
पुत्रं समुद्रं च विभुः स्वर्गे वासं तथाक्षयम् ।
समुद्रश्चार्घ्यमादाय ववन्दे तं महीपतिम् ॥ ५९ ॥
सागरत्वं च लेभे स कर्म्मणा तेन तस्य ह ।
तवश्चाश्वमेधिकं सोऽश्वं समुद्रादुपलब्धवान् ॥ ६० ॥
आजहाराश्वमेधानां शतं स सुमहातपाः ।
पुत्राणां च सहस्राणि षष्टिस्तस्येति नः श्रुतम् ॥ ६१ ॥

मुनय ऊचुः ।

सगरस्यात्मजा वीराः कथं जाता महाबलाः ।
विक्रान्ताः षष्टिसाहस्राः विधिना केन सत्तम ॥ ६२ ॥

लोमहर्षण उवाच ।

द्वे भार्य्ये सगरस्यास्तां तपसा दग्धकिल्बिषे ।
ज्येष्ठा विदर्भदुहिता केशिनी नाम नामतः ॥ ६३ ॥
कनीयसी तु महती पत्नी परमधर्म्मिणी ।
अरिष्टनेमिदुहिता रूपेणाप्रतिमा भुवि ॥ ६४ ॥
ऊर्वस्ताभ्यां वरं प्रादात्तद्बुध्यध्वं द्विजोत्तमाः ।
षष्टिं पुत्रसहस्राणि गृह्णात्वेका नितम्बिनी ॥ ६५ ॥
एकं वंशधरं त्वेका यथेष्टं वरयत्विति ।
तत्रैका जगृहे पुत्रान् षष्टिसाहस्रसम्मितान् ॥ ६६ ॥
एकं वंशधरं त्वेका तथेत्याह ततो मुनिः ।
राजा पञ्चजनो नाम बभूव स महाद्युतिः ॥ ६७ ॥

इतरा सुषुवे तुम्बीं बीजपूर्णामिति श्रुतिः ।
तत्र षष्टिसहस्राणि गर्भास्ते तिलसम्मिताः ॥ ६८ ॥
घृतपूर्णेषु कुम्भेषु तान् गर्भान्निदधे ततः ॥ ६९ ॥
धात्रीश्चैकैकशः प्रादात्तावतीः पोषणे नृपः ।
ततो दशसु मासेषु समुत्तस्थुर्यथाक्रमम् ॥ ७० ॥
कुमारास्ते यथाकालं सगरप्रीतिवर्द्धनाः ।
षष्टिपुत्रसहस्राणि तस्यैवमभवन् द्विजाः ॥ ७१ ॥
गर्भादलाबुमध्याद्वै जातानि पृथिवीपतेः ।
तेषां नारायणं तेजः प्रविष्टानां महात्मनाम् ॥ ७२ ॥
एकः पञ्चजनो नाम पुत्रो राजा बभूव ह ।
शूरः पञ्चजनस्यासीदंशुमान्नाम वीर्यवान् ॥ ७३ ॥
दिलीपस्तस्य तनयः खट्वाङ्ग इति विश्रुतः ।
येन स्वर्गादिहागत्य मुहूर्त्तं प्राप्य जीवितम् ॥ ७४ ॥
त्रयोऽभिसन्धिता लोका बुद्ध्या सत्येन चानघाः ।
दिलीपस्य तु दायादो महाराजो भगीरथः ॥ ७५ ॥
यः स गङ्गां सरिच्छ्रेष्ठामवातारयत प्रभुः ।
समुद्रमानयच्चैनां दुहितृत्वेऽप्यकल्पयत् ॥ ७६ ॥
तस्माद्भागीरथी गङ्गा कथ्यते वंशचिन्तकैः ।
भगीरथसुतो राजा श्रुत इत्यभिविश्रुतः ७७ ॥
नाभागस्तु श्रुतस्यासीत् पुत्रः परमधार्म्मिकः ।
अम्बरीषस्तु नाभागिः सिन्धुद्वीपपितामवत् ॥ ७८ ॥

अयुताजित्तु दायादः सिन्धुद्वीपस्य वीर्य्यवान् ।
अयुताजित्सुतस्त्वासीदृतुपर्णो महायशाः ॥ ७९ ॥
दिव्याक्षहृदयज्ञो वै राजा नलसखो बली ।
ऋतुपर्णसुतस्त्वासीदार्त्तपर्णिर्महायशाः ॥ ८० ॥
सुदासस्तस्य तनयो राजा इन्द्रसखोऽभवत् ।
सुदासस्य सुतः प्रोक्तः सौदासो नाम पार्थिवः ॥ ८१ ॥
ख्यातः कल्माषपादो वै राजा मित्रसहोऽभवत् ।
कल्माषपादस्य सुतः सर्व्वकर्म्मेति विश्रुतः ॥ ८२ ॥
अनरण्यस्तु पुत्रोऽभूद्विश्रुतः सर्व्वकर्म्मणः ।
अनरण्यसुतो निघ्नो निघ्नोतो द्वौ बभूवतुः ॥ ८३ ॥
अनमित्रो रघुश्चैव पार्थिवर्षभसत्तमौ ।
अनमित्रसुतो राजा विद्वान् दुलिदुहोऽभवत् ॥ ८४ ॥
दिलीपस्तनयस्तस्य रामस्य प्रपितामहः ।
दीर्घबाहुर्दिलीपस्य रघुर्नाम्ना सुतोऽभवत् ॥ ८५ ॥
अयोध्यायां महाराजो यः पुरासीन्महाबलः ।
अजस्तु राघवो जज्ञे तथा दशरथोऽप्यजात् ॥ ८६ ॥
रामो दशरथाज्जज्ञे धर्म्मात्मा सुमहायशाः ।
रामस्य तनयो जज्ञे कुश इत्यभिसंज्ञितः ॥ ८७ ॥
अतिथिस्तु कुशाज्जज्ञे धर्म्मात्मा सुमहायशाः ।
अतिथेस्त्वभवत्पुत्रो निषधो नाम वीर्य्यवान् ॥ ८८ ॥
निषधस्य नलः पुत्रो नभः पुत्रो नलस्य तु ।
नभस्य पुण्डरीकस्तु क्षेमधन्वा ततः स्मृतः ॥ ८९ ॥

क्षेमधन्वसुतस्त्वासीद् देवानीकः प्रतापवान् ।
आसीदहीनगुर्नाम देवानीकात्मजः प्रभुः ॥ ९० ॥
अहीनगोस्तु दायादः सुधन्वा नाम पार्थिवः ।
सुधन्वनः सुतश्चापि ततो जज्ञे शलो नृपः ॥ ९१ ॥
उक्थो नाम स धर्म्मात्मा शलपुत्रो बभूव ह ।
वज्रनाभः सुतस्तस्य नलस्तस्य महात्मनः ॥ ९२ ॥
नलौ द्वावेव विख्यातौ पुराणे मुनिसत्तमाः ।
वीरसेनात्मजश्चैव यश्चेक्ष्वाकुकुलोद्वहः ॥ ९३ ॥
इक्ष्वाकुवंशप्रभवाः प्राधान्येन प्रकीर्त्तिताः ।
एते विवस्वतो वंशे राजानो भूरितेजसः ॥ ९४ ॥
पठन् सम्यगिमां सृष्टिमादित्यस्य विवस्वतः ।
श्राद्धदेवस्य देवस्य प्रजानां पुष्टिदस्य च ।
प्रजावानेति सायुज्यमादित्यस्य विवस्वतः ॥ ९५ ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे आदित्यवंशानुकीर्त्तनं
नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

——

नवमोऽध्यायः

तत्रादौ सोमोत्पत्ति वर्णनम्

लोमहर्षण उवाच ।

पिता सोमस्य भो विप्रा जज्ञेऽत्रिर्भगवानृषिः ।
ब्रह्मणो मानसात्पूर्व्वं प्रजासर्गं विधित्सतः ॥ १ ॥
अनुत्तरं नाम तपो येन तप्तं हि तत्पुरा ।
त्रीणि वर्षसहस्राणि दिव्यानीति हि नः श्रुतम् ॥ २ ॥
ऊर्द्ध्वमाचक्रमे तस्य रेतः सोमत्वमीयिवान् ।
नेत्राभ्यां वारि सुस्राव दशधा द्योतयन् दिशः ॥ ३ ॥
तं गर्भं विधिनादिष्टो दश देव्यो दधुस्ततः ।
समेत्य धारयामासुर्न च ताः समशक्नुवन् ॥ ४ ॥
यदा न धारणे शक्तास्तस्य गर्भस्य ता दिशः ।
ततस्ताभिः स त्यक्तस्तु निपपात वसुन्धराम् ॥ ५ ॥
पतितं सोममालोक्य ब्रह्मा लोकपितामहः ।
रथमारोपयामास लोकानां हितकाम्यया ॥ ६ ॥
तस्मिन्निपतिते देवाः पुत्रेऽत्रेः परमात्मनि ।
तुष्टुवुर्ब्रह्मणः पुत्रास्तथान्ये मुनिसत्तमाः ॥ ७ ॥
तस्य संस्तूयमानस्य तेजः सोमस्य भास्वतः ।
आप्यायनाय लोकानां भावयामास सर्व्वतः ॥ ८ ॥

स तेन रथमुख्येन सागरान्तां वसुन्धराम् ।
त्रिःसप्तकृत्वोऽतियशाश्चकाराभिप्रदक्षिणाम् ॥ ९ ॥
तस्य यच्चरितं तेजः पृथिवीमन्वपद्यत ।
ओषध्यस्ताः समुद्भूता याभिः सन्धार्यते जगत् ॥ १० ॥
स लब्धतेजा भगवान् संस्तवैश्च स्वकर्मभिः ।
तपस्तेपे महाभागः पद्मानां दर्शनाय सः ॥ ११ ॥
ततस्तस्मै ददौ राज्यं ब्रह्मा ब्रह्मविदांवरः ।
बीजौषधीनां विप्राणामपां च मुनिसत्तमाः ॥ १२ ॥
स तत्प्राप्य महाराज्यं सोमः सौम्यवतांवरः ।
समाजह्रे राजसूयं सहस्रशतदक्षिणम् ॥ १३ ॥
दक्षिणामददात् सोमस्त्रींल्लोकानिति नः श्रुतम् ।
तेभ्यो ब्रह्मर्षिमुख्येभ्यः सदस्येभ्यश्च भो द्विजाः ॥ १४ ॥
हिरण्यगर्भो ब्रह्मात्रिर्भृगुश्च ऋत्विजोऽभवत् ।
सदस्योऽभूद्धरिस्तत्र मुनिभिर्बहुभिर्वृतः ॥ १५ ॥
तं सिनीश्च कुहूश्चैव द्युतिः पुष्टिःप्रभा वसुः ।
कीर्त्तिर्धृतिश्च लक्ष्मीश्च नव देव्यः सिषेविरे ॥ १६ ॥
प्राप्यावभृथमव्यग्रं सर्व्वदेवर्षिपूजितः ।
विरराजाधिराजेन्द्रो दशधा भासयन् दिशः ॥ १७ ॥
तस्य तत्प्राप्य दुष्प्राप्यमैश्वर्य्यमृषिसत्कृतम् ।
विबभ्राम मतिस्तातविनयादनयाहृता ॥ १८ ॥
बृहस्पतेः स वै भार्य्यामैश्वर्य्यमदमोहितः ।
जहार तरसा सोमो विमत्याङ्गिरसः सुतम् ॥ १९ ॥

स याच्यमानो देवैश्च तथा देवर्षिभिर्मुहुः ।
नैव व्यसर्ज्जयत्तारां तस्मा आङ्गिरसे तदा ॥ २० ॥
उशना तस्य जग्राह पार्ष्णिमाङ्गिरसस्तथा ।
रुद्रश्च पार्ष्णिं जग्राह गृहीत्वाजगवं धनुः ॥ २१ ॥
तेन ब्रह्मशिरो नाम परमास्त्रं महात्मना ।
उद्दिश्य देवानुत्सृष्टं येनैषां नाशितं यशः ॥ २२ ॥
तत्र तद्युद्धमभवत् प्रख्यातं तारकामयम् ।
देवानां दानवानाञ्च लोकक्षयकरं महत् ॥ २३ ॥
तत्र शिष्टाश्च ये देवास्तुषिताश्चैव ये द्विजाः ।
ब्रह्माणं शरणं जग्मुरादिदेवं सनातनम् ॥ २४ ॥
तदा निवार्य्योशनसं तं वै रुद्रञ्च शङ्करम् ।
ददावाङ्गिरसे तारां स्वयमेव पितामहः ॥ २५ ॥
तामन्तःप्रसवां दृष्ट्वा क्रुद्धः प्राह बृहस्पतिः ।
मदीयायां न ते योनौ गर्भो धार्य्यः कथञ्चन ॥ २६ ॥
इषीकास्तम्बमासाद्य गर्भं सा चोत्ससर्ज्ज ह ।
जातमात्रः स भगवान् देवानामाक्षिपद्वपुः ॥ २७ ॥
ततः संशयमापन्नास्तारामूचुः सुरोत्तमाः ।
सत्यं ब्रूहि सुतः कस्य सोमस्याथ बृहस्पतेः ॥ २८ ॥
पृच्छ्यमाना यदा देवैर्नाह सा विबुधान् किल ।
तदा तां शप्तुमारब्धः कुमारो दस्युहन्तमः ॥ २९ ॥
तं निवार्य्य ततो ब्रह्मा तारां पप्रच्छ संशयम् ।
यदत्र तथ्यं तद्ब्रूहि तारे कस्य सुतस्त्वयम् ॥ ३० ॥

उवाच प्राञ्जलिः सा तं सोमस्येति पितामहम्।
तदा तं मूर्ध्नि चाघ्राय सोमो राजा सुतंप्रति ॥ ३१ ॥
बुध इत्यकरोन्नाम तस्य बालस्य धीमतः।
प्रतिकूलश्च गगने समभ्युत्तिष्ठते बुधः ॥ ३२ ॥
उत्पादयामास तदा पुत्रं वै राजपुत्रिकाम्।
तस्यापत्यं महातेजा बभूवैलः पुरूरवाः ॥ ३३ ॥
उर्वश्यां जज्ञिरे यस्य पुत्राः सप्त महात्मनः
एतत् सोमस्य वो जन्म कीर्त्तितं कीर्त्तिवर्द्धनम् ॥ ३४ ॥
वंशमस्य मुनिश्रेष्ठाः कीर्त्यमानं निबोधत।
धन्यमायुष्यमारोग्यं पुण्यं सङ्कल्पसाधनम् ॥ ३५ ॥
सोमस्य जन्म श्रुत्वैव पापेभ्यो विप्रमुच्यते ॥

इति श्रीब्राह्मे महापुराणे सोमोत्पत्तिकथनं नाम
नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशमोऽध्यायः

तत्रादौ सोमवंशवर्णनम्

लोमहर्षण उवाच।

बुधस्य तु मुनिश्रेष्ठा विद्वान् पुत्रः पुरूरवाः।
तेजस्वी दानशीलश्च यज्वा विपुलदक्षिणः ॥ १ ॥
ब्रह्मवादी पराक्रान्तः शत्रुभिर्युधि दुर्दमः।
आहर्त्ता चाग्निहोत्रस्य यज्ञानाञ्च महीपतिः ॥ २ ॥